समर्पण

गुरु नानकदेव जी की पांच सौवीं जयंती की स्मृति को

—सम्पादक

अपनी बात

गत वर्ष पाठकों की सेवा में मैंने 'गुरु गोविन्द सिंह : जीवन और दर्शन' पुस्तक प्रस्तुत की थी और उक्त पुस्तक का अप्रत्याशित स्वागत किया गया। फलतः इस क्षेत्र में आगे कुछ और कार्य करने के लिए मुझे प्रेरणा मिली और उसी का परिणाम है यह—'गुरु नानक : जीवन और दर्शन।'

इस ग्रन्थ में गुरु नानक के जीवन और धर्म, राजनीति, समाज एवं मानवता के संबंध में विविधपक्षीय दर्शन का दिग्दर्शन करानेवाले प्रामाणिक लेखों का आकलन-संकलन है।

हम लोग इन दिनों संतों और गुरुओं की अपेक्षा पेशेवर राजनेताओं की बातें सुनने के अभ्यस्त-से हो गए हैं। पर, यदि हम इस सन्दर्भ में एकान्त चिन्तन का लाभ उठाना चाहें, तो यह पाएंगे कि संतों और गुरुओं की वाणी में जो स्थायित्व है, वह पेशेवर राजनीतिज्ञों के कथनों में नहीं है। जिस प्रकार पानी में आतिशबाज़ी का सौन्दर्य नहीं देखा जा सकता, उसी प्रकार मन की गहराई के बाहर किसी सही दिशा-निर्देश को नहीं पाया जा सकता। अतः इस अर्थ में गुरु नानक ने जो सन्देश हमें दिए थे, हमें उन्हें समझना होगा और उन्हें अपने जीवन में उतारना होगा। इसीलिए मैं आशावान् हूं कि पाठकवर्ग का ध्यान इस पुस्तक की ओर अवश्य जाएगा। मैंने इस संकलन को प्रस्तुतमात्र किया है। योजना को यह आकार देने में हमारे उन सहृदय लेखकों का सहयोग रहा है, जिनकी सारगर्भित रचनाएं इसमें संकलित हैं, मैं उन सभी रचनाकारों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। इस अनुष्ठान को पूर्ण करने में शायद और बहुत समय लग जाता, यदि लेखनी के धनी श्री हिमांशु श्रीवास्तव से बार-बार कार्य में गति लाने की प्रेरणा नहीं मिली होती। मुझे उनका अपार स्नेह प्राप्त है। उनके स्नेह का प्रतिदान मात्र धन्यवाद के शब्द से देना नहीं चाहता; क्योंकि यह रस्मअदायगी उनके लिए हल्की पड़ेगी।

प्रकाशक महोदय ने पुस्तक को जिस सुरुचि सम्पन्नता के साथ प्रकाशित किया है उसे देखकर बड़ा ही सन्तोष मिला और किसी के सहयोग के प्रति सन्तोष की अनुभूति अपने-आप में एक सूक्ष्म कृतज्ञता है।

विषय सूची

श्री खुशवन्त सिंह

गुरु नानक : जीवन और दर्शन का संदर्भ

गुरु नानक के जीवन दर्शन और सिख धर्म की बुनियाद में उत्तर भारत की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की है। मुसलमान आक्रमणकारियों का चार सौ वर्षों तक लगातार सामना करने के बाद हिन्दू राज्य छिन्न-भिन्न हो गए थे। शुरू-शुरू में आनेवाले आक्रमणकारी जितना सामान भी संभव होता था, यहां से लूट-पाटकर अपने देश ले जाते थे। लेकिन बाद में आनेवाले आक्रमणकारी भारत को अपना घर बनाने के इरादे से आए, इसलिए उन्होंने भारतवासियों को या तो अपने अधीन किया अथवा उनसे संधि कर ली। उन दिनों बहुत-से लोग जबर्दस्ती मुसलमान बनाए गए, संस्कृत की जगह अरबी और फारसी ठूसी गई। लोदी वंश के शासकों ने, जिनकी १३६८ के तैमूर के भारी आक्रमण से बुरी तरह कुचल गई थी, खास तौर पर यह नीति अपनाई। गांवों में कोई कानून और व्यवस्था नहीं रह गई थी, लोगों में आपसी वैमनस्य और अविश्वास बढ़ता जा रहा था। सब के सब भय से आक्रान्त थे। नानक ने १५२६ में हुए मुगल-बाबर के आक्रमण का परिणाम और लोदी वंश का विनाश देखा और उन्हें इतनी पीड़ा हुई कि उस युग को उन्होंने कलियुग कहकर पुकारा।

उस समय पंजाब में मुसलमानों का भारी प्रभाव था, जिससे वहां उनके कट्टर एकेश्वरवाद का संस्कार धीरे-धीरे प्रबल हो रहा था। सामान्य जन में धर्म और उपासना के गूढ़ तत्त्व समझने की शक्ति नहीं रह गई थी। ऐसी दशा में कबीर द्वारा प्रवर्तित 'निर्गुण संत मत' एक बड़ा

सहारा दिखाई दिया। गुरु नानक आरम्भ से ही भक्त थे, अतः उनका ऐसे मत की ओर रुझान स्वाभाविक था, जिसकी उपासना का स्वरूप हिन्दुओं और मुसलमानों---दोनों को समान रूप से ग्राह्य हो। फलस्वरूप उन्होंने एक नये धार्मिक मत का सूत्रपात किया और समाज में फिर से चेतना फूंकी।

हिन्दू-मुस्लिम एकता का सन्देश

नानक का जन्म अप्रैल, १४६६ को लाहौर से चालीस मील दूर तलवंडी नामक गांव में हुआ। उनके पिता वेदी गोत्र के क्षत्रिय थे और उसी गांव में कारिन्दा थे। नानक विलक्षण बुद्धि के बालक थे। पांच वर्ष की आयु से ही वे जीवन के उद्देश्य के वारे में प्रशन करने लगे। उनकी शिक्षा पारंपरिक ढंग से ही हुई। एक हिन्दू पंडित से उन्होंने भाषा और गणित की शिक्षा ली तथा मुसलमान मुल्ला से अरबी और फारसी सीखी। लेकिन शुरू से ही शिक्षा में उनकी कोई रुचि नहीं थी। वे साधु और फकीरों से वहस किया करते या अकेले रहना पसन्द करते। बारह वर्ष की उम्र में उनका विवाह हो गया और जब वे १६ वर्ष के ही थे, तभी उनकी पत्नी उनके साथ आकर रहने लगीं। उनके दो पुत्र हुए। थोड़े ही समय के वाद वे अपने आध्यात्मिक लक्ष्य की तलाश में निकल पड़े। कुछ समय तक वे अपनी बड़ी वहन नानकी के यहां सुल्तानपुर रहे और वहां के नवाव के यहां मोदी का काम करने लगे। सुल्तानपुर में एक मुसलमान गवैया मरदाना उनके साथ हो लिया। दोनों लोग सामूहिक भजन-कीर्तन के कार्यक्रम आयोजित करने लगे। पदों की रचना नानक करते थे और उन्हें संगीत से संवारने का काम मरदाना का था। सुल्तानपुर में नानक को एक रहस्यानुभूति हुई और उन्होंने नौकरी छोड़कर, जनता को उपदेश देने का निर्णय किया। कहा जाता है यह घटना उस समय हुई, जब उनकी आयु केवल २६ वर्ष की थी। उनके जीवनीकारों ने इस घटना को वड़े नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया है। एक बार, सुवह-सुवह रोज की तरह वे वई नदी में स्नान करने गए। वहुत देर तक जब वे नदी से वाहर नहीं निकले, तो साथ गए सेवक ने समझा कि मोदी डूब गए। जीवनीकारों

की। इस बार वे पश्चिम में मक्का, मदीना और बसरा तथा बगदाद तक गए। यहां एक और बड़ी प्रसिद्ध घटना हुई। हज के एक दिन पहले वाली रात को नानक काबा की ओर पैर फैलाकर सो गए। एक क्रोधित मुल्ला ने जब यह देखा, तो नानक को लात मारते हुए बोला—"यह कौन काफिर है, जो खुदा के घर की ओर पैर पसारे पड़ा है ?" नानक ने बड़ी नम्रता से उससे कहा—"मैं बहुत थका हुआ हूं, मेरे पैर उस ओर घुमा दो जिधर खुदा का घर न हो।" ऐसे ही एक घटना मराठी संत नामदेव के जीवन में भी हुई थी, जब वे शिव-लिंग से अपने पैर टिकाकर सो गए थे।

इस यात्रा के पश्चात् जब नानक घर लौटे, तब वे इतने वृद्ध हो चुके थे कि ज्यादा लम्बी-चौड़ी यात्राएं करने की क्षमता उनमें नहीं रही। एक वर्ष के भीतर ही उनके माता-पिता तथा सारे जीवन के साथी मरदाना का देहान्त हो गया। उन्होंने करतापुर में ही रहकर अपने पास आनेवाले लोगों को उपदेश देने का निर्णय किया। हिन्दू और मुसलमान किसान बड़ी संख्या में उनकी ज्ञानपूर्ण मधुकर वाणी सुनने आने लगे। उनमें से अनेक उनके 'शिष्य' हो गए—इसीसे पंजाबी शब्द सिख का जन्म हुआ। २२ सितम्बर, १५३९ को ६९ वर्ष की अवस्था में नानक का स्वर्गवास हो गया। ऐसी किंवदन्ती है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही उनका शरीर लेने आए। एक धर्मावलम्बी उनकी हिन्दू के रूप में अंत्येष्टि करना चाहते थे, तो दूसरे उन्हें मुसलमान मानकर दफनाना चाहते थे। इससे पहले कबीर को उनकी मृत्यु के पश्चात् यही सम्मान प्राप्त हुआ था। नानक भी इस अपूर्व सम्मान के हकदार थे। वे ४६ वर्ष तक यात्राओं और उपदेशों द्वारा हिन्दुओं और मुसलमानों का प्यार तथा विश्वास जीतते रहे। बड़े स्नेह के साथ उनके बारे में कहा जाता था—"गुरु नानक शाह फकीर—हिन्दू का गुरु, मुसलमान का पीर।"

रूढ़ियों से विद्रोह और विनम्रता का संबल

गुरु नानक की रचनाओं से उनके व्यक्तित्व की जो तस्वीर उभरती है, उससे लगता है कि वे अपार काव्य प्रतिभावाले बड़े संवेदनशील व्यक्ति

थे। जीवन में वे पूरी तरह से अव्यावहारिक थे और इसीलिए अपने दुनियादार व्यावसायिक प्रवृत्ति के पिता के लिए वे निराशा का कारण बने। लेकिन वे बड़े साहसी व्यक्ति थे, क्योंकि रूढ़ियों से विद्रोह करना तथा पुरातनपंथी समाज में परम्परा विरोधी होना और अपने पड़ोसियों के ताने सुनना कोई आसान बात नहीं है। यह सोचकर उन्हें बहुत साहस मिलता था कि यदि बिना किसी क्रोध, आक्षेप या उपहास के बड़ी नम्रता से उन्होंने जनता के सामने अपने विचार प्रस्तुत किए, तो लोग उनकी बात सुनेंगे। उनकी वाणी में भी हास्य का पुट छोटा रहता था, जिसका लक्ष्य अपने को बनाने में भी वे नहीं चूकते थे। विनय और दीनता उनकी विशेषताएं थीं। अपनी रचनाओं में वे निरंतर अपने को अज्ञानी, अधम, और नीच अक्षम बताते ही रहे—

"नीचा अन्दर नीच जाति नीच हो अति नीच,
नानक तिनके संग साथ वडिया से ऊ क्या रीस।"

नानक के प्रवचन की सबसे बड़ी शक्ति थी कविता। वे कोई बहुत बड़े विद्वान् नहीं थे। हिन्दू विद्वान्, विशेष रूप से आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द ने उनपर वेदों और शास्त्रों के ज्ञान से रहित होने का आरोप लगाया था। वे तर्क और मीमांसा की शुष्क शैली के स्थान पर सरल अनन्य भक्ति में विश्वास करते थे और भक्ति को ही उन्होंने अपनी कविता में अपनाया। यही कविता आज पंजाबी भाषा का बहुमूल्य कोष है।

उनके काव्य-कौशल की सबसे अच्छी मिसाल है—'बारह माहा' जो उन्होंने अपने निधन से कुछ समय पहले ही लिखा। इनमें से एक को उदाहरण के रूप में देखिए। यह सावन के बारे में है, जब सारे पंजाब में बड़े जोर की वर्षा होती है—

"सावणि सरस मना घण वरसहि रुति आए,
मै मनि तनि सहु भावै पिर परदेसि सिधाए,
पिर घरि नहीं आवै मरीऐ हावै दामनि चमकि डराए,
सेज इकेली खरी दुहेली मरणु भइआ दुखु माए,

मुसलमान सूफी संतों से भी सावका पड़ा। जहां तक मेरा अनुमान है भक्त कवीर और सूफी शेख फरीद के जीवन-दर्शन ने उन्हें बहुत ज्यादा प्रभावित किया। ये दोनों ही मुसलमान थे। यही नहीं, गुरु गोरखनाथ के हठयोग में विश्वास करनेवाले अनुयायियों तथा जैन और बौद्ध साधुओं के भी वे संपर्क में आए, लेकिन अधिक समय तक किसी के साथ रहे नहीं। उनकी रचनाओं में ईसाई धर्म का कोई भी प्रसंग नहीं मिलता। इससे संदेह होता है कि उन्होंने दक्षिण भारत की यात्रा नहीं की होगी अन्यथा वहां इतनी तेजी से फलने-फूलनेवाले ईसाई धर्म के बारे में उन्हें जरूर पता होता और वे प्रतिक्रिया स्वरूप कुछ कहते। नानक जैसा खोजबीन करनेवाला व्यक्ति ईसाइयत के बारे में चुप्पी नहीं साध सकता था। नानक के धर्म में अनेक धर्मों का समागम था। आधार था वेदांती हिन्दू-धर्म, इसीमें भक्ति और सूफीवाद, जैन और बौद्ध धर्म तथा हठयोग की कठिन क्रियाओं की धाराएं आकर मिल गईं।

नानक के संसार की सृष्टि और मृत्यु के बारे में विचार तत्कालीन हिन्दू विश्वासों से लिए गए हैं। उनका पद "अरबद नरबद धूंधूंकारा" ऋग्वेद की एक ऋचा का ही पंजाबी रूपांतर है। इसी प्रकार नानक ने संसार—जन्म, मरण और पुनर्जन्म के सिद्धान्तों को भी माना है। इस प्रक्रिया को समझाने के लिए उन्होंने बड़े अच्छे रूपक का सहारा लिया है, जैसे रहट की ढोकलियां नीचे की तरफ जाती हैं और पानी से भरी हुई ऊपर निकलती हैं, खाली होकर फिर नीचे चली जाती हैं, ऐसा ही यह जीवन है—हमारे करतार का एक खेल—

"जैसे हरहट की माला टिंड लगत है,
इक सखनी होर फेरि भरीयत है
तैसो ही एहु खेल खसम का जिऊ उसकी वडियाई।"

नानक के मतानुसार संसार की सृष्टि के बाद भगवान् ने अपनी प्रकृति और क्रियाएं बदल लीं—भगवान् स्वयं ही द्वैत और अज्ञानी का सर्जक है। प्रभाती के एक पद 'असा दी वार' में वे लिखते हैं—"अपने-आप सजियों अपने रचियो नाव, दुई कुदरत साज के धर आसन दितो चाव।"

नानक ने एकेश्वरवाद में अपना जो विश्वास प्रकट किया है उससे

इस्लाम की याद आ जाना स्वाभाविक है—

"इक दू जीभउ लख होय लख होय लख वीस,
लख लख गेड़ा आखियै एक नाम जगदीस।"

नानक का विश्वास था कि भगवान् सत् है और असत् तथा मिथ्या से उसका विरोध है। भगवान् को उन्होंने एक आध्यात्मिक विचार ही नहीं बनाया, बल्कि सामाजिक व्यवहार के सिद्धांत भी उसी पर आधारित किए। यदि भगवान् सत्य है, तो असत्य बोलना भगवान् के प्रति अश्रद्धा व्यक्त करना है। अतः एक अच्छे सिख केवल एक सर्वशक्तिमान् और त्रिकालदर्शी यथार्थ है। बल्कि उसे मनुष्यों के प्रति इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए, जिससे उन्हें कोई चोट न पहुंचे। क्योंकि चोट पहुंचानेवाला व्यवहार, जैसे झूठ बोलना, धोखा देना, अनैतिक संबंध स्थापित करना, किसी व्यक्ति या उसकी संपत्ति का अतिक्रमण करना उस सत्य के अनुकूल नहीं है, जो भगवान् है।

इस मान्यता से प्रेरित होकर कि भगवान् की परिभाषा नहीं है, हमें उस सत्य और यथार्थ को जानने से नहीं बचना चाहिए। यह लक्ष्य हम सचाई का रास्ता अपनाने से प्राप्त कर सकते हैं—

"सोचई सोच न होवइ जे सोची लख वार।
चेप्पे चुप न होवड़ जे लाए रवां लिवतार
भुखयां मुक्ख न उतरी जे वन्नां पुरियां भार
किव सचयारा होवियौ किव कूड़ै तुट्टै पाल
हुकम रजाई चल्लना नानक लिखया नाल।"

भगवान् को सत्य का अमूर्त सिद्धांत कहकर नानक एक मुश्किल से बच गए, जिसका अन्य धार्मिक गुरुओं को सामना करना पड़ा, जो उसे केवल सृष्टा या पिता मानते हैं, वह मुश्किल थी यह सवाल—यदि भगवान् ने संसार की रचना की तो भगवान् को किसने बनाया ? यदि वह पिता है, तो उसका पिता कौन है ? परन्तु नानक की विचार-प्रणाली में दूसरी समस्याएं थीं, यदि भगवान् सत्य है, तो फिर सत्य क्या है ? नानक का उत्तर था कि जिन स्थितियों में आप स्वयं ही कुछ न तय कर सकें, तो गुरु को अपना मार्ग-दर्शक बनाइए। नानक ने गुरु को ग

बनाया। बिना गुरु के मोक्ष प्राप्त करना असभव है। गुरु सत्य के संकरे और सीधे पथ पर चलने में सहायता करता है। वह उस अकुश की भांति है, जो पागल हाथी रूपी मनुष्य को इधर-उधर बहकने से रोकता है। वह हमारी आंखों में ज्ञान का अजन लगाता है, जिसमे कि हम सत्य अर्थात् भगवान् को देख सकें। वही हमारी जीवनरूपी नैया को दैवी खेवनहार है और हमें इस भयानक भवसागर से पार लगाता है। गुरु या सतगुरु भगवान् को पृथक् ही रखा है। गुरु से परामर्श लेना, उसका आदर-सत्कार करना तो ठीक है, पर उसकी पूजा नहीं की जानी चाहिए। वह गुरु है, भगवान् का अवतार या मसीहा नहीं। नानक ने हमेशा अपने को भगवान का दास, चाकर और 'ढाढी' ही कहा है।

नानक के अनुसार मनुष्य योनि एक बहुमूल्य भेंट है। भगवान् हमें जन्म, मरण और पुनर्जन्म के चक्कर से छुटकारा दिलाने के लिए यह अवसर देता है। जीवन का उद्देश्य भगवान् से योग करना होना चाहिए। गीता में मोक्ष के तीन मार्ग बताए गए हैं—कर्म-मार्ग, ज्ञान-मार्ग और भक्ति-मार्ग। गुरु नानक ने भक्ति का मार्ग अपनाया और नाम (नाम-मार्ग) की उपासना को महत्त्व दिया। उनका कहना था कि भगवान् के नाम के अतिरिक्त मेरे पास कोई चमत्कार नहीं है। जप जी में उन्होंने लिखा है—

"भरिए हाथ पैर तन देह पानी धोते उतरस खेह।
मूत पलीती कापड होए, दे साबून दइए धोए
भरियै मत पापा के सग ओह धोपै पेनावे के रंग।"

नानक का विचार था कि नाम के स्मरण से अनेक बुराइयों का दामन होता है और अहभाव-शून्यता आती है। जो लोग अहं पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, उन्हें जीवित ही जीवन-मुक्त कहा जाता है। अहं की शक्ति को यदि सही दिशा में मोड दिया जाए, तो आप ही अन्य पांच मनोविकार—काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह—दूर हो जाते हैं। भटकते हुए मस्तिष्क को दिव्य शांति विसमद प्राप्त होती है। इसी दिव्य दृष्टि की अवस्था मे दशमद्वार (शरीर के नौ द्वारों के अतिरिक्त) खुलता है, भगवान् की झलक दिखाई देती है और अपना प्रकाश उस दिव्य ज्योति में विलीन हो जाता है। नाम-मार्ग के लिए तीन चीजों की आवश्यकता

होती है—हृदयज्ञान, मुक्त भक्ति और 'वर्तन वराग'। उनका कहना था कि मनुष्य का सबसे बड़ा संघर्ष उसके अपने मन से होता है। उन्होंने कहा था—"ज्ञान खड्ग लै मन सेओ लूझौ मनसा मनहा समाए।"

भलाई की तलाश में भटकता मनुष्य :

नानक भाग्य और किस्मत के लेखे पर मनुष्य के संकल्प की विजय में विश्वास रखते थे। उनका मत था कि प्रत्येक व्यक्ति में बुनियादी तौर पर अच्छाई होती है। वह सीप में मोती की तरह छिपी इस बात का इंतजार करती है कि कब उसे खोलकर प्राप्त किया जाए। लेकिन अधिकतर मनुष्य उससे ऐसे ही बेखबर रहते हैं, जैसे मृग कस्तूरी से। मृग कस्तूरी की खोज में इधर-उधर भागता है और शिकारी के जाल में फंस जाता है। इसी प्रकार मनुष्य उस भलाई की तलाश में भटकते हैं और माया के शिकार हो जाते हैं। गुरु का कार्य करना है और फिर उस खजाने को खोलने में मदद करना है।

इस बात में शंका है कि नानक एक तीसरी जाति बनाना चाहते थे, सीधे-सादे हिन्दू-धर्म को सुधारना चाहते थे या हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता स्थापित करना चाहते थे। ऐसा लगता है कि शुरू-शुरू में उनका मुख्य उद्देश्य इन दोनों जातियों को एक-दूसरे के समीप लाना था। स्वयं हिन्दू होने के कारण उनके लिए यह जरूरी हो गया कि हिन्दू-धर्म में सुधार किए जाएं। लेकिन जैसे-जैसे साल बीतते गए और पंजाब के लोगों तक उनका संदेश पहुंचाता गया, दोनों संप्रदायों के लोग अपना मूल धर्म हिन्दू या इस्लाम छोड़े बिना उनके उपदेशों को मानकर उनके शिष्य बनने को तैयार हो गए। इस अवस्था में लोगों को अपने पुराने रस्म-रिवाज अपनाने की पूरी गूंजाइश थी और संभवत: गुरु नानक अपने काम को एक सम्प्रदाय बनाकर स्थायित्व देना चाहते थे। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि नानक ने तीसरी जाति की नींव रखी तो गलतफहमी की खाई से बंटे दो पक्षों के बीच सेतु बांधने के लिए एक ऐसी शृंखला बनाने के लिए जो दोनों को शाश्वत मित्रता के संबंधों में बांध सके।

अपने चारो तरफ नजर दौड़ाइए, हमारे जहर-भरे शरीर मे से उभरते हुए जातीय, भाषाई और मजहबी नफरत के फोडो पर संजीदगी से सोचिए और तब आपको हम हिन्दुस्तानियो के लिए और सारी दुनिया के लोगों के लिए नानक के सदेश का वास्तविक अर्थ समझ मे आ जाएगा।

● ●

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी

गुरु नानक की धर्मातीत दृष्टि

गुरु नानकदेव केवल वीतराग महात्मा ही नहीं थे, उन्होंने संसार को नया मार्ग दिखाया और कोटि-कोटि मनुष्यों के लिए महात्मा बनने का मार्ग प्रशस्त किया। जिन दिनों उनका आविर्भाव हुआ था, वह समय भारत के लिए और विशेषत: उसके आध्यात्मिक जीवन के लिए बहुत ही अन्धकारमय था। अनेक प्रकार के कुसंस्कारों और अन्ध-विश्वासों से देश ग्रस्त था। विदेश से एक ऐसी शक्तिशाली धार्मिक संस्कृति का आक्रमण हुआ था, जो उसे हर क्षेत्र में चुनौती दे रही थी। धीरे-धीरे लोगों का मनोबल समाप्त होने लगा था। स्वयं गुरु नानकदेव ने अपनी वाणियों में बताया है कि उस समय राजा लोग सिंह के समान हिंसक और चौधरी लोग कुत्ते के समान लालची हो गए थे, उनके नौकर-चाकर अपने तीखे नाखूनों से घाव करते थे और लोगों का खून चूसते थे। (मल्हार का वार, श्लोक—१३)

उन्होंने कलियुग को काती और राजाओं को कसाई बताया था और कहा था कि धर्म पंख फैलाकर कहीं उड़ गया। झूठ रूपी अमावस्या की रात थी और सत्य का चंद्रमा अस्त हो गया था। सारंग की वार के २२वें श्लोक में उन्होंने कहा है कि, "स्त्रियां मूर्ख हो गई हैं, पुरुष जालिम शिकारी बन गए हैं और लोग शील, संयम तथा पवित्रता को तोड़कर खाद्य खाने लगे हैं, शर्म और प्रतिष्ठा उठकर न जाने कहां चले गए हैं?"

धार्मिक संकट का काल

गुरु नानकदेव ने जनता को भयंकर रूढ़ियों का शिकार पाया। वे ऐसे मूर्ख-गंवार हो गए थे कि पत्थरों को देवता मान बैठे थे और पानी में

डुबकी लगाने को ही पुण्य कार्य। बाहरी आडम्बरों और अर्थहीन आचारों के बोझ से लोग दबे हुए थे, धर्म के नाम पर ऐसी बातों के चक्कर मे पड़े हुए थे, जो अपना उद्देश्य खो चुकी थीं। यह एक सांस्कृतिक और धार्मिक संकट का काल था। उनके कुछ पूर्व ही नामदेव कबीर आदि महान् संतों ने उन कुसंस्कारों, रूढ़ियों और अन्ध-विश्वासों का थोथापन प्रकट किया था। गुरु नानकदेव ने ऐसे महात्माओं की वाणियों को भी बड़े आदर से सुना और समझा था और स्वयं इस अन्धकार को दूर करने के लिए मार्ग-प्रदर्शन किया था। मध्ययुग के संतों ने इस कठिन समय मे सहज भक्ति का मार्ग बताया था। अनेक छोटे-छोटे देवताओं के स्थान पर एक महादेव के भजन और पूजन का मार्ग बताया था। परन्तु उन्हे वह सफलता प्राप्त नही हुई, जो गुरु नानकदेव को प्राप्त हुई थी। जे० डी० कनिंघम ने बहुत ही ठीक लिखा है कि "यह सुधार गुरु नानक के लिए अवशिष्ट था।" उन्होने सुधार के सच्चे सिद्धान्तों का बड़ी सूक्ष्मता के साथ साक्षात्कार किया और ऐसे व्यापक आधार पर धर्म की नीव डाली, जिसके द्वारा गुरु गोविन्द सिंह जी ने अपने देशवासियों के मन को नवीन राष्ट्रीयता की उमंग मे अनुप्राणित किया और उत्तम सिद्धान्तों को ऐसा व्यावहारिक रूप दिया कि उनके धर्म मे छोटी और बड़ी जातियों को समान मर्यादा प्राप्त हुई। इसी प्रकार राजनीतिक अधिकारों में भी सबको बराबरी का अधिकार प्राप्त हुआ।

अद्वैतवाद

मध्य युग के अन्य संतों का सन्देश धार्मिक और सामाजिक जीवन तक सीमित था। गुरु नानकदेव ने बृहत्तर पटभूमिका पर रखा, उनके द्वारा संस्थापित भक्ति-मार्ग सम्पूर्ण मानव-जीवन को आत्मसात् करता है। यह एक बहुत बड़ी विशेषता है, जो गुरु नानकदेव के पहले भारतवर्ष मे सैकड़ों वर्ष तक किसी दूसरे महात्मा को प्राप्त नहीं हुई। भारतवर्ष ने दर्शन और अध्यात्म के क्षेत्र में बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है, परन्तु गुरु नानकदेव के सैकड़ों वर्ष पहले से विभिन्न क्षेत्रों के उदात्त विचार अलग-अलग डब्बों में बन्द से दिखाई देते हैं। बौद्धिक रूप में अद्वैतवाद

में विश्वास रखने वाले, व्यावहारिक क्षेत्र में ऊंच-नीच, आदि संस्कारों को स्वीकार कर लेते थे। आध्यात्मिक रूप से एक सच्चिदानंद में विश्वास करने वाले व्यावहारिक रूप में सैकड़ों देवी-देवताओं के पुजारी बन जाया करते थे। सिद्धान्त रूप में शब्द ब्रह्म के अस्तित्व को स्वीकार करने वाले व्यवहार के क्षेत्र में यंत्र, तंत्र, जादू, टोना सबको अंगीकार कर लेते थे। जो लोग सिद्धान्ततः एक परम शक्तिमान् ईश्वर को अग-जग-पालक मानते थे, वे ही व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में भय, लोभ और मोह से ग्रस्त होकर राजनीतिक गुलाम बने रहते थे। चिन्तन और व्यवहार की खाई निरन्तर चौड़ी होती जा रही थी। इस पृष्ठभूमि में गुरु नानकदेव के उपदेशों से चालित सिख वीरों का इतिहास अत्यन्त उज्ज्वल रूप में प्रकट होता है। उन्होंने एक अखंड सच्चिदानंद परमात्मा को विचार और व्यावहारिक क्षेत्र में समान रूप से स्वीकार किया।

विचार और व्यवहार एक-सा

यही कारण है कि वे बड़ी-से-बड़ी राजनीतिक शक्ति के सम्मुख झुके नहीं, भंयकर सामाजिक रूढ़ियों के पर्वतों से टकराकर भी रुके नहीं और सहज सत्य को सहज ही मानने में, दुविधा में नहीं पड़े। गुरु नानकदेव ने सत्य को ही एकमात्र लक्ष्य माना और जीवन के हर क्षेत्र में उस एक ध्रुवतारा की ओर ही उन्मुख रहे। उनके सन्देश में कहीं भी संकीर्णता, संकोच और दुविधा नहीं है। उन्होंने विचार और व्यवहार के क्षेत्र को एक कर दिया और उनके शिष्यों ने श्रद्धा और सम्मान के साथ उसे अपने जीवन का ध्रुवतारा मान लिया। न उन्होंने भयवश समझौता किया और न लोभ-वश उसे खंडित होने दिया।

भारतवर्ष गुरु नानक की वाणी को पाकर नवीन शक्ति लेकर जाग उठा। गुरु नानकदेव का मंत्र तब तक काम करता रहेगा, जब तक उसे उसी विशाल पटभूमि पर रखकर देखा जाता रहेगा। आज हमारा यह परम पावन कर्तव्य कि हम अपने इस महान् गुरु का दिया हुआ मंत्र उसी रूप में स्वीकार करें, जिस रूप में उन्होंने इसे दिया था, हम उसे किसी भी

मूल्य पर संकीर्ण और अनुदार नहीं बना सकते। गुरु नानक के रूप में परमात्मा ने हमें दिव्य रूप में दर्शन दिया था, उस रूप को विकृत कर देना हमारे देश के लिए परम दुर्भाग्य का अवसर होगा।

गुरु नानक जैसे महान् रत्न को उत्पन्न करनेवाली भारत भूमि धन्य है।

● ○

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

समदर्शी गुरु नानक

"बाबा नानक शाह फकीर,
हिन्दू का गुरु मुसलमान का पीर।"

गुरु नानक को १५वीं सदी का पंजाब किस दृष्टि से देखता था और उसके दिल में गुरु के प्रति कितनी श्रद्धा थी और भक्ति थी, यह उपर्युक्त पद बार-बार कह रहा है। इस पद का आज तक स्मरण किया जाना ही इस बात का एक प्रबल प्रमाण है कि गुरु नानक एक भक्त महात्मा और एक महान् पुरुष थे। उनका चलाया पन्थ आज भी शक्तिशाली है। काल बीतने के साथ उनके पन्थ का बल बढ़ा है, क्षीण नहीं हुआ। कबीर ने गुरु को परमात्मा से बड़ा मानने को कहा है। इस गुरु-पूजा की बुनियाद गुरु नानक ने ही डाली। गलती करने पर 'गुरु' तो उसको ठीक कर सकता है, पर परमात्मा नहीं। अतः गुरु परमात्मा से भी बड़ा है। कबीर की इस युक्ति को गुरु नानक का समर्थन प्राप्त है।

गुरु नानक परम प्रभु की चर-अचर सारी सृष्टि को एक समान दृष्टि से देखते थे। यही कारण है कि खेत की खड़ी फसल की रक्षा करने के बदले चिड़ियों-पक्षियों को फसल खाने दी और स्वतः गाते रहे—

"राम की चिड़िया राम का खेत,
खाओ चिड़िया भर-भर पेट।"

सारे संसार को 'ब्रह्ममय' माननेवाला और देखनेवाला व्यक्ति ही उपर्युक्त बात कह सकता है। गुरु नानक सिद्धि और ईश-भक्ति की किस उच्च सीमा तक पहुंचे थे, यह उपर्युक्त पद बता रहा है। समदर्शी दृष्टि पाना दुर्लभ है। ज्ञानी ही इसको पा सकता है, अन्य नहीं। गीता में कहा गया है—

"विद्या विनय सम्पन्ने
ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि च श्वपा के च
पण्डिताः समदर्शिनः ।"

ज्ञान प्राप्ति का एक साधन देशाटन है। गुरु नानक ने भारत में ही भ्रमण नहीं किया था, प्रत्युत् वह मक्का-मदीना भी गए थे। जब वह वहां से लौट रहे थे, तब बाबर का भारत पर हमला हो चुका था। प्रत्येक व्यक्ति अपने समय की उपज होता है। गुरु नानक इस नियम के अपवाद न थे।

भारत में विदेशी मुस्लिम-शासन स्थापित हो चुका था। शासन द्वारा बहुत-से हिन्दू-मुस्लिम बनाए जा चुके थे। कुछ लोग राज्य के लोभ से भी इस्लाम में गए थे। इनके लिए पुनः हिन्दू जाति मे आने का मार्ग बन्द था। अतः शासकवर्ग और शासितवर्ग के मध्य एकता उत्पन्न करने का उपाय 'एकेश्वरवादी' का प्रचार ही शेष रह गया था। भक्ति-मार्ग में इसने निर्गुणोपासना का प्रचलन किया। हिन्दी कविता की एक धारा इस दिशा मे प्रवाहित हुई। गुरु नानक ने मध्य युग में निर्गुणोपासना पर बल देते हुए भी सगुणोपासना का सर्वथा त्याग नहीं किया है। 'ग्रन्थ साहिब' में नानक के बहुत-से पद संग्रहीत किए गए हैं। अतः पंजाब में निर्गुणोपासना का आद्य प्रचारक गुरु नानक को मानना चाहिए।

पंजाब मुस्लिम-शासित प्रान्त था। शास्त्रों का पठन-पाठन प्रायः विलुप्त हो चुका था। जन-समाज को आडम्बर शून्य, सरल, कर्मकाड-विहीन धर्म की आवश्यकता थी। गुरु नानक ने भक्ति का मार्ग पंजाब को दिखाया। परमात्मा को पाने और ब्रह्म का साक्षात्कार करने के लिए जप करने और भगवान् के नाम का स्मरण करने का मार्ग दिखाया। भगवान् कृष्ण ने कहा है—

"यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि।"

गुरु नानक ने पंजाब में जप-यज्ञ का प्रवर्तन किया और सामान्य जनता के लिए परब्रह्म पाना सुलभ कर दिया।

गुरु नानक ने प्राचीन और परम्परा से प्रचलित धर्म का खंडन नहीं

हरस सोक ते रहै नियारो,
नाहि मान - अपमाना ।
असा मनसा सकल त्यागि के,
जग तें रहै निरासा ।
काम-क्रोध जेहि परसै नाहि,
तेहि घर ब्रह्म निवासा ।
गुरु किरपा जोई न पै किन्ही,
तिन्ह यह जुगुति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोविन्द सों,
ज्यों पानी सग पानी ।"

इसको पढ़ते हुए गीता उपनिषद् के अनेक वाक्यों का स्मरण आए बगैर नहीं रहेगा। आत्मा के परब्रह्म मे विलीन होने की अवस्था का क्या ही सुन्दर वर्णन है। "पानी में जसे पानी मिल जाता है।" वेदान्त के इस सिद्धान्त 'अहं ब्रह्मास्मि' का कितना सुन्दर निरूपण है।

हिन्दी की कविता मे गुरु नानक का योगदान अमूल्य है। १६वी शती मे तुलसी की भक्ति मन्दाकिनी, सूर का 'भक्ति सागर' का जो ज्वार प्रवाहित हुआ, उसका मूल स्रोत गुरु नानक के पदों में सरलता से ढूंढा जा सकता है। इस प्रकार गुरु नानक ने हिन्दी कविता को एक नई दिशा दिखाई, जिससे भारत आज भी आप्लावित है। भक्ति की गगा का प्रवाह पजाब मे प्रवाहित किया और गीता के इस सत्य को प्रमाणित किया —

" न मे भक्त. प्रणश्यति ।"

पाच सौ वर्ष बीत जाने पर भी गुरु नानक का श्रद्धा-भक्ति से भारत द्वारा स्मरण किया जाना क्या इसकी सचाई को सूचित नहीं करता ?

नानक फकीर थे। किन्तु कभी संन्यासी नहीं हुए। वह गृहस्थ ही रहे। गृहस्थाश्रम सर्वश्रेष्ठ आश्रम माना गया है। मनु कहता है—

"यथा नदी नदाः सर्वे,
समुद्रे यान्ति संस्थितिम् ।
तथैव आश्रमिणः सर्वे,
गृहस्थे यान्ति संस्थितिम् ।"

सच्ची ईश्वर आराधना और उपासना है। मानव-मानव में भेद करना और भेद बुद्धि रखना ईश्वर का अपमान करना है। यह विचार व्यावहारिक है, यह गुरु नानक ने अपने जीवन से दिखा दिया। मरदाना का गुरु नानक का साथ एक दिन भी न त्यागना भारतीय इतिहास की एक अमर घटना है। यह बताता है कि गुरु नानक वही कहते थे, जिसपर वह स्वतः आचरण करते थे। मरदाना ने इसी कारण गुरु का साथ नहीं त्यागा, क्योंकि उसने गुरु नानक में अभेद बुद्धि के दर्शन किए। उनको मूर्तिमान समझा और बन्धुत्व के अवतार के रूप में देखा।

पंजाब मुस्लिम-शासन में संगीत शून्य नहीं हुआ और कला-विहीन नहीं हुआ, तो गुरु नानक के कारण। बाला और मरदाना ने गुरु की वाणी को स्वर दिया, मधुर संगीत दिया। वैष्णवों द्वारा प्रचारित कीर्तन तो पंजाब में न चला, पर गुरु नानक के कारण पंजाब में संगीत जीवित रहा। इसके अभाव में संस्कृत के समान संगीत भी में विलुप्त ही हो जाता। संगीत की मधुर स्वर-लहरी पंजाब के आकाश में व्याप्त रही, तो इसका श्रेय कला-प्रेमी संगीतोपासक गुरु नानक को है।

यदि पंजाब गुरु नानक को विशेष रूप से स्मरण करे तो क्या कोई भारी विस्मय की बात है? आधुनिक पंजाब के जन्मदाता गुरु नानक का कौन भारतीय आज वन्दन न करेगा?

● ●

डॉ० प्रभाकर माचवे

गुरु नानक और हिन्दी कविता

गुरु नानक केवल सिख धर्म के संस्थापक और पंजाब के सिद्ध सन्त ही नहीं थे, वे एक उच्च कोटि के दार्शनिक और कवि भी थे। वे मध्ययुग के एक मानवतावादी सुधारक और राष्ट्रीय एकता के समर्थक भी थे। उनकी वाणी 'श्री गुरु ग्रन्थ साहिब' नामक १४३० पृष्ठों के ग्रन्थ में संकलित है। गुरु अर्जुनदेव ने इस ग्रन्थ का संकलन किया, जिसमें पहले पांच सिख गुरुओं की वाणी, भक्तों और भट्टों की रचनाएं भी संग्रहीत हैं। इनमें जयदेव, नामदेव, त्रिलोचन, परमानन्द, कबीर, रैदास, मीराबाई, शेख फरीद,, सेना, पीपा आदि की कई रचनाएं हैं। इस ग्रन्थ में ३१ रागों में (३३८४) शब्द और (१५,५७५) बन्द हैं। गुरु नानकदेव की वाणी में १९ रागों का प्रयोग मिलता है। नानक वाणी में शब्द, असटपंदीआं, छन्त और वारां होती हैं। पद में अगर पहली चीज न हो, तो दूसरी से वे शुरू किए जाते हैं। यहां हम उनकी राष्ट्रीय एकता की देन की चर्चा करेंगे।

पहले उनकी भाषा लीजिए। वे हिन्दुस्तान-भर में घूमे थे। हिन्दुस्तान के बाहर भी उन्होंने ईरान और अरबिस्तान तक सफर किया, ऐसा कहा जाता है। इसलिए उनकी भाषा में भी सब भाषाओं के शब्द मिल जाते हैं। पूर्वी पंजाबी उनकी भाषा का मूल आधार है। पर जगह-जगह पर खड़ी बोली, ब्रजभाषा, रेखता; और कहीं-कहीं सिंधी और लहंदा बोली के भी काफी शब्द और मुहावरे उनके यहां मिलते हैं। इस तरह से उनकी ज़बान में एक इन्द्रधनुष की-सी रंगत पैदा हो गई है। वे जनता की भाषा में लिखने के कायल थे। पंडितों की ऊंची भाषा में लिखकर वे चकित करना नहीं चाहते थे। खड़ी बोली के कई क्रिया प्रयोग, जैसे दिखइआ,

आइआ, मरता, जीता, मिलेगा, करउगी, करि किरपा, मिलाइआ, पहर-उगी, उनके वग, गउडी, आसा, सवा आदि मे मिलते हैं। वैसे ही व्रजभाषा के कई नमूने हैं, जैसे—

१. हरि हरि नामु भगति प्रिअ प्रीतम सुख सागरु उर धारे।
भगति वछलु जगजीवनु दाता मति गुरमति निसतारे। ३। १६।
(आसा सबद १६)

२. काची गागरी देह दुहेली उपजै विनसै दुखु पाई
(आसा सबद २२)

३ आपि तरै सगति कुल तारै
(आसा सबद १४)

पूर्वी हिन्दी के प्रयोग जैसे भईले, दुकेले भी कही मिलते हैं, तो रेखता यानी फारसी वहुत वोली भी मिल जाती है। जैसे—

यक अरज गुफ्तम पेंटि तो दर गोश कुन करतार।
रुक्ता कबीर करीम तु... (तिलंग, सबद)

उनकी वाणी मे दुनिया, मुकाम, पानी तहकीक, दिल, गिरक्त जैसे लफ्ज मिलते हैं, वहा संस्कृत प्राकृत के भी कई शब्द हैं। यानी गुरु नानक, जबान के मामले में, कोई परदेह नही बरतते थे।

वही बात उनके विचारों के बारे मे है। वे मनुष्य मात्र को समान समझते थे। इसलिए वे हिन्दू और मुसलमान दोनों के दोष दिखाने से डरते नही थे। 'आसा दी वार' के ३४वें श्लोक मे वे दोनों के पाखंड की निन्दा करते हैं—

"मुसलमान, काजी और हाकिम हैं रिश्वतखोर, मगर पढते हैं नमाज। उन काजियों और हाकिमों के मुंशी ऐसे खत्री है जो छुरी चलाते हैं, पर उनके गले हैं जनेउ। ब्राह्मण उन जालिमो के घर जाकर शख बजाते हैं, इसलिए उन ब्राह्मणो को उन्हीं पदार्थों का स्वाद लगता है। उन लोगो की पूजी झूठी और व्यापार भी झूठा है। झूठ बोलकर ही वे गुजारा करते हैं। शर्म और धर्म का डेरा दूर हो गया है। हे नानक, सब जगह झूठ व्याप्त है।"

इसे पढते हुए कबीर की रचना की याद हो आती है जिसमें कहा

था—"अरे इन दोउन राह न पाई।" गुरु नानक ढोंग और दंभ के खिलाफ वार-वार कहते हैं—"पढ़ि पुस्तक वाद। सिल पूजसि वगुल समाय।"

उन्होंने 'माझ दी वार' के १०वें-१२वें श्लोकों में सच्चे मुसलमान के लिए उपदेश दिए हैं—

प्राणियों पर दया की मस्जिद,
वजाओ, श्रद्धा कोमुसल्ला,
हक की कमाई को कुरान और
वुरे कर्मों से शर्म को सुन्नत
शुभ कार्यों को रोजा, सच्चाई को पीर,
सुन्दर कर्म को कलमा और नमाज।

उसी तरह से सच्चे ब्राह्मण के लिए 'जनेउ' का प्रतीक वे वताते हैं, 'आसा दी वार' के श्लोक २९ में—

"हे पंडित, तेरे पास ऐसा जनेउ हो, तो मुझे पहना दे, जिसका कपास दया, जिसका सूत सन्तोष हो। जिसकी गांठ संयम हो, जिसकी पूरन सत्वगुण हो। ऐसा जनेउ न तो टूटता है, न गन्दा होता है, न जलता है।"

"मनुष्य मात्र की काया परमात्मा का मंदिर है। न कोई नीच है, न कोई ऊंच। जन्म से न कोई श्रेष्ठ है, न हीन।" गुरु नानक ने वार-वार इस बात को कहा। रागु आसा, महला १ सवद ३ में कहते हैं—

"जाणहु ज्योति न पूछूह जाती आगै जाति न है" (एक)

(अर्थ है, ज्योति को जानो, जात मत पूछो, आगे यानी पहले जात-पांत नहीं थी।)

गुरु नानक की ये बातें वुद्ध के धम्मपद में 'ब्राह्मणवग्गो' खंड की याद दिलाते हैं।

गुरु नानक न सिर्फ भाषा के मामले में सर्व संग्राहक थे और सब धर्मों के सार को मनुष्य धर्म के रूप में देखते थे, वरन् कवि के नाते उनकी रचनाओं में वड़ी सुन्दर उपमाएं और उत्प्रेक्षाएं, पूरे रूपक मिल जाते हैं। यहां मैं उनकी वाणी से तीन मनोरंजक रूपक देना चाहता हूं—

१.—नाम रूपी सिक्का कैसे ढाला जाता है? (जपुजी पउड़ी ३८)

"संयम या इंद्रिय—दमन की भट्ठी वनाओ। धीरज सुनार हो। वुद्धि

कछाई, गुरु से मिला ज्ञान या वेद हथौडी हो। परमात्मामय धौंकनी। तपस्या आग। प्रेमपात्र हो। नाम रूपी अमृत गलाया हुआ सोना हो। इस तरह से सच्ची टकसाल बनती है, जहा गुरु के शब्द के सिक्के ढलते हैं।"

२.—दूध दही जमाने के उदाहरण से आध्यात्मिक उपदेश (सही रागु सबद।)

"मन का बरतन धोकर उसमें धूप दो, फिर उसमें दूध लेने जाओ। शुभ कर्म दूध है, सुरति जामन है। निष्काम होकर दूध जमाओ। नींद न आना ही मथानी की नेती हो, जीभ से नाम जपना ही दही मथना हो। इसी तरह से मक्खन रूपी अमृत बिलोकर निकालो।"

३.—अमृत रस रूपीमदिरा कैसे बनाए? (रागु, आसा सबद ३८)

"हे साधक, परमात्मा के ज्ञान को गुड बनाओ, ध्यान को महुआ और शुभ कर्मों को बबूल की छाल। इन सबको एक में मिला दो। श्रद्धा की भट्ठी और प्रेम का पाचा बनाओ। इस तरह से अमृत रस वाली मदिरा चुआओ।"

जन-साधारण के जीवन से गुरु नानक अपने प्रतीक और उपमान और काव्य-बिम्ब चुनते हैं। किसान को किसानी का, रास नाचने वाले को रंग-मंच का, योगी को राग का उदाहरण देकर वे अपनी ही बात कहते हैं।

गुरु नानक के काव्य का सबसे उत्तम उदाहरण उनका 'बारहमासा' है। तुखारी राग के इस बारहमासे की विशेषता यह है कि इसमें आत्मा के वियोग का वर्णन है और, प्रकृति के वर्णन के साथ-साथ भक्त के दिल का दर्द और तालाबेली बड़े ही मार्मिक ढंग से व्यक्त की है। "बाहर वसन्त में कोयल बोल रही है, फूलों पर भौंरे मंडरा रहे हैं, पर प्रियतम के वियोग में यही ऋतु दुखदायिनी है।" ऐसे ही एक-एक कर गुरु नानक प्रकृति और काव्य नायिका में विरोधाभास के रंग भरते जाते हैं और काव्य अपनी पैनी उक्तियों से मन को छूता जाता है।

गुरु नानक के जमाने को देखते हुए उनकी कविता और दार्शनिकता का असर बाद के हिन्दी सन्त-कवियों पर भी काफी पड़ा है। नाम महिमा, सच्चे गुरु की पहचान, मन को स्वच्छ बनाने की विधि, सात तरह के अंहकार का त्याग आदि बातें नानक के बाद के कई हिन्दी और पंजाबी

कवियों में समान भाव से मिलती हैं। गुरु नानक निर्गुण और सगुण के उभय रूपों के बारे में 'सिद्ध गोसटी' में कहते हैं—

'अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सगुण थीआ।' (पउड़ी २४)

परन्तु उनका बल निर्गुण निरंकार की उपासना पर था।

ता कीआ मलीआ कथीआ न जाहि।
जा को कहै पीछै पछुताई। (जपुजी, पउड़ी ३६)

योगमार्ग को सरल भाषा में जन-साधारण तक पहुंचाना, जनता में निर्भयता जगाना और धर्म की अंध-रूढ़ियों से अधिक मनुष्य के महत्त्व और महातम का वखान करना गुरु नानक का बहुत बड़ा योगदान है। ज्ञान-मार्ग तो और भी सिद्धों और सन्तों ने वताया, पर ज्ञान की सच्ची मर्यादा गुरु नानक ने वतलाई। इसलिए हमें उनका कृतज्ञ होना चाहिए।

यशपाल

गुरु नानकदेव और आज का समाज

आज हमारा राष्ट्र सर्व सत्ता सम्पन्न और स्वतंत्र है। विदेशी सत्ता से स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए हमें लम्बा संघर्ष करना पड़ा है। इस संघर्ष के मार्ग की बाधाओं में हमारी प्रमुख कठिनाई इस देश की जनता में साम्प्रदायिक और रूढ़िगत विश्वासों के कारण परस्पर पृथकता की भावनाएं और विश्वास थे। उस अनुभव तथा संसार के ऐतिहासिक अनुभवों तथा यथार्थ आश्रित विवेक के आधार पर हमारे राष्ट्र की प्रबुद्ध चेतना ने भविष्य में जन-गण को परस्पर ध्वंस से बचाकर राष्ट्र-निर्माण की प्रेरणा और अवसर देने के लिए अपने राष्ट्र के विधान का आधार लोकायत अथवा सैक्युलर निश्चित किया है। यह चिन्ता का कारण है कि राष्ट्रीय नीति को लोकायत मानकर भी हमारी अधिकांश जनता जीवन में लोकायत दृष्टि और व्यवहार नहीं अपना सकी है। आज भी हम प्रश्नों पर सामूहिक लोकहित अथवा राष्ट्रहित के बजाय हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या सिख वर्गों की भावना से व्यवहार करने लगते हैं।

कुछ लोगों की धारणा है कि इस देश की जनता की परम्परागत दृष्टि और भावना लोकायत नहीं, बल्कि परलोकाभिमुख, आध्यात्मिक या धार्मिक रही है। उन्हें आध्यात्मिक और लोकायत दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन में असंगति और परस्पर विरोध जान पड़ता है। ऐसे लोग अध्यात्म अथवा परलोक भावना का मार्ग श्रुति और स्मृतियों से प्राप्त कुछ विश्वासों और अनुष्ठानों या रूढ़ियों पर दृढ़ रहना ही मान लेते हैं। इस विश्वास से अन्य श्रुतियों और स्मृतियों में प्रतिपादित अनुष्ठानों और रूढ़ियों को माननेवाले समुदाय को ईश्वरीय निर्देश के विरोधी और अपना आमरण शत्रु मान लेते हैं और धर्म विरोधियों का अन्त कर देना भी

ईश्वरीय निर्देश अथवा धर्म मान लिया जाता है। ऐसे विश्वास और व्यवहार मानव-समाज में कभी अन्त न हो सकने वाले पारस्परिक ध्वंस का रूप ले लेते हैं। संसार के प्रायः सभी देश ऐसे विश्वासों और व्यवहारों के परिणामों के ध्वंसक परिणाम भोग चुके हैं। ऐसे अनुभवों तथा यथार्थगत विवेक ने मानव समाज को लोकायत दृष्टि से सामूहिक कल्याण का विचार दिया है।

इस समय हम गुरु नानकदेव की पांचवीं जन्मशती मना रहे हैं। हमारे इतिहास में गुरु नानक का स्थान एक प्रमुख अध्यात्म-द्रष्टा, परलोक साधक और धर्म संस्थापक के रूप में है। गुरु नानक ने पारलौकिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जिस भक्ति-मार्ग का उपदेश दिया है, वह हमारी वर्त्तमान परिस्थिति में विशेष महत्त्वपूर्ण है।

गौतम बुद्ध अथवा अन्य अध्यात्मनिष्ठ लोकनायकों की भांति गुरु नानक के भी सत्य ज्ञान लाभ के लिए विचार तप की कथा है। गुरु नानक बहुत समय तक आहार और निद्रा त्यागकर एकान्त में मुक्ति—मनुष्य, व्यक्ति और समाज की दुखों से मुक्ति—का मार्ग सोचते रहे। निर्वाण मार्ग का सत्य निश्चित कर लेने पर गुरु नानक के पहले शब्द थे, "मैं न हिन्दू हूं न मुसल्मान।" गुरु नानक के इस ज्ञान की भूमिका और महत्त्व समझने के लिए याद रखना होगा कि यह घोषणा उन्होंने लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व की थी। उस समय इस देश में नये आए मुसलमान और इस्लामी सम्प्रदाय को स्वीकार कर लेनेवाला समुदाय इस देश के पुरातन हिन्दू वर्णाश्रम धर्म के माननेवालों को ईश्वरीय ज्ञान और धर्म के विरोधी मानकर उनके विश्वासों को बदलना और उनके साम्प्रदायिक व्यवहारों, अनुष्ठानों, प्रार्थना के स्थानों को समाप्त कर देना अपना धार्मिक कर्तव्य समझ रहे थे और हिन्दू समुदाय अपने वेदों-शास्त्रों द्वारा निर्दिष्ट आध्यात्मिक सत्य और व्यवहार के अतिरिक्त अन्य आस्था से अनुष्ठान तथा सामाजिक व्यवहार करनेवालों को पृथ्वी पर पाप का बोझ मानकर उनका सामीप्य और अस्तित्व सहने के लिए तैयार नहीं थे। दोनों ही सम्प्रदाय अपने-अपने विश्वासों में भगवान् की इच्छा और आज्ञा पूरी करने का कर्तव्य निभा रहे थे। ऐसी अवस्था में गुरु नानक का किसी

भी सम्प्रदाय को स्वीकार न कर अपने विवेक तथा अनुभव गम्य ज्ञान से भक्ति-मार्ग को निबाहने का उपदेश ही इस देश के जन-समाज को साम्प्रदायिक दुराग्रह के ध्वंस से बचाने का एकमात्र मार्ग हो सकता था। हमारी वर्तमान परिस्थितियों में भी साम्प्रदायिक भावना से उत्पन्न संघर्षों के सुलझाव का यही मार्ग हो सकता है।

गुरु नानक ने विचार तप से यह प्रकाश पाया कि विभिन्न सम्प्रदायों के अनुयायी केवल शब्द प्रमाण या अंधविश्वास से ही सृष्टि की सर्जक और नियामक शक्ति की विभिन्न परिभाषाओं को माने हुए हैं और अपने अंधविश्वासों के ईश्वर निर्दिष्ट अनुष्ठानो तथा व्यवहार को एकमात्र सत्य मानकर उनकी स्थापना के लिए लड़-मर रहे हैं। सभी सम्प्रदाय कहते हैं—ईश्वर एक है। ईश्वर अनेक नहीं हो सकते। इसलिए ईश्वर और उनके निर्देशों को जानने के लिए परस्पर विरोधी शब्द प्रमाणों या रूढ़िगत विश्वासों का भरोसा नहीं किया जा सकता। भरोसे का मार्ग यही है कि मनुष्य सृष्टि और घटनाओं को समाज के सामूहिक अनुभव प्रमाणित ज्ञान से परखे और विवेक से उसका निश्चय करे। जो कुछ सृष्टि और मानव-समाज के लिए कल्याणकारी है, वही ईश्वरीय आज्ञा है। यही लोकायत दृष्टि है। ऐसी लोकायत दृष्टि का अध्यात्म से कोई द्वन्द्व नहीं। अढ़ाई हजार वर्ष पूर्व गौतम बुद्ध ने और गुरु नानक से लगभग सौ वर्ष पूर्व भक्त कबीर ने भी उस समय चारों ओर फैले क्रमागत विश्वासों के कारण द्वन्द्व में इसी विवेक-मार्ग का उपदेश दिया था। भक्त कबीर ने लोक सुलभ भाषा मे इस सत्य का उद्‌बोधन किया था—"तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आंखन की देखी।" यहा कागद की लेखी धर्मग्रन्थों और शब्द प्रमाण का और आंखिन देखी मानव के अनुभव गम्य ज्ञान और परख के प्रतीक हैं। गुरु नानक ने भी अपने प्रदेश की भाषा मे वही सूत्र दिया, "जिहा डिट्ठा तिहा किहा" अर्थात् जैसा जाना, देखा, परखा, पाया, वैसा कहा। तात्पर्य स्पष्ट है—जो देखा या अनुभव और विवेक से नहीं जाना, उसके लिए केवल अंधविश्वास से आग्रह मत करो। यही बात उन्होंने दूसरे शब्दों में भी कही है—"वेद कितेब कहो मत झूठे। झूठा सो जो न विचारे॥" अर्थात् वेद या कुरान को झूठा मत कहो। जो विचार और अनु-

भव से सत्य हो, जिसे कोई भी देख-परख सकता है, वही भरोसे का सत्य है।

गुरु नानक केवल विश्वास से गृहीत सत्य को स्वीकार नहीं करते थे। इसलिए वे केवल शास्त्र और रूढ़ि के आधार पर स्वीकृत, हिन्दू वर्ण व्यवस्था, जन्म-जन्म से निर्दिष्ट ऊंच-नीच के भेद या न्याय को भी स्वीकार नहीं कर सकते थे। वे किसी भी विश्वास से किसी बिरादरी या सम्प्रदाय में जन्म से मनुष्यों के भेद को अप्राकृतिक और ईश्वरीय न्याय के विरुद्ध मानते थे। इसलिए उनका भक्ति-मार्ग किसी सम्प्रदाय के लिए सीमित नहीं हो सकता था। उनका भक्ति-मार्ग समाज से भागकर एकान्त साधना का नहीं, सामाजिक और संगति का था। सामाजिक जीवन से ऊंच-नीच, छूत-अछूत के भेद को दूर करने के लिए उन्होंने भक्ति का मार्ग संगति में बताया और मनुष्यमात्र के सहभोज या लंगर की प्रथा चलाई। उनकी दृष्टि में ईश्वर सान्निध्य का सबसे सार्थक मार्ग समभाव से मानव-सेवा था।

वृद्धावस्था में शारीरिक शैथिल्य अनुभव होने पर गुरु नानक के सामने अपने भक्ति-मार्ग के निर्देशन के लिए उत्तराधिकारी नियुक्त करने का प्रश्न आया। गुरु नानक के बड़े पुत्र प्रसिद्ध भक्त थे और गृहस्थ तथा संसार को मिथ्या मानकर परलोक साधना के लिए संन्यास ले चुके थे। गुरु नानक ने अपना उत्तराधिकारी गृहस्थ और समाज त्यागी भक्त श्रीचन्द को नहीं, बल्कि एक गृहस्थ भक्त शिष्य लहना को चुना। यह लहना ही गुरु अंगद अर्थात् गुरु नानक का अंग कहलाए। गुरु नानक के इस व्यवहार से स्पष्ट है कि वे ज्ञान अथवा सम्मान को वंशगत अधिकार नहीं मानते थे। इसके अतिरिक्त वे गृहस्थ और सांसारिक उत्तरदायित्व को न केवल भक्ति द्वारा ईश्वर सान्निध्य और परलोक साधन में बाधा नहीं मानते थे, बल्कि उससे भागना मानवीय कर्तव्य की अवज्ञा मानते थे। इसी दूर दृष्टि के कारण गुरु नानक ने अन्य भक्तों और परलोक साधकों धर्मनायकों की भांति नारी को नरक का मार्ग या ईश्वर सान्निध्य में बाधक न बताकर उसे इहलोक और परलोक साधना की संगिनी और आदरयोग्य बताया। गुरु के इन दृष्टिकोण का आधार यह लौकिक विवेक या कि

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधना मानव शरीर है। जो मानव शरीर का उद्गम, पोषक तथा रक्षक है, वह किसी भी साधना मे बाधक कैसे बन सकता है ?

गुरु नानक द्वारा लोकायत मार्ग मे परलोक साधना के उपदेशो की सफलता और सामाजिक सद्प्रभाव उनके निर्वाण या देहान्त की कथा मे स्पष्ट है। नानक स्वय को न हिन्दू मानते थे न मुसलमान, परन्तु उनका देहान्त हो जाने पर दोनों सम्प्रदायो की बहुत बडी सख्या अपने-अपने अतिम रीति अनुष्ठान अनुसार उनके शरीर को अतिम आदर देने के लिए व्याकुल थी। कथा है, इस विवाद में जब उनके मृत शरीर से जब चादर हटाई, तो शव के स्थान पर फूलों की ढेरी दिखाई दी। यह स्पष्ट है कि स्वर्ग या मरणोपरात ईश्वर में लीन हो जाने का उपाय किसी भी सम्प्रदाय के अनुष्ठान नही हैं—न चिता में भस्म किए जाना, न कब्र में कयामत के दिन की प्रतीक्षा करना। ये रिवाज या रीति मात्र हैं। ईश्वर या निर्वाण प्राप्ति का मार्ग है, समभाव से मानवता की सेवा द्वारा मानव मात्र को अपना सकना और उनका प्यारा बन सकना। यही लोकायत जीवन दृष्टि और अध्यात्म का व्यावहारिक समन्वय है जो जन-समाज के विभिन्न विश्वासों के लिए सहिष्णुता और उदारता के व्यवहार का आधार बन सकती है। यही दृष्टि विभिन्न विश्वासों के लिए स्वतत्रता के साथ मनुष्य को विवेक द्वारा सत्य की परख की स्वतत्रता भी दे सकती है।

● ●

साधु टी० एल० वास्वानी

गुरु नानक की देन

कौन है, जो इतिहास का निर्माण करते हैं ? जिन्हें संसार में वड़ा कहा जाता है, वे इतिहास-निर्माता नहीं होते। जिन्हें दुनिया पागल कहती है वे ही सचमुच इतिहास को नई दिशा दे जाते हैं। ऐसे पागल ही इतिहास-निर्माता हैं। वे ही महामनव हैं।

गुरु नानकदेवभारत-निर्माता हुए। अपनी इस पुरातन मातृभूमि में उन्होंने करोड़ों लोगों का मार्ग-दर्शन किया। भारत की आत्मा और हृदय को उन्होंने जगाया और प्रेरित किया। आज हम उन्हें प्रणाम करते हैं। अपनी श्रद्धांजलि चढ़ाते हैं। किन्तु, अपने जीवन में नानकजी को अन्यों की तो बात ही क्या स्वयं उनके पिताजी ने भी यही कहा कि—"नानक पगला गया है।" पिता श्री कालू ने नानकजी के पागलपन का इलाज करने के लिए एक हकीम को बुलाया। जो नानक दुनिया का इलाज करनेवाला था, उसीका इलाज किया जाने लगा। भोली सूरत और रहस्यपूरित आंखों से युवक नानक ने हकीम से कहा—"मैं पागल नहीं हूं। ओ महाशय ! मुझे तो ईश्वर-प्रेम ने ग्रस लिया है।"

वैंद बुलाइया वैंदगी,
पकड़ ढंढोले वांह।
भोला वैद न जानई,
करक कलेजे मांहि॥
वैंदा वैंद सुवैंद तू,
पहला रोग पछाण।
ऐसा दारू लोड़ लहि,
जिन वर्ज रोगा धाण॥

ईश्वर प्रेम में मग्न नानकजी ने आत्मा का प्रकाश फैलाया। स्थान-स्थान पर नानकजी गए। इस यात्रा में लाखों हिन्दू-मुसलमानों को उनके तेजस्वी जीवन से प्रकाश पाने का सौभाग्य मिला कि एक ही आत्मा सबमें विराजमान है।

एक गीत में गुरु नानकदेव ने कहा कि 'सब ओर एक' ही विराजमान है। सोते और जागते समय भी वही रहता है। इसी एकमेव में तुम अपने-आपको समर्पित कर दो। उसी एक की आज्ञा सब ओर गूंज रही है। सब कुछ उसी एक में समा रहा है।

"हे पूर्ण परमानन्द! मुझपर दयालु हो। मैं तुझे सब ओर व्याप्त हुआ देख रहा हूं।"

आज के पीड़ित विश्व को ऐसे ही तेजस्वी मनुष्यों की आवश्यकता है। ऐसे मनुष्य कि जिनके जीवन का उद्देश्य गुरु नानकदेवजी के शब्दों में यह हो कि "सत्य के लिए मेरा सब कुछ समर्पित है।"

सन् १४६६ में गुरु नानकदेव का जन्म हुआ और वे सन् १५३८ में इस संसार से चल दिए। गुरु नानकदेव ने जिस समय जन्म लिया, उस समय भारत भीषण संकटों से गुजर रहा था। मुगलसत्ता का साम्राज्य चारों ओर छाया था और भारत गहरी नींद में सोया था। हिन्दुओं के खिलाफ मुसलमान थे। आपस में कड़ी दुश्मनी थी। धर्म और उपासना केवल रूढ़ियों में सिमट गया था। विभिन्न मत-मतान्तरों और बाह्य-आचारों से सत्य की आत्मा ही कुण्ठित हो रही थी।

भारत में भी भीषण दुरवस्था व्याप्त थी। गुरु नानक ने उस परिस्थिति का वर्णन करते हुए स्वयं कहा है कि—"राजा कसाई बने हैं। अत्याचार और निर्दयता उनके राज्य-संचालन के सबसे बड़े शस्त्र हैं। कर्तव्य-भावना को घुन लग गया है और वह समाप्त हो चुकी है। सम्पूर्ण देश में झूठ की अंधियारी ही घहरा रही है। ऐसी भीषण अंधियारी है कि इस जैसी काली रात इसके पहले कभी रही ही न हो।"

इतिहास के ऐसे संकट-काल में नानक अवतीर्ण हुए। इतिहास घोषणा कर रहा है कि गुरु नानकदेवजी का आन्तरिक धर्म-विश्वास समाज की एक नई रचना का आधार बन गया। नानकजी के इसी आन्तरिक विश्वास

ने भारत के करोड़ों भारतीयों के जीवन को दिशा दी, उन लोगों के जीवनरूपी-भवन को आकार प्राप्त हुआ। साहस और त्याग में बेजोड़ सिद्ध होनेवाले सिख-समाज के गठन के आधार में यह नानकजी का दृढ़ विश्वास ही था। परिणाम ! मुगलों का साम्राज्य तो विलीन हो गया; किन्तु गुरु नानक का साम्राज्य विद्यमान है। गुरु नानकदेव के प्रेमी शिष्यों ने उन्हें अनेक नामों से पुकारा है—परमात्मा, स्वामी, उद्धारक, पिता, गुरु आदि कितने ही प्रकार से श्रद्धायुक्त अंतःकरणों में वे विराजमान हैं। किन्तु स्वयं गुरु नानक ने अपने बारे में क्या कहा है ? वे बोलते हैं कि मैं अपने प्रेमी का सेवक हूं। इन्हीं प्रेमी-जन की सेवा के लिए यह सेवक स्थान-स्थान के चक्कर काटता रहा। लंबी-लंबी यात्राएं कीं। कश्मीर से चले, तो श्रीलंका तक जा पहुंचे। उधर अरब में मक्का तक और काबुल, अफगानिस्तान तक नानकदेव ने भ्रमण किया। अपने प्रेम की, इष्टदेव की उनके द्वारा यही सेवा थी।

नानकदेव के पास आडम्बर कैसे रहता ? उन्होंने स्वयं अपना कुछ भी नहीं माना। वे सर्वत्यागी थे। उन्होंने अपनी महत्ता या उपासना का दिखावा भी नहीं किया। वे कहते थे—"मैं विद्वान् नहीं हूं। जब जन्मा तो अज्ञानी था। जैसे समुद्र में पानी ही पानी रहता है, उसी प्रकार मुझमें अपूर्णता ही अपूर्णता है। हे प्रमागार, ! तुम मुझपर दया करो।"

स्थान-स्थान पर विचरण करते हुए उन्होंने किसीसे कुछ नहीं मांगा। जनता-जनार्दन की सेवा के लिए अधिकाधिक अवसर प्राप्त होते रहे—यही थी उनकी एकमात्र चाह। एकबार मुगल बादशाह बाबर ने गुरु नानकदेव के पास संदेश भेजा कि वे बाबर से चाहे जो कुछ मांग लें। बाबर की कृपा का भिखारी बनने के लिए आए हुए इस संदेश पर गुरु नानकदेव ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया कि—"ओ बारमीर ! सुन, वह फकीर मूर्ख है जो बादशाह के सामने भीख मांगता है; क्योंकि सबका दाता तो एकमेव परमात्मा ही है।"

एक दूसरे अवसर पर जब मुगल बादशाह ने उनके लिए कुछ भेंट भेजी और प्रार्थना की कि "गुरु इसे स्वीकार करें," तो गुरु ने साफ कह दिया कि "नानक तो ईश्वर को चाहता है इसके अतिरिक्त उसे संसार का

कुछ भी नहीं चाहिए।"

गुरु नानक का प्रभाव चमत्कारपूर्ण हुआ। इसका कारण यही था कि गुरु नानक ने अपना संदेश अत्यन्त साधारण भाषा (लोक भाषा) में दिए थे। ग्रामीण लोगों की मातृभाषा में उन्होंने अपने विचार रखे। गुरु नानक के सरल-सीधे वचनों से मानव-हृदय प्रभावित हुआ। यही उनकी सफलता का रहस्य है।

गुरु नानक ने जीवन को एक श्रेष्ठ दार्शनिक की दृष्टि से देखा था। उन्होंने सभी धर्मों में मातृत्व की अनुमति प्राप्त की। परस्पर-प्रीति का गुंजन किया। उन्होंने मनुष्य को झकझोरकर कहा कि सत्य ही परमात्मा है—उसीकी उपासना करो। उनकी मान्यता थी और उन्होंने स्वयं इसका साक्षात्कार किया था कि ब्रह्माण्ड के समस्त विकास का मूल स्रोत सत्य है और यही शाश्वत है।

गुरु नानकदेव ने पूर्ण व्यावहारिक धर्म की शिक्षा दी। यह धर्म, प्रेम और सत्य पर आधारित था। उनके शिक्षाप्रद वचनों में सदैव ही कहा गया कि अहंकार का त्यागकर समस्त धर्मों के श्रेष्ठ पुरुषों के प्रति आदर का भाव रखो। धर्म का सार है विनय, सेवा और सहानुभूति। आडम्बर का उन्होंने सदैव विरोध किया। सिर मुडाने, सन्यासियों के वस्त्र धारण करने, भभूत मलने, शंख बजाने, जोर-जोर से चिल्लाकर पूजा करने, मंत्र जाप करने, शरीर को कष्ट देने और संसार छोड़कर चल देने से काम नहीं चलेगा। प्रलोभन से भरे इस संसार में केवल सचाई और प्रेम से ही मनुष्य सच्चा जीवन जी सकता है। यही आध्यात्मिक जीवन का रहस्य है। नानकजी की मानवता को यही देन है।

● ●

श्रीमती विजय चौहान

गुरु नानक और भारतीय समाज

फिर उठो आखिर सदा, तौहीद की पंजाब से,
हिंद को इक मर्दे कामिल ने जगाया ख्वाब से ।

(इकबाल)

बुद्धिमत की समाप्ति के बाद कई सदियों तक पंजाब में कनपाड़े जोगियों ने ब्राह्मणवाद की संकीर्णताओं और कर्मकांड के खिलाफ जनता की सरल भाषा में प्रचार किया । इस सधुक्कड़ी भाषा में पंजाबी, ब्रज तथा अन्य प्राकृतों के बहुत-से शब्द थे । चरपटनाथ (८९०-९९०) ने लिखा है—

"पत्र न पूजूं दंड न उठाऊं,
कुत्ते की न्याई मांगने न जाऊं ।
भेख का जोगी मैं ना कहाऊं,
आतमा का जोगी चरपट नाऊं ॥"

पंजाबी के सूफी कवि फरीद ने भी मानव-प्रेम और समानता की कविताएं लिखीं । उनके श्लोक आज भी दोनों पंजाबों में उतने ही लोकप्रिय हैं, जितने कि उनके जीवनकाल में थे ।

गुरु नानक (१४६९-१५३९) साहित्यक दृष्टि से पंजाबी दार्शनिक विचारधारा के वारिस भी हैं और एक नई दृष्टि के जन्मदाता भी हैं । कई आलोचकों और इतिहासकारों ने गुरु नानक को भक्ति-आन्दोलन के एक संत और कबीर के शिष्य से अधिक महत्त्व नहीं दिया; जबकि कबीर और गुरु नानक में बुनियादी फर्क यह है कि कबीर ने ब्राह्मणों और मुल्लाओं से खफा होकर इन दोनों धर्मों की समान भर्त्सना की थी—

"हमरा झगडा रहा न कोऊ,
पडित मुल्ला छाड़े दोऊ ।"

इसके विपरीत गुरु नानक ने दोनों धर्मों का समन्वय करने का ऐतिहासिक रोल अदा किया और कहा कि ईश्वर एक है, जो सब पैगम्बरों और अवतरों से ऊंचा है। उन्होंने अपना सारा जीवन हिन्दू-मुसलमानों के मतभेदों को कम करने में लगाया और उनकी विचारधारा ने बाद में जाकर सिक्ख कौम को जन्म दिया, जो हिन्दू और इस्लाम दोनों धर्मों की संकीर्णताओं से मुक्त हो सकी।

"मूर्तिपूजा का विरोध तो बहुत-से संतों और सुधारकों ने किया, लेकिन वे सब जीवन को नि सार मानते थे।" (श्री सेवाराम सिंह "दि डिवाइन मास्टर")

"They perfected forms of dissent rather than planted the germs of nations. It was reserved for Nanak to Perceive the true principles of reform and to lay those broad foundations which enabled his successor Govind to fire the minds of his countrymen with a new nationality and to give practical effect to the doctrine that the lowest is equal with the highest, in race as in creed, in political rights as in religious hopes"

गुरु नानक ने अपनी उदासियो (यात्राओं) के दौरान भारत के हर कोने का भ्रमण किया। वे लका, तिब्बत, मक्का, बगदाद, बाकू, कंधार भी गए। उनकी इन उदासियों का वृत्तान्त जन्मसाखियो में दर्ज है। (हाल ही में गुजरात में एक गुरुद्वारे से भाई बाला की जन्मसाखी भी प्राप्त हुई है।)

गुरु नानक मक्का मे हाजी बनकर गए थे, जहां उस जमाने की बड़ी हस्तिया मख्दम रुक्नउद्दीन, पाकपट्टन के फरीद, शेख इब्राहीम और दस्तगीर के साथ उनकी धर्म-चर्चा हुई थी। पंजाबी कवि भाई गुरदास ने इस मुलाकात का वर्णन इन शब्दों मे किया—

"उन लोगों ने बाबा नानक से पूछा, यह बताओ कौन बड़ा है, हिन्दू या मुसलमान ? बाबा ने हाजियों से कहा कि नेक अमल के बगैर न हिन्दू हिन्दू है, न मुसलमान मुसलमान है (बाबा आखे हाजियां, शुभ अमलां बाजीं दोवे रोई।)"

मक्का से वापसी पर बगदाद में गुरु नानक की फकीर बहलोल से मुलाकात हुई। उस स्थान पर अरबी भाषा में एक शिलालेख अभी तक मौजूद है, जिसका अनुवाद इस प्रकार है—

"इस स्थान पर गुरु नानक ने बहलोल को उपदेश दिया। गुरु नानक के जाने के बाद से बहलोल की आत्मा उनके शब्दामृत पर इस तरह मनन कर रही है, जैसे ऊषा की रश्मियों में नहाए गुलाब के फूल पर मधुमक्खी जमकर बैठ जाती है।"

पहली दो उदासियों में गुरु नानक ने माथे पर साधुओं जैसा तिलक लगाया था, मुसलमान फकीरों जैसे कपड़े पहने थे, एक पैर में खड़ाऊं पहनी थी और दूसरे में चमड़े का जूता पहना था।

हरिद्वार में पंडों को सूर्य-देवता को पानी का अर्घ्य देते हुए देखकर गुरु नानक ने भी दोनों अंजलियों में पानी भर-भरकर किनारे पर फेंकना शुरू किया और कहा—"मैं अपने करतापुर के खेतों की सिचाई कर रहा हूं। अगर तुम्हारा अर्घ्य सूर्य तक पहुंच सकता है, तो मेरे खेतों तक पानी क्यों नहीं पहुंच सकता ?"

बचपन में ही उन्होंने यज्ञोपवीत धारण करने से इन्कार कर दिया था। उनके बेटे के जन्म के बाद जब सूतक की छूत दूर करने के लिए ब्राह्मण उनके घर आए, तो उन्होंने कहा कि छूत तो पापाचरण से होती है। कुरुक्षेत्र में भी मांस-मछली को लेकर ब्राह्मणों ने बखेड़ा पैदा किया। गुरु नानक ने कहा—"इन्सान मांस का पुतला है—जीभ मांस की है—इन निरर्थक झगड़ों से क्या लाभ ?

मांसहु निमे, मांसहु जम्मे हम मांसे के भांडे,
ज्ञान-ध्यान कछू सूझ नाहीं चतुर कहावे पांडे !"

जगन्नाथपुरी के मन्दिर में आरती के समय गुरु नानक बैठे रहे थे। मक्का में नमाज के वक्त वे काबे की तरफ पैर करके लेटे रहे थे और

कहा था, "जिधर खुदा न हो, उधर मेरे पैर कर दो।" वृन्दावन मे कृष्ण-लीला की आड में होनेवाली अश्लीलताओं का भी उन्होंने विरोध किया।

बाबर का हमला और भारतीय समाज

ब्राह्मणवाद के जोर पकड़ने के साथ-साथ जात-पांत का शिकजा भी कसता जा रहा था और अधिकाश लोगों के लिए इन्सान की तरह जीना दूभर हो उठा। दिल्ली के शासन की जड़ें आपसी झगडो और राजनीतिक साजिशो से हिल गई थी। योगियो और जैनियों के भी कई सम्प्रदाय बन गए थे। असुरक्षा की भावना बढ गई थी। लूटमार होती थी, औरतो पर तरह-तरह के जुल्म ढाए जा रहे थे, तरह-तरह के मेलो मे साधु-संन्यासी अंध विश्वासी जनता को लूटते थे। गुरु नानक कवि और दार्शनिक होने के साथ-साथ अपने युग के इतिहासकार भी थे।

"कल काती राजे कसाई,
धरम पख कर उडरया।
कूड अमावस सच चन्द्रमा,
दिस्से नही काहि चढदा।'

अर्थात्; शासक कसाई हैं, बेरहमी की छुरी उनके हाथो में है। धर्म पख लगाकर उड गया है। झूठ की अमावस छाई है। सत्य का चन्द्रमा दिखाई नही देता।

अपनी कापुरुषता और भीरुता का दोष पाप की खान नारी पर मढना एक फैशन हो गया था। गुरु नानक ने नारी-निन्दको से कहा—

"भंडी जम्मीये, भंडी निमीमये भंडी मगन व्याह,
सो क्यो मदा आखिये जित जम्मे राजान्।"

मुसलमानों को मलेच्छ कहकर हिकारत से देखनेवाले पाखंडो ब्राह्मण नीले रंग की पोशाक पहनकर दरबारो में जाते थे और अपने नाम के साथ मियां लगाने में गर्व का अनुभव करते थे—हलाल का गोश्त खाते थे, घर आकर स्नान करते थे—ऐसे पाखंडी ब्राह्मणो पर गुरु नानक ने कटाक्ष किया है—

"मत्थे टिक्का तेड धोती करवाई,
हत्थ छुरी जगत कसाई ।
नील वस्तर पहरि होवहि परवान,
मलेच्छ धन ले पूजहि पुरान ।
चौका देके सुच्चा होय, ऐसा हिन्दू वेखहु कोय ।

वीवी-वच्चों को छोड़कर घर भाग जानेवाले सरमुंड़े संन्यासियों के वारे में लिखा है—

"जोगी गिरहि जटा विभूत,
आगे-पीछे रोवहि पुत ।
जोग न पाया जुगति गंवाई,
कित कारण सिर छाई-पाई ।"

वावरवाणी के कवि

सन् १५२४ के हमले से पहले वावर, १५१६ और १५२१ में दो वार भारत की सरहदों में आ चुका था। जिस वक्त वावर की फौजों ने सैदपुर पर हमला किया, उस वक्त गुरु नानक अपने सफरों के साथी मरदाना के साथ सैदपुर में ही थे। पठानों ने हमलावरों का मुकावला किया, लेकिन वे हार गए। हमलावरों ने हिन्दू-मुसलमानों के घरों में आग लगा दी और हजारों मर्दों और औरतों को कैद कर लिया। गुरु नानक और मरदाना को भी वावर के सिपाही कैद करके ले गए। गुरु नानक को वावर के सामने लाया गया। इस सवाल के जवाव में कि क्या वे इस्लामी फकीर हैं—गुरु नानक ने जवाव दिया—"लक्ख मुहम्मद एक खुदा।" वावर ने उनके पैर चूमे और उनके कहने पर सैदपुर के लोगों को रिहा कर दिया। तव से सैदपुर का नाम एमनावाद पड़ा (जिसे अभयदान मिला हो)। जव वावर ने अपने साम्राज्य के चिरंजीवी होने का आशीर्वाद मांगा, तो गुरु नानक ने कहा, "जवतक तुम हिन्दू और मुसलमानों को दो आंखों की तरह समझते रहोगे और इन्साफ से हुकूमत करते रहोगे, तव तक तुम्हारी सल्तनत कायम रहेगी।"

इस युद्ध की विभीपिका से गुरु नानक का [illegible] आर्तनाद कर उठा

था और उन्होने ईश्वर से शिकायत की थी कि हिन्दुस्तान की इतनी मार पड़ती देखकर भी उसका दिल क्यों नही पसीजा ?

"खुरासान घममाना किया,
हिन्दोस्तान हराया ।
ऐसी मार पई कुरलाने,
तैं की दरद न आया ?"

सबसे मर्मस्पर्शी वर्णन कवि हिन्दुस्तानियो, तुर्कानियों, भटियारिनो और ठकुरानियो की दुर्दशा का किया है—

"जिनकी मांगों मे कभी सिन्दूर था,
उनके मुडे सर धूल से सने है ।"

जब वे नई दुल्हिनें बनकर हाथी दांत से सुसज्जित पालकियो मे बैठकर आई थीं, तो उनके शरीर पर कीमती झिलमिलाती पोशाकें थी, जब उन्होने ससुराल की दहलीज पार की, तो ससुरालवालों ने एक लाख रुपये लुटाए थे। जब वे उठकर खड़ी हुईं; तो एक लाख और लुटाए। वे सेजो पर बैठकर नारियल और छुआरे खाती थी। वही अब जंजीरो मे जकड़ी हैं, उनके मोतियों के हार टूट गए हैं।

(राग आसा—अष्टपदी)

देश की दुर्दशा को देखकर कवि नानक ने खून के सोहले गाए। लेकिन वे जानते थे कि यह देश की अपनी कमजोरियों का फल है। अपने प्रिय शिष्य लालो को सम्बोधन करते हुए उन्होने कहा—

"पाप की जज लै काबुलो आया,
जोरी मगे दान वे लालो ।
काया कपड टुक-टुक होसी,
हिन्दोस्तान सभालसी बोला ।"

वह (बाबर) पाप की बारात लेकर काबुल से आया है और जोर-जबर्दस्ती से कन्यादान (भारत का) मांगता है। देश की काया टुकड़े-टुकड़े होगी और हिन्दुस्तान का राज बहरा सभालेगा। (बाबर कान से बहरा था)

डॉ० वशिष्ट नारायण सिन्हा

गुरु नानक के धार्मिक एवं दार्शनिक विचार

मध्यकालीन सन्तों में गुरु नानक का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। वे सिक्ख-धर्म के प्रवर्तक थे। उनका जन्म विक्रम सं० १५२६ या ईस्वी सन् १४६६ के कार्तिक माह की पूर्णिमा को शेखपुरा जिले के तलवण्डी नामक ग्राम में खत्री वंशीय श्री कालूजी पटवारी के सुपुत्र के रूप में हुआ था। स्वर्गारोहण रावी के तट पर करतारपुर स्थान पर ईस्वी सन् १५३८ में हुआ। बचपन से ही उनकी विलक्षण प्रतिभा की उज्ज्वल किरणें प्रस्फुटित होने लगी थीं जिन्हें देखने और समझने के बाद भी उनके माता-पिता तथा अन्य सगे सम्बंधियों ने उन्हें संकुचित पारिवारिक बन्धन से बाँधने की कोशिश की, पर वे असफल रहे। वेगवती धारा के सामने भला रेत की दीवार कब तक ठहर सकती है ?

एक बार, जब गुरु नानक बच्चे थे, उनके पिता ने उनको धान की फसल नष्ट करनेवाली चिड़ियों को खेत से भगाने के लिए आदेश दिया। किन्तु, नानक ने तो चिड़ियों को भगाने के बदले उन्हें निमंत्रण देना शुरू कर दिया—

"चुगो चुगो री नन्ही चिड़ियो।
हरि की चिड़ियाँ हरि के खेत।"

नानक कुछ बड़े हुए, तो पिता ने उन्हें खेती करने की राय दी, ... पद्यों में उत्तर दिया—

"मनु हाली किरसाणी करणी,
सर पणंणी तनु खेतु।

नाम बीजु संतोखु सुहागा,
रखु गरीबी वेसु।
भाउ करम करी जमसी से,
घर भागठ देखु।"

ऐसा उत्तर देकर नानक खेती करने को तैयार अवश्य हुए, पर सामान्य किसान के रूप में नहीं, बल्कि अध्यात्मवादी कृषक के रूप में। फलतः उन्होंने कहा कि खेती तो ऐसी होनी चाहिए, जिसमें हल संचालन करने-वाला मन हो, कर्म ही खेती हो, शरीर खेत हो, सन्तोष रूपी फरुहा से खेत समतल बनाया जाए, ईश्वर नाम स्मरण रूपी बीज बोया जाए और कुकर्मों से भय रूपी पौधा उगे। फिर उस खेती से जिस शुभ धन की प्राप्ति हो, उसे संचित किया जाए। लेकिन वैसी खेती की योजना नानक के पिता-जी को सतोषजनक नहीं प्रतीत हुई। तब उन्होंने पुत्र को व्यापार करने की सलाह दी। इस बार भी पुत्र ने व्यापार का सही रूप उनके सामने रखा जैसा कि खेती का रूप उनके समक्ष रखा था—

"हाणु हटु करि आरजा,
सचु नामु करि वथु।
सुरति सोच करि भांडसाल,
तिसु विच तिसनु रखु।
वणजारिआ सिउ वणजु,
करि लै लाहा मनि हसु।"

अर्थात्, हे पिताजी! आप व्यापार को इस तरह समझ सकते हैं कि उसमें मनुष्य का लम्बा जीवन ही दुकान है, बेची जानेवाली वस्तु 'सत्य' है, पवित्र प्रवृत्तियां भांडशाले का स्थान ग्रहण करती हैं, जिनमें सत्य नामक विक्रय वस्तु रखी जा सकती है, और सन्त समागम लाभ के रूप में होता है। ऐसा व्यापार केवल हमें ही क्या सबों को करना चाहिए। इस प्रकार नानक को जैसे-जैसे सांसारिक बन्धनों के वश में करने का प्रयास किया गया, वैसे-वैसे वे सभी बन्धनों से निकलते गए और अपने को विश्वात्मा के रूप में प्रकट किया।

गुरु नानक का युग अनाचार और अत्याचार का युग था। भारतवर्ष

मुसलमानों द्वारा शासित हो रहा था, जिनकी एकांगी और संकुचित नीति अपनी सीमा लांघ चुकी थी। तलवार के बल पर मंदिरों को ध्वस्त किया जा रहा था और हिन्दुओं को मुसलमान बनाया जा रहा था। हिन्दुओं में ऐसी शक्ति नहीं रह गई थी कि वे अपनी आवाज़ ऊंची कर सकते। कारण, उनमें भी मेल नहीं था। ऊंची जातिवाले लोग नीची जातिवालों को दबाने पर लगे हुए थे। सर्वत्र विषमता व्याप्त थी। ऐसे ही घोर भ्रष्टाचार की स्थिति में भूतल को आलोकित करने के लिए गुरु नानक जैसे महात्मा का अवतार हुआ। सचमुच ऐसी घटनाओं को देखने से कृष्ण के निम्नलिखित शब्दों की सार्थकता सिद्ध होती है—

"यदा-यदा हि धर्मस्य,
ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य
तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां,
विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय,
सम्भवामि युगे-युगे ।"

इसीको तुलसीदास ने इस प्रकार कहा है—

"जब-जब होहिं धर्म की हानी,
बाढ़हिं अधम असुर अभिमानी।
तब-तब प्रभु धारि विविध शरीरा,
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।"

धार्मिक तथा सामाजिक विषमता देखकर गुरु नानक का मन बहुत ही दुःखित हुआ और उन्होंने समता का बीज बोना शुरू किया। उन्होंने घोषित किया—

"एको धरम दृढ़ै सचु सोई।
गुरमति पूरा जुगि-जुगि सोई।
अनहद राता एक लिवतार।
वहु गुरमुखि पावै अलख अपार।"

अर्थात्, धर्म एक है और वह है सत्य को अपनाना, उसके अनुसार आचरण करना। यह शिक्षा गुरुओं के द्वारा युग-युग से प्रसारित होती आ रही है। जो इस शिक्षा को ग्रहण कर पाते हैं, वही उस महान् तत्त्व को जानते हैं जो अलख, अपार, निराकार आदि विशेषणों से आभूषित होता है। उन्होंने वास्तविक धर्म के प्रति समाज में जागरूकता पैदा की और धर्मान्धता को नष्ट करने के विचार से उसकी अत्यन्त भर्त्सना की। नानक ने मुसलमानों से कहा—

"कूड़ा झगड़ा हाजियो मन ते रखह न मूल,
इक्को पाक खुदाह है हरि केते राम रसूल।"

हे मक्का जाने वाले लोगो ! ऐसा मन में धारण करो कि परमात्मा एक ही है। जो पवित्र है, राम और रसूल में कोई अन्तर नहीं। हिन्दुओं के धार्मिक आचारों को खंडित करते हुए नानक ने हरिद्वार में उन लोगों से कहा कि जब तुम यहां से जल अर्पित कर उस सूर्य तक पहुंचाने का सोचते हो, तो क्या मैं ऐसा नहीं सोच सकता कि यहां से अर्पित किया गया जल पंजाब में मेरे गेहूं के खेत तक पहुंच जाए ? ऐसा उन्होंने तब कहा जबकि वे अन्य लोगों को पूर्व की ओर जल अर्पित करते हुए देखकर स्वयं पश्चिम दिशा की ओर जल अर्पित करने लग गए थे और लोगों ने उनसे पूछा था कि ऐसा क्यों कर रहे हो।

इसी तरह गुरु नानक ने मूर्ति-पूजन और चन्दन आदि का विरोध किया और हिन्दू-मुसलमानों को एकता के बन्धन में लाने के लिए कहा—

'हिन्दू-मुसलमान एक साईं दी दो हद्ध।'

अर्थात्, एक ही साईं यानी स्वामी या ईश्वर से बने हुए हिन्दू-मुसलमान दो भाग हैं। उनमें कोई मौलिक अन्तर नहीं। मूलतः धार्मिक रूप में सभी मनुष्य समान हैं, क्योंकि परमात्मा ने सबको बराबर बनाया है। किन्तु मनुष्यों ने स्वयं विभिन्न रीति-रिवाज, जाति-पांति आदि को जन्म दिया है। किसीने उसी परमात्मा को राम कहा है, तो किसीने रसूल या रहीम कहा है।

"इको इक खुदाई है होर शरीक न साथ
हिन्दू-मुसलमान हुई दरगह लैण सजाई

मसरूफ हुई सतगुरु है जिसदे नहीं गुमराह
आर इक मुदाई है वई मुहम्मद कोई ।
बारी आयी आपणी उठी चले रोई ।
दूजी पाक मुदाई है होर केते राम रसूल ।"

धार्मिक एकता लाने के साथ-साथ गुरु नानक ने जातिगत या वर्ग-गत विषमता भी मिटाने की कोशिश की।
उन्होंने कहा—

"सबको ऊचा आखीए,
नीच न दीसै कोई ।"

अर्थात्, मुझे तो सभी ऊंचे ही नजर आते हैं, कोई भी नीचा नहीं जान पड़ता। सबसे ऊंचा समझे जाने वाले, ब्राह्मण की परिभाषा करते हुए गुरु नानक ने कहा—

"सो ब्राह्मणु जो ब्रह्मु बिचारै ।
आपि तरै सगले कुल तारै ।"

परमात्मा के समक्ष जाति-पाति नहीं पूछी जाती, बल्कि कर्म देखा जाता है। वहां पर कर्म ही सबसे बड़ा निर्णायक होता है, कर्म ही सुख अथवा दुख देने वाला होता है। "जाति जनमु नहीं पूछिये सच घरु लेहु बताइ। सा जाति सा पाति है जैसे करम कमाई। जनम मरन दुख काटीए नानक, छूटसि न आई।" इसके अलावा नानक ने 'लंगर' की प्रथा चलाई, जिसके अनुसार उनके सभी अनुयायी आज भी भेद-भाव छोड़कर विशेष अवसरों पर एक साथ ही बैठकर भोजन करते हैं।

गुरु नानक ने अपने धार्मिक सिद्धान्त को जाति-पाति या स्थान आदि के भेद-भाव से ऊपर उठाने के लिए सद्व्यवहारों अथवा सदाचारों पर देते हुए कहा—

''अल्प अहार सुल्प सी निद्रा,
दया छमा तन प्रीति ।
सन्तोष सदा निरवाहवो,
ह्वैयो त्रिगुण अतीत ॥

काम क्रोध हंकार लोभ हठ,
मोह न मन सिऊ लयावै ।
तब ही आतम ततको दरसै,
परम पुरुष कह पावे ।।'

अर्थात्, अपने को विकसित करने के लिए काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार का त्याग करना चाहिए तथा दया, शील, क्षमा, सन्तोष, अहिंसा आदि को अपनाना चाहिए। इतना ही नहीं, बल्कि आहार और निद्रा को भी अपने नियन्त्रण में रखना चाहिए, अन्यथा इनसे साधना में बाधा पहुंच सकती है।

धर्म की जड़ को सुदृढ़ बनाने के लिए गुरु नानक ने मात्र सामाजिक नियमों में ही सुधार नहीं किया, बल्कि आर्थिक सिद्धान्तों को भी धर्म के अनुकूल बनाने का प्रयास किया, उनका विश्वास था कि मेहनत से कमाई सूखी रोटी ज्यादा अच्छी होती है, बजाय उन अच्छे-अच्छे स्वादिष्ट पकवानों से जो दूसरों को ठगकर अर्थात् दूसरों का हिस्सा मारकर अर्जित किए जाते हैं।

इसके सम्बन्ध में उन्होंने कहा —

"हक पराइआ नानका,
उस सूअर उस गाए।"

दूसरों के अधिकार को हड़प जाना मुसलमानों के लिए सूअर तथा हिन्दुओं के लिए गाय भोज्य-स्वरूप ग्रहण करने के समान है।

जहां तक दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रश्न है, गुरु नानक के तात्विक सिद्धान्त उपनिषद् से प्रभावित मालूम पड़ते हैं, क्योंकि उन्होंने परम तत्त्व अथवा परम सत्ता के सम्बन्ध में कहा है —

"एकम एकंकार निराला ।
अमर अजोनि जाति न जाला ।
अगम अगोचर रूप न रेखिआ ।
खोजत-खोजत घटि-घटि देखिआ ।"

है, जैसे फूलों में सुगन्ध—"पुहुप मधि जिउ बासु बसत है।" संसार की वस्तुओं से उस सत्ता का वैसा ही सम्बन्ध है, जैसा सागर और उसके अन्दर रहनेवाली बूँदों का। सागर में बूँदें और बूँदों में सागर पाया जाता है—"सागर महि बूँद, बूँद महि सागर।" उसी प्रकार परम सत्ता सभी वस्तुओं में व्याप्त है और सभी वस्तुएं उसमें समाहित होती हैं। तात्पर्य यह कि गुरु नानक अद्वैत तथा निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे। इसीलिए उन्होंने बाह्याचारों में लिप्त यथाकथित भक्तों से कहा—

"साधो यह तन मिथ्या जानो।
या भीतर जो राम बसत है,
साचो ताहि पहचानो।
यह जग है सपत्ति सुपने की,
देख कहा ऐडानो।
संग तिहारे कछू न चाले,
ताहि कहा लपटाने।
अस्तुति निन्दा दोऊ परिहरि,
हरिकी रति उर आनो।
जन नानक सब ही मे पूरन,
एक पुरुप तिन पायो॥"

हे साधक! तुम इस शरीर को झूठा समझो, यह हमेशा रहनेवाला नहीं है, बल्कि इसके भीतर जो राम बसता है, उसे सच्चा समझो और उसे पहचानने की कोशिश करो। यह संसार जिसे देखकर तुम इतरा रहे हो, वह स्वप्न की तरह है, अर्थात् मिथ्या भुलावा है। सांसारिक वस्तुएं जिनके लोभ-मोह से तुम लिपटाए हुए हो, उनमें से कोई भी तुम्हारे साथ जानेवाली नहीं हैं। अतएव तुम स्तुति और निन्दा दोनों के द्वन्द्व से ऊपर उठकर मात्र उस हरि या ईश्वर से प्रेम करो, जो पूर्ण और परम पुरुष है। उसे तुम तभी जान या समझ सकते हो, जब तुम अपने को उसके साथ एकाकार करके देखोगे—

'आत्मा परातमा एको करै।'

अर्थात्, मुक्ति की अवस्था गुरु नानक के अनुसार वैसी अवस्था है, जिसमें आत्मा और परमात्मा एक हो जाता है और ऐसी अवस्था की प्राप्ति तभी हो सकती है, जब व्यक्ति सद्गुरु द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चले। इस प्रकार से गुरु नानक ने अपने समाज को सब दृष्टिकोणों से ऊपर उठाने का सफल प्रयास किया, जिसके कारण आज पांच सौ वर्षों के बाद भी भारतवासी उनके प्रति शत-शत वन्दन अर्पित करते हैं।

● ●

प्रो० आशानन्द वोहरा, एम० ए०

यथार्थवादी कवि गुरु नानक

"कलि काती राजे कसाई धरमु पंख कर उडरिया
कूड़ अमावस सचु चन्द्रमा दीसै ना ही कह चढ़िया।"
(माझकी वार, सलोकु ३५)

मानव के जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण के निर्माण में तत्कालीन परिस्थितियों का विशेष योगदान रहता है। जीवन के यथार्थ चित्रों का अंकन कवि इसी विशिष्ट दृष्टिकोण के अनुसार करता है। यह यथार्थवाद समाज-सुधारक साहित्य का एक अस्त्र माना जाता है, जिसकी शक्ति से वह सामाजिक स्थितियों एवं मान्यताओं के प्रति होनेवाले विद्रोह का नियन्त्रण करते हुए सामाजिकों के हृदय में आक्रोश की भावना को जागरित करता है। जिसके बिना उसका सन्देश क्रियान्वित नहीं हो सकता। जो सुधार और परिवर्तन वह समाज में लाना चाहता है, उसको प्रस्तुत नहीं कर सकता। मध्ययुगीन सन्तकाव्य में हमारे सन्त कवियों ने यथार्थवाद की भूमिका के अन्तर्गत अपना क्रान्तिकारी रूप भी प्रदर्शित किया, जिसमें कबीर और गुरु नानक का स्वर सब में प्रबल था। गुरु नानक का यथार्थवादी स्वर सामाजिक खोखलेपन को दूर करना चाहता था। जीवन की विद्रूपियों एवं कुरूपताओं का इतना भयंकर चित्रण उनसे पूर्व नहीं मिलता। वे ही उनके आक्रोश की जड़ बनीं और उन्होंने इनका हृदयविदारक एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया।

नानक-वाणी का जन्म भी समाज की जीवन-धारा में विकसित हुआ था। समाज के संघर्ष-मन्थन के परिणामस्वरूप उनकी काव्यकृतियाँ नव-नवीन रूप में प्रस्तुत हुईं। उनमें समाज के दुखों-सुखों की गंगा-जमुना का संगम दिखाई देता है। यथार्थवाद की भूमिका पर सत्य, शिव और सुंदरम्

और स्वार्थपरता से समाज का नैतिक और मानसिक पतन हो चुका था। शासक विलासता के मद में अन्धे हो चुके थे। गुरु नानक ने ऐसी दशा का मार्मिक चित्रण निम्न प्रकार से किया—

१—लबु पापु दुइ राजा महता कुड़ु होआ सिकदारु।
काम नेबु सदि पूछीऐ बहि-बहि करे बीचारु।।
अंधी रयनि गिआन विहूणी, माहि भरे मुरदार॥
(सलोक वारां तो वधीक)

२—कलि होई कुते मुही खाजु होआ मुरदारु।
कुड़ु बोलि-बोलि भउकणा चूका धरमु बीचारु॥
(सारगकी वार, सलोकु २१)

३—राजे सीह मुकदम कुते। जाइ जगाइन बैठे सुते।
चाकर नहदा नाइन्हि धाउ।
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु।
(मलारकी वार, सलोकु १३)

४—कलि काती राजे कसाई धरमु पखु कर उडरिया।
कुड़ु अमावस सचु चन्द्रमा दीसै ना ही कह चड़िया।
हउ भालि विकुनी होई। आधेरे राहु न कोई।
विचि हउमै करि दुखु रोई।
कहु नानक किनि विधि गति होई।
(माझकी वार महला, सलोकु ३५)

५—काजी होइ के बहै निआइ, फेरे तसबी करे खुदाइ।
बढी लेके हकु गवाए, जे को पुछै ता पड़ि सुणाए। (रामकली)

गुरु नानक ने नृशंसता के नग्न नृत्य का कैसा यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने जागीरदारी निज़ाम से सत्रस्त दीन-हीन मानवता की मूकता और विवशता को स्वर प्रदान किया। एक बार जब बाबर ने ऐमनाबाद पर आक्रमण किया, तो कवि नानक ने 'खून दे सोहले' गाए। विदेशी आक्रमणकारियों से जनता भयभीत थी, और चारों ओर खून की नदियां बह रही थी, तो गुरु नानक जैसा राष्ट्रीय कवि कैसे मौन रह सकता था? उन्होंने भाई लालो को सम्बोधित करते हुए तत्कालीन भय-

३—काजी कूड़ु बोलि मलु खाइ ।
  ब्रह्मण नावै जीआ घाई ।
४—सचि कालु कूड़ वरतिआ कलि कालख बेताल,
  बीउ बीजि पति लै गए अब किउ उगवै दालि ।

(आसा दी वार, सलोकु २८)

इनकी प्रमुख रचना 'आसा दी वार' में तत्कालीन समाज का कारुणिक चित्र मिलता है । ब्राह्मण धर्म पाखण्डपूर्ण था । जातिगत अभिमान के झूठे गर्व से समाज रोगी बन चुका था और 'सूतक' आदि कुरीतियों से समाज जर्जर हो रहा था—

१—गउ बिराहमण कउ करु लावहु गोबरि तरणु न जाई ।
  धोती टिका तै जप माली धानु मलेछा खाई ॥
  अन्तरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई ॥
  छोडीले पाखंडा । नामि लइए जाहि तरंदा ॥
  मथै टिका तेड़ि धोती कखाई ।
  हथ छुरी जगत कसाई ।

(आसा दी वार, ३४)

२—जे करि सूतकु मंनीऐ सभ तै सूतक होई ।
  गोहे अतै लकड़ी अंदरि कीड़ा होई ॥
  मनका सूतकु लोभु है जिह्वा सूतकु कूड़ ।
  अखी सूतकु देखणा परत्रिआ परधन रूप ॥

(आसा दी वार, ३७)

यही नहीं, जनता धार्मिक आडम्बरों से भी पीड़ित हो रही थी । उसका आर्त्तनाद सुनकर नानक जैसा युगद्रष्टा कवि कैसे मौन रह सकता था ? धार्मिक संकीर्णता ही समस्त सामाजिक अनाचारों का कारण थी । अनुदारता और सार्वभौमिक असहिष्णुता से सर्वत्र साम्प्रदायिकता की स्थापना हो चुकी थी । वाह्याडम्बरों की विडम्बना से हिन्दू-जाति पीड़ित थी । उनकी मूक वेदना को नानक-वाणी में स्वर मिला । योगियों-सन्यासियों की धार्मिक क्रियाओं से, आचार-व्यवहार से, जनता के मन में ग्लानि उत्पन्न हो रही थी । रूढ़िवादिता में ग्रस्त जनता आत्मगौरव को

विस्मृत कर चुकी थी। अहंमन्यता का सबल बोलबाला था—

१—बाहिरि भसम लेपन करे अंतरि गुबारी,
खिथा झोली वहु भेख करे दुरमति अहंकारी।
(सारंग दी वार, पउड़ी १२)

२—मुसलमाना सिफति सरीअति पड़ि-पड़ि करहिं बीचारु।
बन्दे सेजि पवहि विचि बंदी देखण कउ दीदारु।
हिन्दू साला ही साला हनि दरसनि रूपि आपरु।
तीर्थ नावहि अरच पूजा अगर वासु बहकारु।
(आसा दी वार, सलोकु ११)

३—लिखि-लिखि पड़िआ तैता कड़िआ।
बहु तीर्थ भविआ तैतो लजिआ।
बहु भेख कीआ देही दुख दीआ।
सहु वे जीआ अपणा कीआ।
(आसा दी वार, सलोकु १६)

४—लख चोरीआ लख जारीआ लख कूड़ीआ लख गालि।
लख ठगीआ पहिनामीआ राति दिनसु जीअ नालि।
(आसा दी वार, सलोकु ३०)

५—पढ़ि पुस्तक संधिआ बादं; सिल पूजसि बगुल समाधं।
मुखि झूट विभूखण सारं॥

गुरु नानक ने मूर्तिपूजा का निषेध किया और एकेश्वरवाद का प्रचार किया। मानवता को 'शिव' के मार्ग पर अग्रसर होने का उपदेश दिया। सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियों का यथार्थवादी स्वरूप स्पष्ट करने वाले गुरु नानक एक महान् कवि थे, जिन्होंने भारतीय संस्कृति की परम्परा से चली आ रही कुप्रथाओं का विरोध किया। नाम स्मरण पर बल दिया और ऐसी ज्ञानमयी वाणी का उच्चारण किया कि मानवता उन्हें अपना सद्गुरु मानने लगी। लोकमंगल की साधना उनकी वाणी में साकार हो उठी। निराशावादिता को आशा की किरण दिखाकर जनता में पौरुष जगाया। यथार्थवाद की भूमि पर दोनों जातियों की कुरीतियों का नग्न चित्र प्रस्तुत कर परमात्मा के साक्षात्कार के लिए उन्हें प्रेरित

किया। भक्ति-भावना की ऐसी रागात्मिका मदाकिनी प्रवाहित की कि उसमें धर्मान्धता एवं संकीर्णता की सारी मलिनता वह गई। जो भी उसके अमृत रस की प्राप्ति के लिए चेष्टावान हुआ, वही उसके भावावेग में वह गया। ये प्रथम मध्यकालीन भारतीय कवि हैं, जिन्होंने काव्य को धार्मिक, राजनैतिक आलोचना का माध्यम बनाया। सोई हुई मानवता को जागृति प्रदान की। इकबाल के शब्दों में कहा जा सकता है—

"फिर उठी आखिर सदा तौहीद की पंजाब से,
हिन्द को इक मरदे कामिल ने जगाया ख्वाब से।"

o ●

श्री सत्यनारायण सिंह

गुरु नानक की सांस्कृतिक देन

संतों की परंपरा इस देश में अति प्राचीन काल से चली आ रही है। जो पढ़े-लिखे विशेष नहीं थे, उनमें भी अद्वितीय समझ-बूझवाले संत हुए हैं। इन्होंने काफी कुछ कहा, जो आज भी संतवाणी अथवा लोकवाणी के रूप में जीवित है। हिन्दी-साहित्य के आदिकाल (संवत् १०५० से १३७५) के 'श्रीमद्भगवद्गीता' से लेकर 'उवएसमाला' (उपदेशमाला) तक और गुरु तथा हरि के स्मरण की जो परंपरा थी, वीरगाथा-काल तक पहुंचते-पहुंचते उसमें जीवन-संघर्ष का स्वर अवश्य सुनाई दिया, किन्तु व्यापक रूप से जन-मानस संत-महात्माओं की वाणी के रूप में जीवन के इस आध्यात्मिक अथवा शाश्वत पक्ष से तनिक भी इधर-उधर नहीं हुआ। मध्यकाल में तो भक्ति-मार्ग के रूप में इसने एक बड़ा ही व्यापक अन्तर्मुखी रूप धारण कर लिया। इनमें नाथों और सिद्धों की संख्या काफी थी, जिनकी न कोई जाति थी, न घर, न प्रांत या प्रदेश। इनमें से अनेक मछुए, चमार, धोबी, डोम, कहार, लकड़हारे, दर्जी तथा अस्पृश्य कही जानेवाली जातियों तथा पेशों के थे और इनकी शिक्षा-दीक्षा भी विशेष नहीं हुई थी। उन्होंने जात-पांत के नाम पर प्रचलित रूढ़ियों, अंधविश्वासों और अनाचारों के खिलाफ आवाज उठाई और मानव-मात्र के चित्त-शोधन को अपना मिशन बनाया। कबीर की निम्न साखी इसका उदाहरण है—

> "जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजियो ज्ञान।
> मोल करो तरवार को, पड़ा रहन दो म्यान॥"

अंधविश्वासों के खिलाफ इसी काल के वज्रयानी सिद्ध आर्यदेव (अर्णरीपा) की यह उक्ति देखिए—

"गंगा के नहाये कहो को ना तरिगे,
मछरी न तरी जाकौ पानी मा घर है।"

इस तरह हम देखते हैं कि मध्य-काल में समूचे उत्तर और दक्षिण में इन संतों-सिद्धों द्वारा भक्ति-आंदोलन के रूप में एक नया सांस्कृतिक एवं सामाजिक आन्दोलन पैदा हुआ। दक्षिण में—विशेषकर महाराष्ट्र में—इसके अगुवा थे ज्ञानेश्वर, तुकाराम, नामदेव आदि, और उत्तर में कबीर, नानक, दादू, रविदास आदि। चूंकि ये सिद्ध-संत साधु पैदल ही घूम-घूमकर उपदेश देते फिरते थे, इनकी भाषा भी जन-भाषा होने के कारण 'सधुक्कड़ी' कहलाई और इनका प्रभाव हिन्दू-मुसलमानों पर समान रूप से पड़ा। 'गुरु-ग्रन्थ साहिब' में महाराष्ट्र के संत नामदेव और उत्तर भारत के शेख फरीद की वाणियों का होना इस बात का प्रमाण है कि इनमें जाति-धर्म, प्रांत-प्रदेश आदि का कोई भेद कभी नहीं रहा।

इस तरह बुद्धवाणी के साथ-साथ जब निर्गुण-निराकारी संतों के शब्द या वाणी सामने आए, तो जैसे भारत के सांस्कृतिक इतिहास का नया पृष्ठ उजागर हो गया। आरम्भ में तो कबीर, रैदास, धर्मदास, पलटू, दादू आदि की अटपटी वाणी को यद्यपि साहित्य-समालोचकों ने साहित्य कला की ऊंची मान्यता नहीं दी, पर बाद में उन्होंने देखा कि जन-भाषा में लिखे गए इस जन-साहित्य में महारस का अलौकिक परिपाक हुआ है। यह सच है कि इनमें से अधिकांश ने स्वयं यह स्वीकार किया है कि उनका 'मसि-कागद' से कोई नाता नहीं रहा। कोई पेशे से जुलाहा था, तो कोई चमार और कोई दुकानदार। इसलिए स्वभावतः साहित्य के आभिजात्य से भी दूर थे और इनकी भाषा या कल्पनाओं में सुजान कवियों का-सा चमत्कार नहीं था। पर यदि ऊबड़-खाबड़ भाषा में लिखी गई इनकी वाणियों को ध्यान से देखा-परखा जाए, तो स्पष्टतया उनमें वेदों, उपनिषदों, ब्रह्मसूत्र, श्रीमद्‌भागवत् आदि ही नहीं, त्रिपिटक, जैन-साधुओं और सूफी औलियों के तसव्वुफ का एक अद्भुत सम्मिश्रण या निचोड़ मिलेगा। ऐसा लगता है, जैसे हमारे आर्षग्रंथों के सार तत्व को इन्होंने जन-साधारण के लिए उन्हीं की भाषा में सुलभ कर दिया है। इसलिए पीढ़ी-दर-पीढ़ी जनसाधारण की जिह्वा पर चढ़े इस साहित्य का काफी बड़ा

अंश लुप्त हो गया और साहित्य-मंजूषा में जितना आ पाया है, वह उसका नमूना-भर है। इस दिशा में सर्वहिंद सिख-मिशन, अमृतसर, पारीक-सदन, रतनगढ़ (राजस्थान) और वैल्वेडीयर प्रेस, प्रयाग ने सिद्धों और संतों की वाणियों के संग्रह प्रकाशित कर देश की बहुत बड़ी सेवा की है।

मध्यकालीन संतों की इस शृंखला में कबीर, नानक, दादू, पलटू आदि का विशेष स्थान है। इनमें नानक विशेष रूप से पुरानी परंपराओं को न माननेवाले होकर भी निर्गुण-सम्प्रदाय को लेकर जीवन-आचार के व्यावहारिक पक्ष को अपनाया और लोकप्रिय बनाया। अवतार, मूर्तियों की पूजा, नदी के जल की पवित्रता आदि में उनका विश्वास न था। बिना घर त्यागे या संसार छोड़े उन्होंने जीवन को इसकी सांसारिक सीमाओं में रहकर भी सत्कर्म, समानता, भेद-भाव या छुआछूत न करने की ओर झुकाया। उन्हें हम सच्चे मायने में निष्काम कर्म का योगी कह सकते हैं। जिस सत्य, नम्रता, ब्रह्मचर्य आदि को श्रीमद्‌भागवत् में दैवी संपद कहा है, उन्होंने उनका खुल्लमखुल्ला प्रचार किया। इस तरह नानक समस्त भारत के सांस्कृतिक नेता थे, केवलमात्र अपने शिष्यों (जो बाद में लोकभाषा में 'सिख' कहलाए) के ही नहीं। नानक ने न जाने कितने भारतीयों को जीवन का सच्चा और सही रास्ता दिखाया, उन्हें प्रेरणा दी। इसका मैं केवल एक उदाहरण देना चाहता हूं। स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री, जो स्वयं विनयशीलता और नम्रता के साथ ही दृढ़ता की भी प्रतिमूर्ति थे, अक्सर नानक की निम्न उक्ति दोहराया करते थे—

नानक नन्हे ह्वै रहौ, जैसी नन्ही दूब।
बड़े रूख उड़ जाएंगे, दूब खूब की खूब॥

इसका तात्पर्य यह है कि पृथ्वी पर कदम जमाकर रहो, तो तुम्हें कोई उखाड़ नहीं सकता। यह एक सार्वकालिक सत्य है और स्वयं नानक का जीवन इसका जीता-जागता उदाहरण है। उन्होंने अपने-आपको तुलसीदास की ही तरह सदा दासों का दास ही माना, अर्थात् सबसे छोटा माना। कदाचित् इसीलिए जब न जाने कितने बड़े-बड़े महाकवि उखड़ चुके हैं, नानक उन्हींके शब्दों में खूब-के-खूब हैं।

नानक 'गुरु', 'बाबा' और 'शाह' नामों से भी पुकारे जाते हैं। इनमें

पहला शब्द संस्कृत का है, जिसका अर्थ है ज्ञान देनेवाला। दूसरा हिन्दुस्तानी है, जिसका अर्थ है पिता या प्रभु। और, तीसरा फारसी का है, जिसका अर्थ है बादशाह —यानी संतों में श्रेष्ठ, शाही शानवाला, अलमस्त फकीर। इनके जीवन के बारे में भी गुरुमुखी में कई साखियां हैं। एक साखी में कहा गया है कि एक बार राजा जनक धर्मराज के साथ नरक देखने गए। वहां उन्होंने पापियों की दुर्गति देखी, उससे उनके मन में वैराग पैदा हो गया। उनके पुण्य-प्रताप से बहुतों को मुक्त कर दिया गया। वही संत राजा जनक कलियुग में गुरु नानक के रूप में पैदा हुए, ताकि जन-साधारण को पापों और बुराइयों से बचा सकें। इस कथन में कहां तक सच्चाई है, निश्चयपूर्वक कोई भी नहीं कह सकता। पर यह तो निर्विवाद सत्य है कि अपने जीवन-काल में गुरु नानक ने असंख्य लोगों को पापों और सामाजिक बुराइयों से मुक्त या विमुख किया। उन्होंने अपने समय के धार्मिक, सामाजिक और आध्यात्मिक ही नहीं, राजतंत्र के पापों और अन्यायों के खिलाफ भी आवाज उठाई। पापी राजों-महाराजों, रिश्वतखोर काजियों और उदासीन प्रजा, सबके प्रति उनका आक्रोश जागा।

इसी प्रकार एक दूसरी साखी में विस्तार से फकीरों और शेखों से हुए गुरु नानक के शास्त्रार्थों की चर्चा है। यद्यपि इस कथन की प्रामाणिकता या इसमें अतिरंजना कितनी है, यह कहना कठिन है, तथापि इससे गुरु नानक की असाधारण प्रतिभा और दुर्धर्ष तर्क-शक्ति का कुछ आभास तो मिलता ही है।

नानक की वाणी के संग्रह-ग्रंथ 'गुरु-ग्रंथ साहिब' नामकरण का पहला शब्द संस्कृत का है और दूसरा अरबी का। इन दोनों से एक ऐसे मिले-जुले व्यक्तित्व का बोध होता है, जिसे अधिकांश अनुयायियों ने अपना वेद माना और 'उनकी' वाणी का केवल पाठ ही नहीं किया, वरन् उसे आचरण में उतारने का प्रयास भी किया। इसका संकलन यद्यपि १७वीं शताब्दी में हुआ, तथापि इसमें १२वीं से लेकर १६वीं शताब्दी तक के विविध धर्म-प्रचारकों, भक्तों और संतों की वाणियों का सार है।

गुरु नानक के जीवन-वृत्त की यहां विस्तार से चर्चा नहीं करूंगा।

यहां नानक जब नौ वर्ष के हुए तो पंजाबी, संस्कृत, अरबी-फारसी आदि के अच्छे-खासे जानकार ही नहीं, शास्त्र-चर्चा करने में भी पटु हो गए। पाठशाला की पढ़ाई छोड़ अब वह साधु-संतों और फकीरों के साथ घूम-घूमकर निरंतर प्रभु के प्रताप की पढ़ाई में तल्लीन हो गए। एक बार इनके पिता ने इन्हें खेत के आस-पास भैंसें चराने को भेजा। इन्हें चिंतन करते-करते नींद आ गई। और भैंसें सारा खेत चर गईं। जब यह सत्रह वर्ष के हुए तो इनके पिता ने इन्हें बीस रुपये देकर कोई स्थायी धंधा करने भेजा। पर नानक ने यह रुपया साधु-संतों पर खर्च कर दिया और खुद खाली हाथ घर लौट आए। इसपर उनके पिता बड़े निराश और क्रुद्ध हुए। उन्होंने उनका विवाह कर दिया और तलवंडी से हटाकर उन्हें

सुल्तानपुर भेज दिया। नानक के बहनोई सुल्तानपुर नवाब दौलत खा के यहां काम करते थे। अतः उनके प्रभाव से नानक को भी वहां काम मिल गया। कुछ ही दिनों में अपने परिश्रम और ईमानदारी से उन्होंने सबका सम्मान और विश्वास तो पा लिया, पर स्वय उनका मन इस कार्य मे अधिक नही लगा। वह जो कुछ कमाते सारा-का-सारा साधु-सन्यासियों में बांट देते और अपने बीवी-बच्चों के लिए कुछ भी नही भेजते थे। एक दिन कुछ माल तौलते हुए वह १२ के बाद १३ कहते-कहते तेरा-तेरा कहने लगे—यानी सब कुछ प्रभु का। सहसा उनको भान हुआ कि सचमुच इस जग मे सब कुछ तो उसी निरकारी ब्रह्म का है, आदमी तो व्यर्थ का लेन-देन करता है। इससे उनके जीवन की दिशा बदल गई। एक दिन नित्य की तरह नहाने को नदी में घुसने के काफी देर बाद तक वह बाहर नही निकले और नदी के पानी में ही ध्यान-मग्न खड़े रहे। उनकी अन्तरात्मा ने जैसे उनसे कहा, 'तुम केवल नाम-मात्र के लिए रहो। धर्म करो। त्याग करो। पूजा-पाठ करो और भगवान का स्मरण करो।" इसके बाद सबकुछ छोड़कर वह साधु-सतो की सगति मे और अधिक रम गए तथा अपने साथी मरदाना के साथ गाव-गाव घूमकर गीतो और पदों द्वारा निर्गुण निरंकारी ब्रह्म की स्तुति करने लगे। उनकी ये यात्राए पजाब या उत्तर भारत तक ही सीमित न रहकर देश-विदेश के कई भागो तक हुई।

इन यात्राओं के कुछ प्रसंग भी कम रोचक नही। वे नानक के जीवन-दर्शन के परिचायक भी हैं। नानक का जन्म एक खत्री परिवार मे हुआ था। पर वह जात-पात को नही मानते थे। एक बार यात्रा करते हुए सैयदपुर (अब एमीनाबाद) में वह एक बढ़ई के घर ठहरे। उन्हे एक शूद्र के घर की रोटी खाते देखकर ब्राह्मण-क्षत्रियो मे बड़ा तहलका मचा। जब यह बात नानक तक पहुची, तो उन्होने कहा कि "पसीने की कमाई खानेवाले श्रमजीवी बढई की रोटी में दूध-ही-दूध है, जबकि तुम्हारे जमीदार लोगो की रोटी जो जुल्म-ज्यादातियो की कमाई है, दीन-दुखियो के खून मे सनी हुई है।" सरदार पूर्णसिह ने अपने नानक-सबंधी एक निबन्ध मे इसका वर्णन इस प्रकार किया है। गुरु नानक ने सबके सामने बढ़ई की रोटी को मुट्ठी मे लेकर दबाया, तो उसमे से दूध की

धारा वह निकली, पर जब उन्होंने ज़मींदार भागों की रोटी दबाया, तो उसमें से खून टपकने लगा।

एक अन्य उदाहरण देखिए। कुरुक्षेत्र होते हुए जब नानक अपने साथी मरदाना के साथ हरिद्वार पहुंचे, तो बहुत-से लोगों को पूर्व दिशा में गंगा-जल चढ़ाकर अपने पितरों को तर्पण करते देखा। नानक बिना किसीसे कुछ कहे, पश्चिम दिशा में गंगा-जल उलीचने लगे। इसपर जब कुछ लोगों ने पूछा कि यह तुम क्या कर रहे हो, तो नानक ने कहा, "मैं पश्चिम का रहनेवाला हूं और वहां मेरा खेत भी है। बहुत दिनों से मैं बाहर हूं और वहां उसे सींचनेवाला कोई नहीं है। इसलिए मैं उसे यहीं से सींच रहा हूं।" यह सुनकर जब लोग हंसने लगे, तो नानक ने गम्भीर होकर कहा, "जब तुमलोग लाखों कोस दूर गए अपने पितरों को पानी पहुंचा सकते हो, तो क्या मेरे खेत को यह नहीं पहुंचेगा जो कि यहां से थोड़ी दूर है ?" तर्पण के अंधविश्वासों पर यह कितना सचोट व्यंग्य है !

हरिद्वार से नानक काशी, वहां से गया, फिर कामरूप और जगन्नाथ-पुरी गए। इन यात्राओं में वह मुसलमान कलंदरों-फकीरों की-सी कपड़े की गोल टोपी पहनते थे और साधु-संतों की तरह माथे पर चंदन का तिलक लगाते थे। गले में माला भी डाल लेते थे। उनकी यह मिली-जुली हिन्दू-मुस्लिम वेश-भूषा दोनों को ही मान्य थी और दोनों में नानक के समान प्रभाव का प्रतीक-सी बन गई थी। पूर्वी देशों की यात्रा से पंजाब लौटकर नानक शेख फरीद से मिलने अजोधन (अब पाकपट्टन) गए। शेख फरीद का असली नाम शेख इब्राहीम था, पर वह फरीद या फरीदा नाम से ही प्रसिद्ध थे। दोनों में आध्यात्मिक विषयों पर बड़ी गहरी चर्चा हुई। इस भेंट के बाद दोनों में इतना अधिक प्रेम हो गया कि कुछ दिन बाद नानक उनसे दुबारा मिलने गए।

इसके बाद नानक दक्षिण की यात्रा पर निकले और सिंहलद्वीप तक गए। कहा जाता है कि नानक का प्राण-संगली ग्रंथ यहीं रचा गया। फिर उन्होंने पश्चिमी देशों की यात्रा की और मक्का भी गए। कहते हैं कि वहां जब वह काबे की तरफ पैर करके लेटे हुए थे, तो किसी मुल्ला ने इस-पर आपत्ति करते हुए कहा, "तुम अल्लाह की तरफ पैर करके लेटे हो ?"

इसपर नानक ने कहा, "अच्छा भाई, तो पैर उस तरफ कर दो जिधर खुदा नहीं है।" इसपर आपत्ति करनेवाला मुल्ला निरुत्तर हो गया। पर नानक ने बाद में अपने एक पद में इसका सार इस प्रकार समझाया, "जिनके मन में खुदा या प्रभु की सच्ची प्रीति है, वे ही सच्चे और अच्छे हैं। जो मन में कुछ और मुह में कुछ, वे कच्चे हैं। जो खुदा के इश्क में रंग चुका है, वही सच्चा मनुष्य है। जिसने उसका नाम भुला दिया है, वह पृथ्वी पर भार-स्वरूप है।" इसी इश्क-हकीकी को लेकर नानक ने प्रेम और विरह का बड़ा ही सुंदर वर्णन किया है।

संक्षेप में गुरु नानक के उपदेशों का सार यही है कि जन्म के कारण न कोई हिन्दू है, न मुसलमान। न कोई ऊंचा है, न नीचा। ईश्वर तो केवल सत्य है—निराकार और चिरंतन सत्य। उसका कोई मूर्त-रूप नहीं है। इसलिए उन्होंने भी कबीर आदि की तरह ही मूर्तियां या पत्थर पूजने का विरोध किया। भक्त की नम्रता की पराकाष्ठा उनके उस वचन में देखी जा सकती है, जिसमें अपने-आपमें पाप का आरोप कर उन्होंने प्रभु से रहम करने की याचना की है। इस संबंध में उल्लेखनीय बात यह है कि नानक की इस भावना के पीछे सत्यनिष्ठ की कसौटी थी, जिसपर कस-कर उन्होंने स्वयं अपने को भी सच्चा, पवित्र या सत्कर्मी नहीं, वरन् पापी ही पाया। इसीलिए उन्होंने मानव और प्रभु के बीच गुरु का स्थान माना। कर्तार को उन्होंने निरंकार, ओंकार और असीम माना और उन तक पहुंचने के लिए गुरु के शरणागत होना आवश्यक बताया।

गुरु नानक के उपदेशों का सार यही है कि ईश्वर एक है और सारे मानव उसकी संतान हैं—बराबर और बिना किसी प्रकार के भेद-भाव के। सबसे उनका यही कहना था कि "अपना काम करो, दूसरों का भला करो और बाकी सब ईश्वर पर छोड़ दो।" इस प्रकार विश्व-भ्रातृत्व ही उनकी वाणी का मूल उत्स तथा मानव-भाव की मूलभूत समानता और एकता ही उनकी भारतीय संस्कृति को सबसे अनूठी और अपूर्व देन है। इस अमर थाती को हम न केवल बनाए ही रखें, वरन् मन, वचन और कर्म से इसे जीवन-आचरण में भी उतारें। यही हमारी गुरु नानक के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

● ●

श्री प्रीतम सिंह कोहली

शाँति और एकता के मसीहा

यूनेस्को द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ 'सेक्रेड राइटिंग्स ऑफ द सिक्ख' की भूमिका में प्रोफेसर टायनवी ने गुरु नानक द्वारा संस्थापित सिक्ख पन्थ को 'दो पारम्परिक धर्मों'—जिनका सम्बन्ध अन्यथा वहुत अच्छा नहीं था—के वीच सृजनात्मक आदान-प्रदान का कीर्त्ति सतम्भ कहा है। अपने सम्पूर्ण जीवन में गुरु नानक ने दोनों धर्मों के शान्तिदूत का कार्य किया और वन्धुत्व एवं सौहार्द्र की भावना जगाने में प्रयत्नशील रहे। उन्होंने आदि ग्रन्थ, १५वीं एवं १६वीं शताब्दी कालीन भारत की सामाजिक और धार्मिक अधोगति का अत्यन्त ही विशद वर्णन किया है।

गुरु नानक ने कलियुग को एक बहुत वड़ा चाकू और तत्कालीन राजाओं को जल्लाद कहा है। शासक वर्ग की दृष्टि इस तरह पतित हो चुकी थी कि गुरु नानक को कहना पड़ा कि "लोभ और पाप राजा तथा मन्त्री हैं और असत्य अधिकारीवर्ग हैं। लालसा तो सेनाध्यक्ष है, जिसे सम्मति के लिए बुलाया जाता है।"

जनता के व्यक्तित्व का पूर्णतया अवमूल्यन हो चुका था, फलतः उसमें मनोवल लेशमात्र भी न रहा। पंडितों और काजियों ने अपना कर्तव्य भुला दिया था और वे झूठ, हिंसा आदि के रास्ते पर बढ़ रहे थे। जाति-प्रथा नैतिक पतन कीओर ले जा रही थी। ऊंची जाति के लोगों ने मंदिर में शूद्रों का प्रवेश बन्द कर रखा था। स्त्री जाति को अपवित्र और निम्न स्तर का समझा जाता था। यद्यपि हिन्दू एवं मुसलमान तत्कालीन धार्मिक रीति-रिवाजों का अनुसरण कर रहे थे, किन्तु वे सच्चाई से कोसों दूर थे। योगी भी आध्यात्मिकता से गिर चुके थे। लोग ईश्वर को पूजते तो थे, मगर अशुद्ध मन से। व्यापार में सत्य एवं दया का नाम तक नहीं था।

संक्षेप में कलियुग वस्तुतः वह युग था, जब भारतवर्ष में, झूठ, घृणा, अज्ञान, असहिष्णुता, हिंसा आदि का बेहतर ज़ोर था। बुनियादी और जरूरी बातें एकदम भुला दी गई थीं। विश्वास और सही प्रतिभा की जगह आपसी बंटवारा, खोखली औपचारिकता और बाहरी गमानता लोगों के अन्तर्जीवन में घर कर गई थी।

एक सच्चे सुधारक की तरह गुरु नानक ने बाहरी पहलुओं में गहरे पैठ कर प्रचारों को परखा और फालतू बातों को छांटकर बुनियादी एकता एवं पवित्रता की तलाश की। उनके द्वारा अपनाया गया तरीका यह था कि उन्होंने सही धारणाओं को पुनर्परिभाषित किया, ताकि वास्तविकता और सचाई तक पहुंचा जा सके। गुरु नानक और उनके शिष्यों द्वारा अपनाई गई इस पद्धति ने उनके समकालीनों में नैतिक प्रेरणा जगाई।

गुरु नानक का प्रिय विषय था—वास्तविक पूजा की प्रवृत्ति का वर्णन तो अभिव्यक्ति या धर्मनिष्ठा है; शास्त्रों की विधियां या तड़क-भड़क नहीं। जगन्नाथपुरी के मन्दिर में उन्होंने आरती की विधि देखी और तुरन्त उन्हें ऐसा लगा कि सारा ब्रह्मांड जैसे परमात्मा और प्रकृति का मंदिर है।

ऐक्य की प्रक्रिया का दूसरा पहलू, जो गुरु नानक तथा उनके अनुयायियों ने अपनाया, वह था हिन्दू धर्म और इस्लाम के विचारों के भीतर उनकी गहरी पैठ। आदि ग्रन्थ को पढ़ने से यह बात साफ होती है कि सिक्ख गुरुओं ने अल्लाह, राम या कृष्ण का गुणगान एक ही भाव से किया है। उन्होंने दोनों धर्मों के पारिभाषिक शब्दों का व्यवहार किया, वे दूसरे धर्मों के गुरुओं की संगति में गए तथा उन्होंने दोनों धर्मों की कमियों की खुलकर भर्त्सना की। उन्होंने यह कभी नहीं चाहा कि लोग अपना धर्म छोड़ दें और हमेशा यही उपदेश किया कि विभिन्न धर्मों के लोग अपनी पूजा-विधि और पद्धति का ही मात्र अनुसरण न करें, बल्कि वे सच्चे अर्थ में अपने धर्मों के अनुयायी बनें। इस दृष्टिकोण ने दोनों धर्मों के पारस्परिक तनाव को बहुत कम कर दिया।

गुरु नानक ने इस समन्वयवाद का अत्यन्त ही सक्षम ढंग से प्रचार

किया। वे मुसलमानों, हिन्दुओं, बौद्धों, और जैनों की तीर्थ स्थानों में गए और उन्होंने उन सबसे खुलकर बातचीत की। उन्होंने और अन्य सिक्ख गुरुओं ने जन-साधारण में एक ऐसे धर्म को प्रचारित करने का प्रयत्न किया, जिसमें हिन्दू धर्म और इस्लाम के सर्वश्रेष्ठ तत्वों का समन्वय था। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि धार्मिक जीवन का अन्तर्निहित सत्य मत, वाद और विधियों के बावजूद सबकी पूंजी है। उन्होंने प्रेम, सत्य, परितोष, विनम्रता, भगवान् की पितृवत्सलता, मनुष्य के बीच भ्रातृत्व, वासना पर नियन्त्रण, जीवों पर दया, पुरुष और स्त्री के बीच समानता और दूसरों की सेवा के सन्देश दिए। इन सारे प्रयत्नों ने मत-मतान्तरों की संकुचित दृष्टि और साम्प्रदायिकता के आवेग को बहुत हद तक दूर किया। परिणाम यह हुआ कि पंजाब में वेदान्त और सूफीवाद अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण ढंग से सामने आए। इससे दोनों का लाभ हुआ। इस्लाम के अद्वैतवाद ने हिन्दू-धर्म के अतिशय मत-मतान्तरों को प्रभावित किया। हिन्दू वेदान्त ने सूफीवाद को समृद्ध किया। पंजाब का सूफी साहित्य एक ऐसी समृद्ध निधि है, जिसमें मुसलमानों, हिन्दुओं और सिक्खों ने सभी सम्प्रदायों के पारिभाषिक शब्दों का व्यवहार करते हुए अपने योगदान दिए हैं। सहिष्णुता की भावना के अतिरिक्त, जिससे साम्प्रदायिक सौहार्द को बल मिला। गुरु नानक ने समानता की भावना पर बहुत ज़ोर दिया। जाति "प्रथा के कारण उपजे सामाजिक अन्याय से वे अत्यन्त मर्माहत हुए। उन्होंने कहा कि न कोई बड़ा पैदा हुआ है, न छोटा। जाति का आदर एक नासमझी है और बड़े नामों पर गर्व करना है। आदमी ने इसे अपने स्वार्थ के लिए बनाया है। मनुष्य अपने कर्तव्य के कारण बड़ा या छोटा होता है।' अपनी जाति के बारे में पूछे जाने पर गुरु नानक ने कहा, "मैं नीच जातियों में नीचतम हूं।

गुरु नानक तथा दूसरे सिक्ख गुरुओं ने नैतिक महत्ता को आध्यात्मिक महत्ता का आधार बताया। ईश्वर की दिव्य धारणा और उससे व्यक्ति के सम्बन्ध की प्रवृत्ति उनके नैतिक उपदेशों का आधार थी। आदि ग्रन्थ का मूल मन्त्र ईश्वर को निर्भीक वैमनस्य से रिक्त कहता है और ईश्वर का साथ करने के लिए मनुष्य को भी निर्भीक और वैमनस्य से दूर होना

चाहिए।

यह सिद्धान्त चुने हुए मसीहों और चुने हुए लोगों की जड़ पर प्रहार करता है और समानता एवं न्याय की स्थापना भी करता है। कुछ लोगों ने यह कहा है कि सिख आन्दोलन ने राष्ट्रीय शक्ति को कमजोर बनाया है। गुरु नानक एवं अन्य सिख गुरुओं के विषय में ऐसा नहीं कहा जा सकता है। उनके उपदेश और व्यक्तिगत उदाहरण यह सिद्ध करते हैं कि वे क्रियाशील व्यक्ति थे और अदम्य साहस से भरपूर थे।

गुरु नानक के समन्वयवाद की सफलता का कारण बतलाते हुए डॉ० राघवन ने कहा है कि "इन सन्तों और उनकी क्रियाशीलता ने सही भावात्मक दिशाओं में कार्य किया और मानव हृदय की मूलभूत सतहों का स्पर्श किया।"

दुर्भाग्यवश जो सांस्कृतिक ऐक्य, शान्ति और सौहार्द मध्ययुग में स्थापित हुई थी, वह ब्रिटिश शासन से पनपी साम्प्रदायिक संस्कृति के कारण बहुत-कुछ नष्ट हो गई। अन्य कारणों के अलावे इसका एक कारण यह भी था कि मध्यकाल के हिन्दू और मुसलमान सुधारकों ने धार्मिक और नैतिक आन्दोलनों का नेतृत्व किया, किन्तु १९वीं शताब्दी के सुधारक विशिष्ट बन गए। परिणाम यह हुआ कि जहां मध्ययुगीन सुधारकों की वाणी में शाश्वतता थी, वहां उनकी वाणी संकुचित हो गई। इससे यह स्पष्ट होता है कि पूर्ण सत्य अथवा ठोस सिद्धान्त जो एक बार पनपते हैं, वे सदैव बलवन्त नहीं रहते। अतएव, यदि गुरु नानक और दूसरे सन्तों की उपलब्धियों को जीवित रखना है, तो हमें इनके सिद्धान्तों और उपदेशों के प्रति सतत् जागरूक रहना होगा। अतः हम सब इन मूल्यों के नवोन्मेष और नवीकरण के लिए पुनः कृत संकल्प हो जाएं।

● ●

प्रो० सन्तराम आनन्द, एम० ए०

गुरु नानकजी का आध्यात्मिक संदेश

कहा जाता है, और यह मान्य भी जान पड़ता है, कि कुछ मुक्त आत्माएं स्वेच्छापूर्वक शरीर धारण कर साधारण मनुष्यों के समान मृत्यु-लोक में व्यवहार करती हुई अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना करती हैं। इसके अतिरिक्त वह संसार में इस प्रकार विचरण करती हैं कि उनके कृत कार्य साधारण जनता के लिए प्रमाण बन जाते हैं। ऐसी शरीरयुक्त आत्माएं ही अवतार कहलाती हैं। गुरु नानकजी भी ऐसी श्रेणी के एक महापुरुष, महाकवि तथा एक महान् सुधारक और देशभक्त थे।

गुरुजी का जन्म तब हुआ, जबकि देश के शासन की बागडोर लोधी वंश के आतंकवादी, तानाशाही बादशाहों के हाथ में थी। परन्तु जब आप ५८ वर्ष के थे, तो बाबर ने देश पर हमला किया, जिससे लोधी वंश की समाप्ति हो गई और बाबर मुगल वंश का पहला सम्राट् हो गया। परन्तु इस परिवर्तन से प्रजा पर छाई आतंकता में कोई अन्तर न हुआ अर्थात् बादशाहों की राजनीति हिन्दुओं के लिए वैसे ही रही। यदि सिकन्दर लोधी ने मथुरा के मंदिरों को गिराकर मस्जिदें बनवाईं, तो बाबर ने मंदिरों की मूर्तियों को तोड़-फोड़कर मस्जिदों के रास्तों पर बिछवा दिया। दोनों ने ही हिन्दुओं पर कई प्रकार के कर लगाए। संक्षेपतः गुरुजी का सारा जीवन मुसलमान बादशाहों के अत्याचारों के प्रवाह से गुजरा जिन अत्याचारों के कारण हिन्दू-जाति में दहशत-सी फैली हुई थी।

गुरुजी ने जब इस आश्चर्यजनक घटना को देखा, कि हिंदू अपने ही देश में निराश्रय हुए अपने धर्म की ओर उपेक्षित होकर अपने दिन-प्रतिदिन के व्यवहार में भी विदेशी तौर-तरीकों को अपना रहे हैं, तो उन्हें बड़ा खेद हुआ। और, प्रजा को ढांढस बंधवाने के लिए तथा उनको

अपने ही धर्म में स्थिर रखने के लिए उपदेशों का एक पर्याय पता दिया। 'वाणी' से जान पड़ता है कि इस समय कुछ हिन्दू मुसलमानों के कृपा-पात्र बनने के लिए अपने-आपको म्लेच्छों रंग में रंगने के लिए परस्पर सम्बोधन में 'मियां' शब्द का प्रयोग करने लगे। पत्नी अपने पति को और बहिन अपने भाई को मियांजी-मियाजी कहकर बुलाने लगीं। यह देख-कर गुरुजी उपदेश दिया—

"घर-घर मिया सबना जीआं,
एह बोली अवर तुम्हारी।"

अर्थात्, मियांजी-मियाजी शब्द, जो घर-घर बोला जा रहा है, यह आपके देश की बोली नहीं, विदेशी है। आप स्वदेशी बनो। फिर यह भी बतलाया कि—

"खत्रीया दा धर्म छोडिया
म्लेच्छ भाखा गही,
नीले वस्त्र कर कपड़े पहनें
तुर्क पठानी अमल किया।"

अर्थात्, हिंदू अपना धर्म छोड़ते जाते हैं और विदेशी भाषा-भाषी बनते जाते हैं। तुर्क और पठानों की तरह नीले कपड़े पहनते हैं और उन्हींके समान अमल भी कर रहे हैं।

मन्दिरों में पूजा करने पर जो 'कर' हिन्दू-जाति पर थोपा जाता था, उसके लिए गुरुजी खेद प्रकट करते हुए कहते हैं—

"देवल देवों पर कर लगा
कैसी प्रथा चलाई।"

परन्तु इसका कोई उपचार न देखकर उन्होंने बड़ी विरक्ति से ईश्वर का सही रूप लोगों के सामने रखा और बतलाया कि जो युग-युगान्तरों में सत्य है, जो जन्म-मरण से रहित है और 'करता पुरुख' यानी सृष्टि की रचना करनेवाला है, उसका सत्य नाम 'एक ओंकार' है। गुरु प्रसाद यही है कि आप इसीकी पूजा तथा इसीका स्मरण करें। परन्तु यह स्मरण रहे कि गुरुजी का ईश्वर सबंधी विचार हिन्दू-जाति को केवल सांत्वना देने के लिए ही नहीं, अपितु एक तर्कयुक्त मीमांसा है। उन्होंने जिस

[illegible] नहीं, उसका [illegible] हो सकता है। [illegible] कहा है —

"थापिआ न जाइ कीता न होइ,
आपे आप निरंजन सोए।"

अर्थात्, न तो वह बनाया जा सकता है, और न ही वह किया जा सकता है। यानी न वह कोई भौतिक वस्तु है और न ही वह कोई क्रिया है। परन्तु है वह स्वयंभू 'निरंजन', जिसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता ही नहीं। उनके शब्दों में यह भी कहा—

"सोचै सोच न होवी जे सोचें लख वार।"

हम लाख बार उसका चिन्तन करें, पर सोचें, उसका [illegible] सोचा नहीं जा सकता, क्योंकि वह मन की पकड़ से परे है। फिर प्रश्न उठता है कि क्या गुरुवाणी में वर्णित प्रभु [illegible] ही है? नहीं, ऐसा तो नहीं जान पड़ता। क्योंकि इसके उसका वर्णन तो पूर्ण रूप से निरूपा-त्मक है, जो निम्नलिखित शब्दों से स्पष्ट है—

"नानक निर्गुण गुण करे,
गुणवन्तया गुण दे।
तिहया कोई न सुझई,
जे तिसु गुणु कोई करे॥"

गुरु नानक जी कहते हैं कि वह (परमात्मा) ऐसा है, जो निर्गुण को गुणवान् करता है। गुण वाली (गुणवाला मानव) सदा उसीसे गुण लेता है। परन्तु ऐसा कोई व्यक्ति नहीं, जो 'उस' को कोई गुण प्रदान करे। यह बात तो सर्वज्ञात है कि हमें हर वस्तु की जानकारी चाहे वह लौकिक हो अथवा अलौकिक उसके गुणों से ही होती है। जिसका कोई गुण नहीं, वह अज्ञात ही हुआ करती है। इसलिए अज्ञात को ज्ञातव्य करने के लिए इसमें कुछ विशेष गुणों का समावेश आवश्यक है। परन्तु यह गुण कहां से आवे? यदि यह उस अज्ञात में नहीं, तो उसमें उत्पन्न नहीं हो सकते। क्योंकि एक सिद्धान्त है कि—

"नासतो विद्यते भावो ना भावो विद्यते सतः।"

अर्थात्, जो है नहीं, उसका भाव नहीं हो सकता और जो है, उसका

सम्भव नहीं। गुरुजी ने इस सिद्धान्त के अनुसार ही भगवान में इन गुणों की प्राप्ति किसी बाह्य स्रोत से ही मानी, जो सर्व गुणों का भण्डार हो सकता है। इसीसे उन्होंने सत् नाम कहा, जो अज्ञात होता हुआ भी निर्गुण को गुणवान् करता है। उदाहरणार्थ, मानव-शरीर पांच तत्त्व का एक पुतला है। इन पांच तत्त्वों में देखने, सुनने, सूंघने आदि की कोई शक्ति नहीं। उपर्युक्त सिद्धांतानुसार इन पांच तत्त्वों के समावेश से बने हुए पिंड में इन शक्तियों का उद्भव असम्भव है। इसलिए गुरु-वाणी का कहना है कि गुणवान् में जो गुण है, वह 'उसी' के हैं। मानुष भी मूर्तियों की स्थापना करता है, उनको रंग-रूप भी देता है, परन्तु कोई ऐसा कलाकार नहीं है, जो उन मूर्तियों में ऐसे गुणों का संचार कर सके।

इसके अतिरिक्त गुरुजी ने देश में वर्तमान अशुद्ध रीति-रिवाजों का युक्तियुक्त तर्क द्वारा तथा वैज्ञानिक ढंग से संशोधन किया, जिससे साधारण लोग भ्रमजाल से मुक्त होकर एक उच्च जीवन को अपना सकें। उदाहरणार्थ यह माना जाता था कि सृष्टि का ठहराव धौल (बैल) के एक सींग पर है जब वह सींग को बदलता है, तो भूकम्प की घटना हो जाती है। गुरुजी इसका निषेध करते हुए पूछते हैं कि क्या एक ऐसा बैल, जैसा कि हम जानते हैं, इतनी बड़ी धरती को संभाल सकता है? और इस बैल का ठहराव कहां हो सकता है? यह सब भ्रम है। यदि गंभीरतापूर्वक सोचा जाए, तो जान पड़ेगा कि इसका आधार एक अज्ञात शक्ति है, जो ईश्वरीय शक्ति के नाम से सिद्ध है। हां, मानव-समाज का आधार एक वह धौल है, जिसे 'धर्म' कहते हैं, जो दया की संतति है और जिसका संदर्भ सूत्र 'संतोष' है। गुरु जी ने अपने वचनों में—

> "धौल धर्म दया का पूत, संतोष थाप रखया जिन सूत।
> जे को बुझे होवे सचयार, धौले ऊपर केता भार।
> धरती होर परे होर, तिस ते भार तले कौन जोर।"

• •

डॉ० सुदेश भाटिया

नानक-वाणी

गुरु नानकदेव एक सच्चे संत, वास्तविक भक्त और साधक कवि थे। उनका आविर्भाव ऐसे समय में हुआ, जबकि त्रस्त मानवता की करुण पुकार सुननेवाला कोई न था। गोस्वामी तुलसीदास ने 'राम चरित मानस' में एक स्थल पर कहा है—

"जब-जब होइ धर्म की हानी।
बाढ़हि असुर अधम अभिमानी॥
तब-तब धरि प्रभु विविध सरीरा।
हरहि कृपा-निधि सज्जन पीरा॥"

सचमुच तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक परिस्थितियों के बीच बेचैन और व्याकुल जनता की विह्वल पुकार को करुणा निधि भगवान् ने सुना —

"सुनि पुकार दातार प्रभु,
गुरु नानक जग माहि पठाया।"

अत: गुरु नानकदेव ने संसार में आते ही एक कुशल नेता के रूप में जनता को धर्म का सही मार्ग दिखाने की चेष्टा की। उन्होंने मानव-जाति को ईश्वर की शरण में जाने के लिए प्रेरित करते हुए मानवता का उपदेश दिया, जिसमें हमें समन्वय की विराट् चेष्टा दृष्टिगत होती है। उनके काव्य में समन्वय की भावना धार्मिक, दार्शनिक और सामाजिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में अभिव्यक्ति हुई है।

निर्गुण और सगुण का समन्वय, ज्ञान और भक्ति का समन्वय, हिन्दू और मुसलमान का समन्वय गार्हस्थ और वैराग्य का समन्वय, लोक और परलोक का समन्वय तथा व्यवहार और अध्यात्म का समन्वय उनके

काव्य का मुख्य उद्देश्य-सा जान पड़ता है।

उनका उपास्य, जिसे वह निर्गुण की संज्ञा देते हैं, वह निर्गुण होते हुए भी उपास्य भाव की दृष्टि से उन समस्त सगुण भावों से युक्त है, जिन्हें हम प्रायः सगुण भक्तों के आराध्य में पाते हैं। सगुण भाव के उपास्य देवों में जिन मानवीय भावों और व्यापारों का समावेश होता है, उन सभी की अभिव्यक्ति इनके उपास्यदेव में भी हुई है। उनकी वाणियों में पौराणिक अवतारवादी ईश्वर के भी रूप वर्णित हुए हैं। इनका वह अवतारवादी ईश्वर वही अनन्त शक्ति विष्णु है, जिसके कमलनाल से ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। कालीय नाग का नाथना, दशमुख रावण का वध करना, समुद्र-मथन द्वारा रत्नों को निकालना तथा मोहिनी अवतार के द्वारा दैत्यों को मुग्ध करना आदि सगुण ब्रह्म के जो पौराणिक रूप पुराण कथाओं में प्रचलित रहे हैं, उनका भी उन्होंने प्रासंगिक उल्लेख किया है। हिरण्यकश्यप और प्रह्लाद की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा है —

"दुरमति हरणाखसु दुराचारी।
प्रभु नाराइणु गरब प्रहारी।
प्रह्लाद उधारे किरपाधारी।"

उस अनन्त और विराट् निर्गुण ब्रह्म का सगुण रूप में वर्णन करते हुए उन्होंने स्वयं कहा है—

"तेरे बंके लोइण दंत रीसाला।
सोहणे नक जिन लमडे वाला।
कंचन काइआ सुइने की ढाला।
सोवन ढाला क्रसन माला।"

तात्पर्य कि उसके नेत्र बांके हैं, दांत सुहावने हैं, नासिका सुन्दर है और केश लम्बे हैं। उसकी काया सोने की है और स्वर्णमय कंठ में वैयजन्ती माला है।

उन्होंने सामाजिक दृष्टिकोण से हिन्दू और मुसलमानों के पारस्परिक मनोमालिन्य को दूर कर उनकी आन्तरिक अच्छाइयों को ग्रहण करके बाह्याडम्बरों को दूर करने की चेष्टा की। वह राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक उथल-पुथल के बीच एक क्रान्तिकारी का रूप धारण कर

उपस्थित हुए। उन्होंने जहां एक ओर काज़ी तथा तुर्क हाकिमों की पूजा करनेवाले मुसलमानों को वास्तविक मुसलमान बनने की शिक्षा देते हुए कहा कि—

"मिहर मसीति सिदकु मुसला
हथु हलालु कुराणु
सरम सुंनति सीलु रोजा होहु मुसलमाणु।"

वहां दूसरी और उन्होंने ब्राह्मणों, योगियों और शाक्तों को भी धर्म का सही मार्ग दिखाने की चेष्टा की। उन्होंने ब्राह्मण से कहा—

"पढ़ि पुस्तक संधिया वादं
सिल पूजसि बगुल समाधं।
मुखि झूठ विमूखन साई ।
त्रैपाल तिहाल विचार ॥"

और, तब सच्चा संन्यासी बनने की विधि बताते हुए कहा—

"सा संकिआसी जो सतिगुर सेवे विचहु आयु गवाए।
छादन भोजन की आस न करई अचितु मिले सो पावे।"

वस्तुत: जो आशा-रहित, फल की इच्छा से रहित होकर परमात्मा के ध्यान में तल्लीन होता है, वही संन्यासी है।

गीता में भी भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को फल की इच्छारहित होकर कर्म करने की ओर प्रवृत्त किया है—

"युक्तः कर्मफलं त्यक्तवा शान्ति माप्नोति नैष्ठिकीमं
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबव्यते ॥"

अर्थात् निष्काम कर्मयोगी कर्मों के फल को परमात्मा को अर्पण करके भगवत्प्राप्ति रूप शान्ति को प्राप्त होता है और सकामी पुरुष फल में आसक्त हुआ कामना द्वारा बंधता है, इसलिए निष्काम कर्मयोग उत्तम है।

हिन्दू और मुसलमानों में समन्वय स्थापित करते हुए उन्होंने जाति-पांति के भेदभाव को भूलकर सच्चे हृदय से सत्य परमात्मा के चिन्तन एवं मनन को ही प्रधान मानते हुए सच्चे धर्म को अपनाने की प्रेरणा प्रदान की। अत. उन्होंने ब्राह्मण, योगी, शाक्त तथा मुल्ला को एक दृष्टि से

वाह्याडम्बरों की निन्दा करते हुए उन्होंने किसी भी कर्म को बुरा नहीं कहा, वलिक उसमें फैली हुई बुराइयों की निन्दा की। उन्होंने इस वात को स्पष्ट कर दिया है कि जो व्यक्ति हिन्दू-मुसलमानों दोनों धर्मों को समान समझता है, वही मर्मज्ञ है—

"राहु दोवै इक जाणे सोई सिझसी।"

मूलतः धर्म एक है। उन्होंने सदियों से उपेक्षित और अवला समझी जानेवाली नारी को समाज में उचित स्थान देकर सम्मान और आदर की दृष्टि से देखा। उन्होंने स्त्रियों के खोए हुए अधिकारों को वापिस दिलाया। आध्यात्मिक साधना और जीवन के अन्य क्षेत्रों में उसकी पुरुषों से समानता स्वीकार की गई।

गुरु नानकदेव ने समाज की प्रगति को और अधिक गति प्रदान करने की चेष्टा की। सामाजिक रूढ़ियों और पाखंडों पर किए गए उनके प्रहार. वहुत उग्र, अक्खड़ और ध्वंसात्मक न होकर एक ऐसी शालीन शैली में है, जिससे उनमें मार्मिक प्रहार की तीव्रता तो आई है, किन्तु अक्खड़-पन नहीं।

भारतीय संस्कृति और सभ्यता का वह सवसे बड़ा सामाजिक कोढ़ जिसने महारोग के रूप में वहुसंख्यक भारतीय जनता को ग्रस लिया, जो अपनी ही मातृभूमि और अपने देश में छुआछूत की धारणा के चलते पद-दलित, उपेक्षित और अछूत माने जाते रहे हैं, गुरु नानकदेव ने एक सच्चे प्रगतिशील महामानव की तरह इस महारोग के खिलाफ विरोध किया। फलतः वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आदि वर्गों में समन्वय की भावना उत्पन्न करने में समर्थ हुए। संत गुरु नानकदेव एक ऐसे क्रान्तिकारी सामाजिक नेता थे, जो तत्कालीन जनता की धार्मिक आस्था और विश्वास एक नये सांचे में ढालकर नये सिरे से मनुष्य को मनुष्य के रूप में कर्मठ, सुयोग्य, आस्थावान और दृढ़ वनाकर एक नये समाज की रचना करने के पक्षपाती थे। इस प्रकार गुरु नानकदेव के काव्य में केवल आध्यात्मिकता ही नहीं, वल्कि जन-मन में राष्ट्रीय भावों को उत्तेजित करने के अंकुर भी विद्यमान हैं। राजनीति और समाजनीति के साथ धर्मनीति का मेल उनकी वाणी की अपनी विशेषता है।

बौद्धों की संगठन भावना, मुसलमानों के भाई-चारे, वैष्णवों की निःस्वार्थ सेवा तथा करुणा, गोरखनाथ और कबीर के जाति-विरोध, इन सभी विचारों का एक अभिनव रूप हम गुरु नानकदेव के विचारों और क्रिया-कलापों में पाते हैं। अतः उनके धर्म में सभी धर्मों के व्यावहारिक पक्ष की झाकी सहज सुलभ है। गुरु नानकदेव का धर्म व्यापक और बहु-मुखी है। उनका दृष्टिकोण अत्यन्त उदार, सहिष्णु और स्नेहपूर्ण है। उनकी दृष्टि दिव्य, वाणी दिव्य और कर्त्तव्य दिव्य हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि भक्ति-भावना से ओत-प्रोत होते हुए भी वे व्यावहारिक ठोस-कर्मी एवं सक्रिय हैं।

गुरु नानक देव ने सभी वर्णों, सभी धर्मों तथा सभी विचार-धाराओं को एक सूत्र में बांधने का सफल प्रयास किया। फलतः उनका काव्य सम-न्वय का काव्य है, उनकी दृष्टि समन्वय की दृष्टि है और उनकी वाणी समन्वय की वाणी है। अतः गुरु नानकदेव को हम एक समन्वयवादी कवि, समन्वयवादी नेता, समन्वयवादी संत एवं समन्वयवादी साधक कह सकते हैं।

● ●

श्रीमती विनीता अग्रवाल

गुरु नानक : जीवन-वृत्त

भारतीय वेदान्त और ईरानी तसव्वुफ़ के मिलने से देश में जो नई जागृति पैदा हुई, नानक उसी जागृति के शलाका पुरुष हैं। इस जागृति ने हिन्दू-मुस्लिम एकता की अनेक नई कड़ियों का सूत्रपात किया। निराकारवादी साधना को प्रोत्साहित किया और कहीं वहुत गहरे सर्व धर्म समन्वय की विराट् मानवतावादी दृष्टि से प्रभाव छायाएं ग्रहण कीं। आचार्य-क्षितिमोहन सेन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'मेडिवल मिस्टिसिज़्म ऑफ इंडिया' में नानक द्वारा प्रवर्तित सिक्ख धर्म की अनेक विलक्षणताओं का उल्लेख किया है। गुरु नानक की उपासना के चारों अंग सान खंड, ज्ञान खंड, करम खंड तथा सच खंड सूफियों के चारों मुलामत शरियत, मारफत, उकवा, और लाहुत से निकले हैं।

गुरु नानक अपनी वेश-भूषा और रहन-सहन में सूफियों जैसे थे और हिन्दू-मुस्लिम एकता को उन्होंने इतने व्यापक स्तर पर पल्लवित किया कि वगदाद में उनकी याद में एक मंदिर आज भी है जिसपर तुर्की भाषा में शिलालेख मौजूद है और गुरु के सैय्यद वंशी चेले उस मन्दिर की रक्षा करते हैं।

आज जव हम अपने चारों ओर ज़हर-भरे शरीर में से उभरते हुए जातीय, भाषाई, मज़हवी नफरत के फोड़ों का भीषण अमानवीय परिणाम भोग रहे हैं, आज जव साम्प्रदायिकता के अन्धे गलियारे में इस भारतीय उपमहाद्वीप के युवजन दिग्भ्रमित होकर भटक रहे हैं तव सांत्वना के स्वर गुरु नानक के संदेशों की स्मृति से ही प्राप्त होते हैं।

चौदह सौ उनहत्तर की पुण्य तिथि को लाहौर से चालीस मील दूर तलवंडी नामक गांव में नानक का जन्म वेदी गोत्र के खत्री [illegible] के यहां

हुआ था। बालक नानक की प्रतिभा विलक्षण थी। उनका कौतूहल पांच वर्ष की आयु में ही जीवन की सार्थकता एवं उसके उद्देश्य पर प्रश्न पूछने लगा था। पारम्परिक रूप से नानक ने अपनी शिक्षा पूर्ण की। एक हिन्दू पंडित से उन्होंने भाषा और गणित की शिक्षा तथा एक मुसलमान मुल्ला से उन्होंने अरबी और फारसी सीखी। बचपन में ही नानक एकांत प्रिय थे तथा साधुओं और फकीरों से वाद-विवाद भी किया करते। १२ वर्ष की उम्र में ही उनका विवाह हो गया और तदुपरान्त उन्हें दो पुत्रों की प्राप्ति भी हुई।

कुछ ही दिनों के बाद नानक ने आध्यात्मिक लक्ष्य की तलाश में महाप्रयाण किया। कुछ दिनों तक वे अपनी बड़ी बहन नानकी के यहां सुल्तानपुर रहे और वहां के नवाब के यहां मोदी का काम करने लगे। सुल्तानपुर में एक मुसलमान गवैय्या मरदाना उनके साथ हो लिए और दोनों भजन-कीर्तन आयोजित करने लगे। पदों की रचना नानक करते और उन्हें संगीत से मरदाना संवारते।

जिन दिनों नानक सुल्तानपुर के नवाब के यहां मोदी का काम करते थे, वे नवाब के बड़े विश्वासपात्र हो गए और धीरे-धीरे नवाब का विश्वास नानक पर इतना दृढ़ हो गया कि उन्होंने मोदी खाने का हिसाब-किताब पूरी तरह इनपर ही छोड़ दिया। दरबार के कुचक्री तत्वों को नानक पर नवाब की इतनी मेहरबानी न भायी और उन्होंने कान भरने शुरू किए। वे कहने लगे कि हुजूर नानक तो मोदीखाना लुटा रहा है। जो ऐरा-गैरा भिखमंगा पहुंचता है, उसे ही झोली-भर अनाज दे डालता है। शिकायत करनेवालों को सबक सिखलाने के लिए यानि अपना ही सन्देह दूर करने के लिए नवाब ने एक दिन मोदीखाने के हिसाब-किताब की जांच तुरन्त करने का हुक्म दिया। तुरन्त घोड़े दौड़ाए गए और पूरा मोदीखाना फौजी सिपाहियों ने घेर लिया। मोदीखाने के हिसाब-किताब की गहराई में छानबीन की गई और पाया गया कि हिसाब-किताब बिलकुल ठीक है। नवाब बहुत खुश हुआ और उसके मुंह से बेसाख्ता निकला—"अरे मैंने सन्त पर शक किया!" घोड़े फिर दौड़ाए गए और नानक को राजकीय सम्मान के साथ राज दरबार में लाने का हुक्म हुआ। अगवानी

सम्मोहित रहे। लेकिन, जब नानक की तलाश तक पहुंचे तो पाया कि नानक वहां नहीं थे।

नानक को तब तक रहस्यानुभूति हो गई थी। कुल उन्नीस वर्ष की उम्र में एक सुबह जब वे वई नामक नदी में स्नानार्थ गए हुए थे, तो जल में काफी देर तक बाहर नहीं निकले। उनके साथियों को हैरानी हुई कि क्या नानक डूब गए? किंवदन्ती है कि तीन दिन और रात तक नानक अन्तर्धान रहे और चौथे दिन जब प्रकट हुए तो वे नवाब के मोदी नानक नहीं थे, बल्कि हिन्दुओं के गुरु और मुसलमानों के पीर गुरु नानकशाह फकीर थे।

नानक ने सत्य को जिस रूप में स्वयं देखा, उसी रूप में बिना लाग-लपेट के दूसरों को भी दिखाया। उन्होंने गहन और सुदूर यात्राएं कीं और इस क्रम में महान् हिन्दू तीर्थ स्थानों और प्रसिद्ध मुस्लिम तथा सूफी धर्म-स्थलों की भी परिक्रमा की। नानक की सुदूर यात्राएं चार कही जाती हैं तथा इन्हें 'उदासियों' की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। इन यात्राओं में असम से लेकर हरिद्वार, तामिलनाडु से लेकर श्रीलंका तथा पश्चिम में मक्का-मदीना और बसरा से लेकर बगदाद तक का अन्तर्महाद्वीपीय क्षेत्र फैला हुआ है। संसार के बहुत थोड़े धर्म प्रचारक ऐसे हुए हैं, जिन्होंने अपने उद्देश्य के क्रम में इतना व्यापक क्षेत्रफल नापा हो। इन यात्राओं के क्रम में अनेक दिलचस्प घटनाएं घटीं।

जीवनीकारों ने लिखा है कि यात्रा करते हुए गुरु एक बार ऐसे गांव में पहुंचे, जहां उनका बड़ा निरादर हुआ। गुरु के माथे पर शिकन तक नहीं आई। उस गांव से चलते हुए उन्होंने गांववालों को आशीर्वाद दिया कि आप खूब फलो-फूलो, और इतने समर्थ हो जाओ कि किसी भी चीज के लिए गांव से बाहर न जाना पड़े।

गुरु उस गांव से आगे बढ़े और दूसरे एक ऐसे गांव में पहुंचे जहां उनका भव्य स्वागत हुआ। उस गांव के लोग बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति के थे और कर्मठ थे। उस गांव से चलते समय गुरु ने आशीर्वाद दिया : दुनिया इस गांव से बहुत बड़ी है, यहीं के मत होकर रह जाओ, सब जगह जाओ।

गुरु के शिष्य मरदाना को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे गुरु से पूछ बैठे—"महाराज, ये कैसी बात, जहा आपका निरादर हुआ, वहा तो आपने गाववालों को वहीं अडे रहने की सलाह दी और जहां आपका इतना आदर-सत्कार हुआ, वहां आपने गाववालों को गाव से बाहर जाने का आशीर्वाद दे डाला। गुरु मुस्कराए और बोले—"पहले गाववाले अपना ज़हर अपने तक ही सीमित रखें तो ससार पर उपकार होगा।-दूसरे गाववाले सारे संसार को अपने अमृत से नहलाएं'''यही मेरा आशीर्वाद है।"

गुरु भौतिकता के प्रबल विरोधी थे। यहां मुझे एक और कथा स्मरण आती है। गुरु ने जिन दिनों उपदेश-कर्म प्रारम्भ किया, बड़ी संख्या में भक्तजन इकट्ठे होकर चढ़ावे देने लगे। एक बार गुरु जब ध्यान-मग्न होकर प्रवचन दे रहे थे, तो गद्गद भक्तों ने चढ़ावों का ढेर लगा दिया। गुरु के शिष्य मरदाना के मन में कीमती किमरवाब और चमचमाती अशर्फियों को देखकर मोह जागा और जब गुरु उठकर चले तो वह भी पीछे-पीछे अपने कन्धों पर कीमती किमरवाबों और अशर्फियों का गट्ठर लादे चले। गुरु के साथ चलते-चलते लेकिन मरदाना को लगा कि जैसे इनकी पीठ के गट्ठर का बोझ लगातार बढ़ता जा रहा है। वह घबराकर गुरु से बोला—"गुरु, दबा जा रहा हूं।" गुरु मुस्कराए, बोले "मरदानिये, दबानेवाली चीज़ को फेंक दे।" बड़ी ही अनिच्छापूर्वक मरदाना ने कीमती कपड़े तथा अन्य बहुमूल्य चीजों को फेंक दिया, लेकिन अशर्फियां उनसे किसी तरह भी न फेंकी गईं। अशर्फियों की पोटली उन्होंने अपने अंगरखे के नीचे दबा दी। चलते रहे गुरु के साथ। जंगल आया। सहसा मरदाना को लगा कि गुरु तथा उनके बीच की दूरी बढ़ती जा रही है और उन्हें क्रमश: गहरे होते हुए अन्धेरे तथा तेज हुई जंगली चीखों ने डर सताने लगा। वे चिल्लाए, "गुरु मुझे छोड़कर न जाओ, मुझे डर लगता है।" गुरु हंसे, बोले "मरदानिये, डरवाली चीज़ फेंक दे।"

लम्बी-चौड़ी यात्राओं से थके गुरु अपने बसाये गांव करतारपुर में जब मृत्यु-शैया पर लेटे थे, तो उन्होंने जो अन्तिम रचनाएं दी हैं, उनमें स्फुट निर्झर के समान स्वयं अनुभूत सत्य है—काव्य-सौन्दर्य की बारीकी

किया, परन्तु उसके माध्यम से उसके गुणों की व्याख्या की। जनेऊ ऐसे गुणों से ओत-प्रोत हो जो हमारे चरित्र को बल दे सके। उन्होंने कहा कि जनेऊ के धागे की कपास दया होनी चाहिए उसका सूत संतोष और उसकी गांठें सत्य की होनी चाहिए। वह पांडे को कहते हैं कि इन तत्त्वों का बना हुआ जनेऊ यदि उसके पास है, तो मुझे भी पहना दे—

"दया कपाह, संतोष सूत, जत गंढी सति वट,
इह जनेऊ जीयां का, हई ता पंधि घत्त।"

इसी तरह उन्होंने मूर्ति-पूजा तथा पुजारियों के तिलक लगाने पर व्यंग्य किया है—

"पढ़ पुस्तक संध्या बादं, सिल पूजं बगल समाधं।
गल माल तिलक ललाटं, टोए धोती वस्त्र कपाटं।"

वास्तव में वे इन चीजों के विरुद्ध नहीं थे, परन्तु इनमें किसी सच्चाई का अभाव देखकर उनके विरुद्ध हो गए और जनता को इन भूल भुलैयों से बाहर निकालने का प्रयत्न किया। श्राद्ध की प्रथा का भी गुरुजी ने कड़े शब्दों में खंडन किया है, क्योंकि पंडों का यह विचार था कि श्राद्धों में दिया गया दान मृत-आत्मा को लगता है, परन्तु यह एक पाखंड से बढ़कर और क्या हो सकता है। भला मरे हुए के नाम दिया हुआ दान उस तक कैसे पहुंच सकता है? गुरु नानकजी ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि आगे तो केवल वह चीज़ ही जाएगी, जिसे स्वयं अपने हाथों से दान किया गया हो और वह अपने श्रम की कमाई का हो—

"अग्गै वस्त सिवाणीए, पितरां चोर करोई।
नानक अग्गै सो मिलै, जे खटि, घालि देई॥"

उस समय कुछ लोग शरीर की शुचिता को ही सब कुछ समझते थे, चाहे उनके मन में कितनी ही मैल क्यों न हो। गुरु नानक ने शारीरिक शुचिता के स्थान पर मन की शुद्धि पर जोर दिया और कहा कि केवल वे पुरुष ही शुद्ध हैं, जिनके मन में भगवान् का निवास है—

"सुच्चे एव न आखीए, पहन जे पिंडा धोई।
सुच्चे सोई नानका, जिन मन वसिया सोई॥"

उन्होंने सूतक की प्रथा का भी खंडन किया। ये बातें तत्कालीन बाह्या-

डम्बरों और मिथ्याचारों के प्रचारकों को अच्छी नहीं लगती थी, परन्तु गुरु नानक को उनकी परवाह नहीं थी। उन्होंने प्राचीन परिपाटियों का खंडन किया और जीने का नया मार्ग दिखाया। सूतक के बारे में भी उनका कथन है—

"जेकर सूतक मन्नीए, सब ते सूतक होई।
गोहे अते लकड़ी, अन्दर कीड़ा होई॥"

और, फिर सूतक कहा है और उसका स्वरूप क्या है, इसका स्पष्टीकरण गुरु नानकजी ने किया है—

"मन का सूतक लोभ है, जिह्वा सूतक कूड़।
अखीं सूतक देखणा, पर त्रिया धन रूप॥"

उस समय समाज में स्त्री को सम्माननीय स्थान प्राप्त नहीं था। सिद्धों, जोगियों, नाथों और कई एक सन्तों ने स्त्री को माया और भगवद् प्राप्ति में बाधक बताया और उससे दूर रहने का उपदेश दिया। इससे बढ़कर नारी का अपमान क्या हो सकता है जो पुरुष के साथ कन्धे-से-कन्धा मिलाकर चलती है! क्या वह त्याज्य है? और, जिस नारी ने हमें जन्म दिया, बड़े-बड़े पीर, महात्मा, सन्त, जिसने पैदा किए, उसे बुरा कहना क्या ठीक है? यह प्रश्न गुरु नानक के मन में आया और उन्होंने नारी को उच्च स्थान दिया—

"भंडि जमिए, भंडि निभिए, भंडि मगणि, व्याह
भंडि होवे दोस्ती, भंडि चलै राह।
भंडि मुआ, भंडि भालिए, भंडि होवे बन्धान,
तिस क्यों मंदा आखीए, जित जन्मे राजान।"

अब हमें यह देखना है कि गुरु नानक ने कौन-सा मार्ग बताया, जिसपर चलकर हम उस अकाल अगोचर के साथ सामीप्य प्राप्त कर सकते हैं। पीछे उनके खंडनात्मक पक्ष पर विचार हो चुका है। अब गुरुजी के भक्ति-सिद्धांत पर विचार किया जाएगा। गुरुजी की समस्त वाणी में 'नाम सिमरण' बार-बार आता है और उन्होंने नाम की महत्ता पर बहुत जोर दिया है। वह इस संसार में ही मुक्ति प्राप्त करने का उपदेश देते हैं। घर में रहकर ही हमारा व्यवहार, हमारा आचार ऐसा हो कि हम अपने लक्ष्य

"नानक फिक्का बोलिए, तन मन फिक्का होए ।"

और, अन्त में नाम सिद्धांत का विवेचन करते हैं। नाम जपने मे ही हम उस अगोचर के साथ तादात्म्य स्थापित कर सकते हैं। उठते-बैठते, सोते-जागते, खाते-पीते हमें उस प्रभु का नाम स्मरण करते रहना चाहिए, जिसने हमें इस संसार मे जन्म दिया। जो नाम स्मरण नही करते, उनका तो जीना ही व्यर्थ है। उसका नाम लेकर ही भव सागर पार जाया जा सकता है और नरक से बच सकते हैं —

"नाओं तेरा निरंकार है, नाओं लइए नरक न जाइऐ।
नाओं लइऐ जई तर दा।।"

और, फिर जो नाम नही जपते, उनकी क्या स्थिति है—

"जित मुख नाम न उचरि, बिन नावें रस खाई।
नानक इवै जाणीऐ, तित मुख थुका पाई।।"

गुरुजी किसी का शोपण नही चाहते। वे कहते हैं कि मनुष्य को स्वय परिश्रम करके रोटी कमानी चाहिए और अपने परिश्रम की कमाई मे से कुछ दान भी देना चाहिए। मनुष्य को दूसरो की कमाई पर निर्भर न रहना चाहिए।

"घाली खाई कुछ हत्थो देही।
नानक राह पछाणें सोई।।"

ी क्षणभगुरता को भी वे जानते हैं और कहते हैं कि यह रूप दिनो का मेहमान है। मृत्यु के बाद तो अच्छे-बुरे कर्म

—

ल्पड रूप सुहादणा, छडि दुनिया अन्दर जावणा।
मदा चगा आपणा, आपे ही कीना पावणा।।"

में, हम इतना ही कह सकते हैं कि गुरु नानक ऐसे समय में , जब कि हमारे धर्म की रक्षा के लिए ऐसे व्यक्तित्व की आवश्य-
।

टी० एल० वास्वानी ने गुरुजी के विषय मे ठीक ही कहा है कि —
uru Nanak appeared at a time, when India was

भी सर्व विशिष्ट होता है। बिना ऐसा हुए गड्डलिका प्रवाह की तरह चलने वाली भीड़ का नियंत्रण संभव ही नहीं है।

लोक सामान्य की दृष्टि से नानक ने पिता की आज्ञा मान ली—दुकानदारी करने लगे। एक दिन चालीस रुपये लेकर नमक खरीदने चले। कुछ दूर जाने पर उन्हें फकीरों का झुण्ड दिखाई पड़ा। फकीर की दुआओं से जन्म-धारण करनेवाले नानक पुनः लोक विशिष्ट भूमिका में चले आए। नमक के रुपये फकीरों में भोजन के लिए बांट दिए। खाली हाथ लौटने पर पिता ने जवाब-तलब किया। उत्तर मिला—"पिताजी, मैंने वह चीज खरीदी है, जिसका मूल्य सामान्य क्रय-विक्रय से कहीं अधिक है।" इसपर पिता ने पीटना शुरू किया, तो भागकर पेड़ पर जा छिपे।

पिता कालू के पास नानक को बांधने का अन्तिम ब्रह्मास्त्र बच रहा था। इसी ब्रह्मास्त्र का प्रयोग राजा सिद्धार्थ ने अपने लोकविशिष्ट पुत्र भगवान् महावीर के लिए और राजा शुद्धोदन ने सिद्धार्थ गौतम के लिए किया था। फिर भी, 'महाभिनिष्क्रमण' नहीं रुका। सोलह वर्ष की उम्र में नानक का विवाह, गुरुदासपुर के बताला के अन्तर्गत वरकोका के खत्रिय-वंशीय मूला की वीर कन्या सुलक्ष्मी के साथ कर दिया गया। नानक की एक बहन थी। नाम था नानकी, जिसका विवाह जयराम नामक एक हिंदू के साथ हुआ था। जयराम, बहलोल लोदी के आत्मीय नवाब दौलत खां लोदी के अधीन कार्य करते थे। जयराम की प्रत्यासत्ति से ही नानक नवाब की अतिथि-शाला के रक्षक नियुक्त हुए। सरकारी नौकरी में भी नानक की लोक विशिष्टता मन्द नहीं पड़ी। लगे दिल खोलकर दान करने, 'सरकारी माल, दरियाव में डाल।' चन्द दिनों में ही राजकीय अतिथिशाला की तमाम चीजें चुक गईं। नीरस राजकीय अनुशासन की नृशंसता नानक के हृदय को चीरकर रख देती थी। सरकारी सेवा की परतंत्रता में जकड़ी उनकी अन्तरात्मा कराह उठी। अन्ततः उन्होंने राजसेवा से अपने को अलग कर लिया।

अपनी उम्र के बत्तीसवें वर्ष पार करते-करते नानक [illegible] पिता बन गए। एक पुत्र का नाम था श्रीचन्द [illegible] अब पूरे गृहस्थ हो चुके थे। ७०

निर्मित जाल मे चक्कर काटने लगे। किन्तु, युगपुरुष मायाजाल से कभी प्रभावित नही होता। नानक अपनी गृहस्थी मे, जल मे कमल की तरह निर्लिप्त रहे। गृहस्थी का चक्र चलता रहा और नानक ईश्वर की प्रशस्ति के पद रचते रहे।

नानक की लोकविशिष्टता से अभिभूत जन-सामान्य के चार प्रतिनिधि मरदाना, लहना, बाला और रामदास उनके अभिन्न सहचर बन गए। लहना तो आगे चलकर नानक का उत्तराधिकारी ही हो गया। मरदाना एक कुशल वीणावादक था। वह जब नानक रचित ईश्वर के पद वीणा पर गाता, सुनने वाले मधुमती भूमिका मे पहुच जाते। वीणा की स्वर लहरी नस-नस मे मृदुस्पर्श ईश्वरानुभूति की एक अद्भुत अनजानी-सी झुरझुरी भर देती। नानक तो लोक-कल्याण के लिए आए थे। गृहस्थी की एकरस परिधि में अब तक घूमते रहते। उन्हे तो परिधि के सीमित व्यामोह से मुक्त रहकर केन्द्रविन्दु की विराट् सत्ता तक पहुचना था। अपने धर्म के प्रचार के निमित्त उन्होने सम्पूर्ण भारत का भ्रमण करना प्रारंभ किया। उनकी आध्यात्मिकता का सौरभ दिग्दिगन्त मे फैल गया। अब नानक केवल नानक ही नही रहे। गुरु नानक हो गए। गुरु नानक ने भारत के अतिरिक्त फारस, काबुल, मक्का तथा एशिया के अन्यान्य स्थानों को अपनी धर्मयात्रा से पुण्यास्पदता प्रदान की। भ्रमण के क्रम में वे गुजरानवाला के अन्तर्गत अमनाबाद के लालू नामक सूत्रधार के साथ कुछ दिनों तक रहे। घर लौटने पर गुरु नानक को गृहस्थ जीवन मे फिर से रम जाने के चतुर्दिक आग्रह का सामना करना पडा। परन्तु, अब तो वे गृहस्थ जीवन से ऊपर उठ चुके थे। उनकी आत्मा लोक-सामान्य से लोक विशिष्ट हो चुकी थी। 'भूमा वै सुखम्' नाल्पे सुखमस्ति', की भावना से ओतप्रोत गुरु नानक ने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भावात्मक एकत्व से अनुप्राणित होकर कहा—

...। मेरी मां है, धैर्य मेरे पिता और सत्य चाचा। इनको ही सहा-
...शील लिया है। सुशीलता मेरी सहचरी है, प्रेम
मेरी कन्या है। इनके सहवास से मैं सुखपूर्वक

उसकी कटुता को भोगकर भी मलिन नहीं पड़ता, बल्कि निर्विकार भाव से जहर को पचाकर अमृत बांटने में उसे प्रसन्नता होती है। यही उसकी महिमा है। गुरु नानक मृत्युंजय हो चुके थे। तत्कालीन दिल्लीपति इब्राहीम लोदी को उनके उपदेशों में इस्लाम विरोधी बू मिलने लगी। वह क्रुद्ध हो उठा और गुरु नानक को पकड़कर दिल्ली बुलवाया और कैद कर लिया। सात महीने बाद, बाबर के भारत पर आक्रमण (सन् १५२६ ई०) के फलस्वरूप इब्राहीम के हारने पर वे कारामुक्त हो गए। कारामुक्ति के बाद गुरु नानक सिन्धु देश के पर्यटन पर निकल गए। वहां उन्हें बहराम नामक एक मुसलमान से, अपने सिद्धांत के धार्मिक और सामाजिक पहलू को समझाने के क्रम में अनेक तर्क-वितर्क करने पड़े। गुरु नानक ने एक नहीं, अनेक तुर्क राजाओं को अपनी एकेश्वरवादिता और समता के सिद्धांत से प्रभावित किया। फलतः, अनेक तुर्क नृपतियों के उन्मार्गगामी हृदय परिवर्तित होकर सतपथ की ओर प्रवृत्त हुए। बाबर भी गुरु नानक के उपदेशों से प्रभावित था, हालांकि उसने अपनी पुस्तक 'बाबरनामा' में, इस बात को अधिक महत्त्व देने में कृपणता के कारण, उसका उल्लेख ही नहीं किया।

गुरु नानक ने अपना शेष जीवन इरावती नदी के तट पर बिताया। यह स्थान आज 'डेरा बाबा नानक' नाम से प्रसिद्ध है। उनके जन्मगृह को 'नानकाना' की संज्ञा मिली और बचपन में वे जिस तालाब में खेलते थे, उसे 'बालकेरा' कहकर पुकारा गया। पिता के द्वारा पिटने के भय से नानक जिस पेड़ पर जा छिपे थे, उसकी प्रतिष्ठा 'मालसाहब' के नाम से की गई और जिस तरह उन्होंने चावल-दाल की दुकान खोली थी, उसे 'हाट साहब' नाम से घोषित किया गया और जहां उन्होंने पर्वतखंड को लुढ़कने से रोका था, वहां का स्थान 'पंजा साहब' कहलाता है। अमनाबाद के कंकड़-पत्थर भरे एक शयन स्थल का नाम 'रोरिसाहब' हो गया, तो सुल्तानपुर की विशाखा नदी के तटवर्ती पेड़ के नीचे नानकजी के बैठने के कारण से उसे 'बाबा का पेड़' कहा जाने लगा और कहना न होगा कि गुरु नानक के चरण जिधर भी पड़े, उसे तीर्थराज की समकक्षता मिलती गई और उनकी ऋषियों की किंवदंतियां कंठ-कंठ में मुखर होती गईं।

सूखे अमृतसर के पानी से लबालब होने की बात उनके ऋद्धिगत चमत्कार की विशिष्टता ही है।

सन् १५३८ ई० में लगभग सत्तर-इकहत्तर वर्ष की उम्र में गुरु नानक का तिरोभाव हो गया। वे हिन्दू और मुसलमान दोनों के इतने प्रिय थे कि उनके पार्थिव शरीर को जलाने या गाड़ने के विषय में दोनों में विवाद पड़ गया। अन्त में, सर्वमत से मृत क्लेवर को बहा देने का निश्चय हुआ। परन्तु, चमत्कार की बात तो यह हुई कि कफन हटाने पर मृत शरीर अन्तर्हित पाया गया। अन्ततोगत्वा, कफन को दो टुकड़ों में फाड़ कर बांट दिया गया। हिन्दुओं ने अपने हिस्से को जलाया और मुसलमानों ने कब्र में दफनाया। गुरु नानक के दस इतिहास प्रसिद्ध उत्तराधिकारी 'गुरु' नाम से ही अभिहित हुए। दसवें गुरु गोविन्दसिंह के बाद उत्तराधिकार की परम्परा बन्द कर दी गई और उनके धर्मग्रन्थ 'गुरु ग्रन्थ साहब' को ही सदा के लिए उत्तराधिकारी मानने की परिपाटी अन्तिम गुरु गोविन्द सिंह ने चलाई।

जैसा पहले कहा गया है, गुरु नानक विशुद्ध एकेश्वरवादी थे। सम्प्रदाय, जाति और धर्म की दीवार उन्होंने कभी नहीं खड़ी की। वे कुरान और पुराण—दोनों को समान आदर की दृष्टि से देखते थे। भ्रातृत्व भाव और चिरशान्ति का विस्तार, यही उनका जीवनोद्देश्य था। वे अपने सम्पूर्ण जीवन-काल में अपना 'सन्त' नाम सार्थक करते हुए एक अविराम विद्रोह भावना के अवधूत बने रहे। आज राष्ट्रीय एकता के परिप्रेक्ष्य में गुरु नानक की समतावादी जीवन-धारा का अनुस्मरण स्वयं अपनी अनिवार्य उपयोगिता रखता है।

● ०

श्री राम जी मिश्र 'मनोहर'

आदर्श जीवन के धनी गुरु नानक

आदर्श जीवन के धनी गुरु नानकदेव जी महाराज का भारतीय धर्म-संस्थापकों, समाज-सुधारकों एवं राष्ट्र-निर्माताओं में अत्यन्त प्रमुख स्थान है। मध्य युग में जिस समय उनका आविर्भाव हुआ, उस समय हमारे देश भारत और सारी दुनिया में घटाटोप अन्धकार छाया हुआ था। मिथ्या धार्मिक-सामाजिक आडम्बरों और प्रशासन की प्रपीड़नाओं से जन-जीवन कराह रहा था। यूं उनके समय में तथा उनके कुछ पहले ही देश में अनेक सन्त और साधक हुए जो लोगों की सुषुप्त धार्मिक भावना को जगाने तथा सामाजिक रूढ़ियों को दूर करने के लिए सतत सचेष्ट थे, परन्तु उनमें लोक-संग्रह की भावना का सर्वथा अभाव था। अलग-अलग धार्मिक विश्वासों और सम्प्रदायों के नेता अपने-अपने ढंग से अलग-अलग अपने अनुयायियों में अलख जगाने की कोशिश कर रहे थे। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच मिथ्या धार्मिक विश्वासों और आचारों को लेकर भयंकर विवाद छिड़ा था। उस समय का धर्म और शासन लोक मंगल का साधन न बन कर जन विग्रह और संहार का कारण बना हुआ था। गुरु नानक ने ऐसे कलिकाल में इस भूतल पर आकर लोगों के बीच समन्वय कायम कर उनमें भ्रातृत्व एवं विश्वबन्धुत्व की अद्भुत प्रेरणा पैदा की।

दरअसल गुरु नानक के सन्देश ने लोगों को भाईचारा, प्रेम और जीवन को सुखमय बनाने की दिशा में प्रकाश की एक नई किरण दिखाई पड़ी और तत्कालीन शासन के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाने की अद्भुत शक्ति प्राप्त हुई। इसीलिए महाकवि भाई गुरदासजी ने कहा—

"सति गुरु नानक प्रगटिया,
मिटी धुंध जग चानण होआ।

जिउं कर सूरज निकलिया,
तारे छपे अन्धेर पलोआ।"

गुरु नानकदेवजी का जन्म पंजाब के तलवंडी ग्राम के एक साधारण कृषक परिवार में हुआ, जो लाहौर शहर से करीब ३० मील दक्षिण पश्चिम में है और इस समय पाकिस्तान में है। अब यह नानकाना साहब के नाम से विश्वविख्यात तीर्थ स्थान है।

"होनहार बिरवान के होत चीकने पात' की लोकोक्ति के अनुसार लोगों को बालक नानक में दिव्य-ज्योति के दर्शन होने लगे थे। उनके जन्म के बाद ही उनके पिता कालूजी को उनके पारिवारिक ज्योतिषी ने यह भविष्यवाणी कर दी थी कि यह नवजात शिशु कोई सामान्य प्राणी नहीं' वरन् एक महान् युग पुरुष और मार्ग-द्रष्टा होगा। ज्योतिषी की भविष्यवाणी सच हुई और कभी के बालक नानक ने गुरु नानक बनकर युग की धारा ही बदल दी।

बचपन से ही इनके आचार-विचार से इनकी उदारता और प्राणी मात्र के प्रति इनके प्रेम की भावना टपकने लगी थी। इनके माता-पिता ने इन्हें सामाजिक जीवन में, बांधने की अनेक चेष्टाएं कीं। पर, उनके सभी प्रयास असफल हुए। इनके पिता ने इन्हें कुछ पैसे देकर बाजार रोजगार करने भेजा, तो ये सारे पैसे साधु-संन्यासियों के सेवा-सत्कार में खर्च कर 'सच्चा सौदा' कर घर वापस लौट आए। घरवालों ने जब पशु-पक्षियों से खेत में खड़ी फसल की रखवाली करने को भेजा, तो फसल की रक्षा करने के बजाय वे पक्षियों को अपने खेतों में उतरते देख उनके स्वागतार्थ यह गीत गाने लगे

"राम की चिड़िया राम का खेत,
खा लो चिड़िया भर-भर पेट।"

बाद में लोगों के बीच सच्चे ईश्वरीय सन्देश का प्रचार करने के लिए उन्होंने अपने दो अन्य शिष्य भाई मर्दाना और भाई बाला के साथ सम्पूर्ण देश और विदेश की चार-चार बार यात्राएं कीं। इनमें एक हिन्दू थे और दूसरे मुसलमान। इनके साथ उन्होंने विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों के प्रमुख तीर्थों का भी भ्रमण किया तथा अन्त साधकों के साथ सत्संग भी

किया। कुछ ही समय के अन्दर भारतीय जन-मानस पर वे इस प्रकार छा गए कि कोटि वाणियों से यह स्वर फूट पड़ा—

"बाबा नानक शाह फकीर,
हिन्दू का गुरु मुसलमान का पीर।"

मध्य युग के सन्तों में गुरु नानक की विशिष्ट और निराली धर्म परम्परा है। वे उस धर्म के संस्थापक हैं, जिसके आन्तरिक पक्ष में विवेक, वैराग्य, भक्ति, ज्ञान, योग, तितिक्षा और आत्मसमर्पण की भावना निहित है और बाह्य पक्ष में सदाचार, संयम, एकता, भ्रातृभाव आदि पिरोए हुए हैं। वे मध्य युग के मौलिक चिन्तक, क्रान्तिकारी सुधारक, अद्वितीय युग-निर्माता, महान् देशभक्त, दीन-दुखियों के परम हितैषी तथा दूरदर्शी राष्ट्र-निर्माता थे।

उनकी दृष्टि बड़ी व्यापक और विश्वजनीन थी। उन्होंने मात्र अपने देश और अपने धर्मानुयायियों के ही कल्याण की कामना नहीं की, बल्कि सारी दुनिया को कष्ट से उबारने के लिए ईश्वर से उन्होंने बड़े मार्मिक ढंग से प्रार्थना भी की···

"जगत जदा रख ले, अपनी किरपा धार।
जित दुआरे उबरे, तिन लियो उबार॥"

गुरु नानक ने अपना सम्पूर्ण जीवन ही भटकती हुई मानवता को *ईश्वर-भक्ति, मानव-प्रेम, एकता और समता का मार्ग प्रदर्शित करने में* लगा दिया। जाति और वर्ण हमारी एकता के मार्ग में शूल बनकर चुभा हुआ था। इस मिथ्या अभिमान से मुक्ति पाने के लिए उन्होंने निम्न शब्दों में लोगों को आह्वान किया—

"जाणहु जाति न पूछहु जाती
आगे जाती न है।"

वे क्षत्रिय कुल में पैदा हुए थे और भगवान रामचन्द्रजी के वंशधर थे। परन्तु, उनमें जातीयता की भावना छू भी नहीं गई थी। जातीयता और ऊंच-नीच की भावना से पीड़ित समाज के कारण भारत का राष्ट्रीय एवं जातीय जीवन बिखर गया था और उसके फिर समवेत होने का कोई लक्षण नहीं दिखाई पड़ रहा था। उन्होंने उसे दूर करने के लिए अथक

प्रयास किया। उस समय नीच समझी जाने वाली जातियों की ओर इंगित करते हुए उन्होंने लोगों से खुले शब्दों में कहा था—

"जित्थे नींच सम्हालियनि
नानक तिथै तेरी बखशीश।"

और, जब किसी ने उन्हें उनकी उच्च जाति का एहसास कराते हुए उनसे हरिजनों और तथाकथित पिछड़ी जातियों से जिन्हें की उस समय नीच जाति की संज्ञा दी जाती थी, न मिलने-जुलने की ओर संकेत किया, तो उन्होंने पुरज़ोर शब्दों में कहा कि···

"नीचा अन्दर नीच जाति,
नीचूहं अति नीच।
नानक तिनके संग साथ
वडियां सूं क्या रीस।"

आज से पांच शताब्दी पूर्व गुरु नानकदेवजी ने यदि तत्कालीन विदेशी शासकों और उनके अत्याचारों के विरुद्ध आवाज नहीं उठाई होती, तो महात्मा गांधी के नेतृत्व में जो आजादी हमने आज हासिल की है, शायद उसके लिए उचित पृष्ठभूमि न तैयार हो पाती। उन्होंने जनता की निराशावादिता को दूर कर उसमें विश्वास और पौरुष की भावना जागृत की। गीता के इस वाक्य 'युवताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु' को उन्होंने व्यावहारिक रूप दिया। उनकी इन्हीं शिक्षाओं का यह परिणाम था कि उनके अनुयायियों ने राष्ट्र-निर्माण में अनुपम योगदान किया। सुप्रसिद्ध इतिहासकार, कनिघम ने ठीक ही कहा है: "गुरु नानक ने सुधार के सच्चे सिद्धान्त का सूक्ष्मता से साक्षात्कार किया और व्यापक आधार पर अपने धर्म की नींव डाली, जिसके द्वारा गुरु गोविन्दसिंहजी ने अपने देशवासियों का मस्तिष्क नवीन राष्ट्रीयता से उत्तेजित कर दिया।"

गुरु नानक ने देशवासियों में राष्ट्रीयता का स्वर भरने के लिए तत्कालीन शासकों के विरुद्ध विद्रोह की जो आवाज उठाई, वह इन शब्दों से स्पष्ट है···

"राजे सिंह मुकद्दम कुत्ते, जाई जगाईन बैठ सुत्ते,
चाकर नहदा पाइन्हि धाउ, रत पितु कुतिहों चटि जाहु,
जियें जी मे होमी सार, नकी बढी लाइतबार।"

अर्थात्, इस समय राजागण सिंह के समान हिंसक और उनके अमले या चौधरी कुत्ते के समान चटोर और लालची हो गए हैं। वो सोए पड़े हुए शांतिप्रिय प्रजा को उठाकर उसके मास का भक्षण कर रहे हैं। राजाओं के नौकर अपने नुकीले नाखूनों से प्रजा के शरीर पर आघात कर घाव करते हैं और उसके शरीर से जो खून निकलता है, वे अपने मुकद्दम रूपी कुत्तों के द्वारा उसे चाट जाते हैं। जिस स्थान पर प्राणियों के कर्मों की छान-बीन होगी, वहा इन अविश्वासियों की नाक काट ली जाएगी।

तत्कालीन राजनैतिक परिस्थिति का आभास गुरु नानक के इन शब्दो में स्पष्ट हो जाता है :—

"कलि होई कुत्ते मुही खाजु होआ मुरदार।
कुडु बोलि भउकण चूका धरम विचार॥
जिन जिवरिया पति नही मुइआ मेदी सोई।
लिखिआ होवे नानक करता करे सु होई॥"

भावार्थ यह है कि कलियुग में लोग कुत्ते के मुह वाले हो गए हैं और उनकी खाद्य वस्तु मुर्दे का मास हो गई हैं। यानी कलियुग में लोग कुत्ते के समान लालची हो गए हैं और घूसखोरी तथा बेईमानी के पैसे खाते हैं। वे झूठ बोलकर भूकते है। धर्म-सम्बन्धी सभी विचार समाप्त हो गए हैं। जिनकी प्रतिष्ठा जीवित रहने पर नहीं है, मरने पर तो उनकी शोभा और भी मन्द हो जाती है। हे नानक ! भाग्य में जो लिखा होता है और जो कर्ता पुरुष (भगवान) करता है, वही होता है। गुरु नानकदेवजी ने उस समय की राजनैतिक स्थिति का बड़ा ही मार्मिक ढग से वर्णन किया है :—

"कलिकाती राजे कसाई धरम पख कर उडरिया।
कूड़ अमावस सचु चन्द्रमा दीसै नाही वह चड़िया,
हउ भालि विकुनी होई आधरे राहु न कोई।

विन हउमै करि दुख रोई,
कहु नानक किनि बिधि गति होई।"

अर्थात, कलियुग (यह पूरा समय) छुरी है, राजे कसाई हैं, धर्म अपने पंख पर न मालूम कहां उड़ गया है। झूठ रूपी अमावस्या की रात है। इस रात में सत्य का चन्द्रमा कहां उदय हुआ है? वह दिखाई नहीं पड़ता है। मैं उस चन्द्रमा को ढूंढ़ ढूंढ़कर व्याकुल हो गया हूं। अंधकार में सृष्टि अंहकार के कारण दुखी होकर रो रही है। हे नानक! इस भयावह दुखद स्थिति से किस प्रकार छुटकारा प्राप्त हो?

इन पदों में उस समय की भयावहता तत्कालीन जागीरदारों की नृशंसता, शासकों की क्रूरता, झूठ की प्रबलता और लोगों की कारुण्य भावनाओं का मार्मिक चित्र मिलता है।

गुरु नानक देवजी सच्चे अर्थ में महान् देशभक्त, क्रान्तिकारी, राष्ट्र नेता, समाज-स्रष्टा और आदर्श जीवन के धनी थे। देश के निवासी हिन्दू और मुसलमान सभी के लिए उनके हृदय में प्रेम, सहानुभूति और अनुराग था। उन्होंने किसी जाति विशेष की दुर्दशा पर नहीं, बल्कि सभी की दुर्दशा पर शासकों द्वारा किए गए अत्याचारों पर आँसू बहाए।

इस प्रकार यदि हम गुरु नानक की वाणियों का सूक्ष्म रूप से अनुशीलन करें, तो सहज ही इस बात का अनुमान हो जाएगा कि गुरु नानक के भक्ति-आन्दोलन ने आध्यात्मिक उन्नयन के साथ-ही-साथ राष्ट्रीय अभ्युत्थान में भी महत्वपूर्ण योग दान किया है। मध्यकालीन भारत में धर्म और समाज-सुधारक तो अनेक हुए, परन्तु उन सभी का क्षेत्र मात्र अध्यात्म या सम्प्रदाय तक ही सीमित रहा, परन्तु गुरु नानकजी का अध्यात्म धर्म और समाज-सुधार आन्दोलन, इहलोक और परलोक दोनों के कल्याण का साधन सिद्ध हुआ। उनकी रचनाएं इस बात की साक्षी हैं कि वे उस समय के सभी मतों के नेताओं से मिले थे, उनके विचारों को समझने का उन्होंने प्रयत्न किया था और अपने विचार उन तक पहुंचाए थे। उस समय का शायद ही कोई ऐसा मत हो, जिसकी ओर गुरु नानक ने ध्यान न दिया हो और उस पर अपने विचार प्रकट न किए हों।

गुरु नानकदेव साधारण जनता के प्रतिनिधि थे। वे साधारण जनता के बीच से उठे, जनता के बीच ही रहे और उन्होंने अपना अन्तिम समय कृषि कार्य करते हुए ही व्यतीत किए। वास्तव में उनका जीवन आदर्श-मय था।

● ●

प्रो० आनन्द नारायण शर्मा, एम० ए०

महान गुरु नानक

मध्यकालीन सन्तों और धर्म नेताओं में गुरु नानकदेवजी का स्थान बहुत ऊंचा है। जिन दिनों समाज में वाह्याचारों, आडम्बरों की वन आई थी और धर्म के नाम पर हिन्दू और मुसलमानों की तलवारें आपस में टकरा रही थीं, उन दिनों नानक देवजी ने जन्म लेकर अन्त.करण की शुद्धि मानवमात्र के प्रति प्रेम और विश्व-बन्धुत्व की भावना पर वल दिया और रूढ़ियों और अन्धविश्वासों के उच्छेद का समर्थ प्रयत्न किया। एक ओर उन्होंने इस्लाम की मार से हिन्दुत्व की रक्षा की, तो दूसरी ओर उसके भीतर जो विकृतियां आ गई थीं, उनकी ओर से भी वे उदासीन नहीं रहे। वे समता, साधुता और सद्भाव के मूर्त्त विग्रह थे।

गुरु नानकदेव का जन्म कार्तिक पूर्णिमा संवत् १५२६ (१४६६) ई० को पंजाव कुटाईभोई जिले के तलवंडी नामक स्थान में हुआ था। यह स्थान लाहौर से लगभग ३० मील दक्षिण-पश्चिम के कोने पर है और इन दिनों नानकाना कहलाता है। नानक के पिता का नाम कालूचन्द और माता का तृप्ता था। ये जाति के खत्री थे। नानक वचपन से ही प्रखर वुद्धि, किन्तु शान्त स्वभाव के थे। इनका सांसारिक कामों में वहुत कम मन लगता था। प्रायः ये पास के एक जंगल में जाकर घंटों एकान्त सेवन किया करते थे। इन्हें पंजावी के अतिरिक्त हिन्दी, संस्कृत और फारसी की शिक्षा मिली। इन्हें घरवारी वनाने के लिए माता-पिता ने इनका विवाह वटाला जिले के गुरुदासपुर कस्वे के भुला नामक व्यक्ति की कन्या सुलक्खनी से कर दिया। इन्होंने कुछ दिनों तक एक मोदी के यहां नौकरी की। एक वार जव ये एक व्यापारी को आटा तोलकर दे रहे थे, तो गिनती के क्रम में तेरह पर पहुंच कर इन्हें अचानक भावावेश हो आया और कुछ देर तक

ये लगातार 'तेरा-तेरा' करते रहे। परिणाम-स्वरूप उस मोदी को काफी क्षति उठानी पड़ी और इनकी नौकरी छूट गई।

नानकजी की पत्नी अक्सर अपने माय के घर रहा करती थी। इनका ज्यादा समय साधु-सन्तों की सगति में व्यतीत होता था। ये स्वभाव से पर्यटनशील थे। इन्होने अनेक लम्बी यात्राएं की। पहली बार ये सैयदपुर अमीनाबाद और कुरुक्षेत्र होते हुए हरिद्वार पहुचे। वहा उस समय कोई भारी मेला लगा हुआ था। प्रात.काल इन्होने देखा कि लोग पूर्व दिशा की ओर मुख किए गगा मे खडे होकर पितरों का तर्पण कर रहे हैं। ये उनके ठीक विपरीत पाश्चमाभिमुख होकर उसी प्रकार जलाजलि देने लगे। लोगों के पूछने पर इन्होने बताया कि मैं पश्चिम के अपने खेतों मे पानी पहुचा रहा हूं। जब आपका यह जलदान दूसरे लोक में पितरो तक पहुच सकता है, तो क्या मेरा पानी दो-चार सौ कोस भी नही जा सकता? कहने की आवश्यकता नही, नानकदेवजी के इस उत्तर ने लोगों को निरुत्तर कर दिया और इनके प्रति उनकी श्रद्धा बढ गई। फिर ये दिल्ली, काशी, गया आदि प्रसिद्ध स्थानो को देखते हुए कामरूप तक गए और वापसी मे जगन्नाथपुरी होते हुए लौटे। दक्षिण में नानकदेवजी ने सिंहलद्वीप तक की यात्रा की थी। पश्चिम मे ये मुसलमानो के प्रसिद्ध तीर्थस्थान मक्का-मदीना होते हुए बगदाद तक गए। कहते हैं, एक दिन ये काबे की ओर पैर फैला कर लेटे हुए थे कि एक धर्माभिमानी मौलवी ने इनको ठोकर लगाकर पूछा—"तुम अल्लाह की और पैर फैला कर क्यों लेटे हो?" नानकदेवजी ने अत्यन्त शान्त भाव से कहा—"जिधर अल्लाह न हो, उधर मेरे पैर घुमा दो।" किंवदन्ती तो यह भी है कि उसने जिधर-जिधर इनका पैर घुमाया, उधर-उधर काबे का दरवाजा घूमता दीख पडा।

नानकदेवजी जहा भी जाते एकेश्वरवाद और विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रचार करते। वे मिथ्याचारों का निषेध करते और अन्तस्साधना पर बल देते। उनके उपदेशों से एक धनी-मानी खत्री इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने रावी के तट पर करतारपुर नामक एक नया नगर बसाना आरम्भ किया और वहां एक मन्दिर बनवा कर गुरु को समर्पित कर दिया। नानक [illegible] आश्विन शुक्ल १० सम्वत् १५९५ (१५३८ ई०) में इसी

और धोती तथा माला जैसी वस्तुए धारण किये रहते हो। अरे भाई, तुम अपने घर पर तो पूजा-पाठ किया करते हो और बाहर कुरान का हवाला देकर तुर्कों के साथ सबध बनाए रखते हो। यह पाखड तुम छोड क्यों नही देते और अपनी मुक्ति के लिए नाम स्मरण को क्यों नही अपनाते? (वही पृ० २५५) कहने की आवश्यकता नही कि गुरु नानकदेव के इन वचनों में केवल असगतियो की आलोचना ही नही, जाति के एक सच्चे शुभ-चिन्तक की व्यथा भी बोल रही है। जब पजाब के सैयदपुर पर मुगलो का बर्बर आक्रमण हुआ और निरीह जनता सताई जाने लगी, तो नानक इस दृश्य को देख कर द्रवित हो उठे उन्होने कहा कि यह हमारे पापों का ही फल है कि भगवान मुगलों को यमराज बना कर भेजा है। उधर उन्होने भगवान को भी उलाहना दिया

"खुरासान खसमाना कीया
हिन्दुस्तान डराइया।
आपे दोसु न देई करता जमुकरि
मुगल चढाइया॥
एती मार भई करलाणे तैं की
दरद न आइया।
करता तू समना का सोई॥ (अदिग्रन्थ, पद ३९)

कहते हैं, उस समय नानकदेवजी भी पकडे गए थे। बाबर के सम्मुख उपस्थित किये जाने पर उन्होने उसके नृशस कृत्यो की निर्भय आलोचना की और उसके हृदय में दया और प्रेम के बीज बोना चाहा। नानकदेवजी ने एक ओर हिन्दुओं के बहुदेववाद, मूर्ति-पूजा, छुआ छूत विचार आदि का खंडन किया, दूसरी और मुसलमानों की उग्रता और धार्मिक कट्टरता का तिरस्कार किया। वे सबको प्रेम का पाठ पढा कर एक समान मार्ग पर लाना चाहते थे। उन्होने अपने अनुयायियों को अत्यन्त विनम्रता, कष्ट सहिष्णुता और अपरिग्रह का जीवन अपनाने की सीख दी। गरचे उत्तर मुगल काल में सिखो पर मुसलमानों की ओर से इतने नृशस अत्याचार किये गए कि उन्हें बाध्य होकर युद्धिसु वेश अपनाना पड़ा और इस कारण नानक की शिक्षा का मूल स्वरूप कुछ दब गया, फिर भी इसे धर्म-

भाषा के समन्वय का भी प्रयास किया। स्वय संस्कृत के साथ फारसी के ज्ञाता थे और उनकी रचनाओ मे दोनों भाषाओं के शब्द स्वच्छदतापूर्वक व्यवहृत हुए हैं। यहा तक कि उनकी वेशभूषा मे भी इन दोनों जातियों की पोशाको का सम्मिश्रण है। वे सिर पर मुसलमान कलंदरों की तरह टोपी या पगडी धारण करते थे और हिन्दुओं की भाति तिलक लगाते थे। उनके गले मे माला रहती थी और शरीर पर लाल अथवा नारंगी रंग का जैकेट रहता था। उन्हे देख कर सहसा यह कहना कठिन था कि वे किस धर्म के अनुयायी है। उनके शिष्यो मे भी प्रारम्भ मे हिन्दू और मुसलमान दोनो थे। वे दिखावे को दूर कर सभी धर्मावलम्बियों को एक बिन्दु पर लाना चाहते थे। यह तो परवर्ती मुगल-शासकों की कट्टरता और अदूरदर्शिता का परिणाम है कि भावुक भक्तो का जो सम्प्रदाय हिन्दू-मुस्लिम सस्कृतियो के सगम पर संगठित हुआ था, वह कालातर मे इस्लाम के विरुद्ध 'हिन्दुत्व की तलवार' बन गया।

इसी प्रकार हिन्दुओ के जातिगत वैषम्य को दूर करने के लिए नानकदेवजी ने खानपान की एकता का आदर्श रखा। उन्होने छुआछूत विचार का खडन किया और अपने शिष्यो मे एक साथ एक पक्ति मे बैठकर खाने की प्रथा चलाई। यह भी प्रसिद्ध है कि नानकदेवजी जब देश-दर्शन को निकले थे, तो सैयदपुर पहुंचकर वे लालो नामक बढ़ई के अतिथि बने थे और स्वय स्वर्ण हिन्दू होकर भी उन्होने बड़े प्रेम से उसकी कच्ची रसोई स्वीकार की थी। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे कहा कि परिश्रमपूर्वक अर्जित अन्न शुद्ध दूध के समान पवित्र है। जिन हाथो मे मेहनत के घट्ठे नहीं पड़े हैं, उनकी दी हुई वस्तु को ही ग्रहण करने मे सकोच होना चाहिए। निठल्लेपन की कमाई कितनी भी स्वादिष्ट हो, उसमे मुझे दुर्बलो और निरीहजनो के खून के छीटे दीख पडते हैं। इसी तरह उन्होंने मादक वस्तुओं के सेवन का निषेध किया और नारी समाज को पर्दे की कारा से मुक्ति दिलाई। नारियो को हीन मानने वाली दृष्टि का खंडन करते हुए उन्होने कहा: (सो किउं मदा आखिए, जितु जम्मे राजान्। भला उसे घट कर क्यों कहा जाए, जिसने राजाओ को जन्म दिया है?)

नानक देवजी के इन उपदेशों का ही प्रभाव है कि उनके अनुयायियों

में केवल धर्मनिष्ठा अथवा उसके लिए बलिदान की प्रवृत्ति ही नहीं विकसित हुई, उन्होंने कठर्मता का भी अपूर्व आदर्श उपस्थित किया। आज शारीरिक श्रम और अध्यवसाय में सिखों की बराबरी का दावा बहुत कम जातियां कर सकती हैं। गुरु नानकदेवजी का यह अनमोल वचन—

'रैंणि गवाइ सोइ के दिवस गवाइया खाई।
हीरे जैसा जनमु है कउड़ी बदले जाइ॥

हमें केवल नाम स्मरण के लिए ही प्रेरित नहीं करता, सात्विक कर्म की उपासना का भी सन्देश देता है।

डॉ० ओमप्रकाश शास्त्री

गुरु नानक की सामाजिक चेतना

भारत धर्म प्राण देश है। यह सजीवनी शक्ति समाज में सदा विद्यमान रहे, इसी हेतु भारतीय सन्त परम्परा अपने ज्ञानोपदेश से समाज को प्रबोधित करती रही। कबीर, पीपा, दादू, जायसी, सूरदास, तुलसीदास, मीरा आदि भक्त कवियों ने अपने युग के समाज जीवन को निकट से देखा था। इसी क्रम में गुरु नानक भी थे। उनकी सगृहीत वाणी के साथ अनेक सन्तो की वाणी भी लिपिबद्ध की गई। इन सब क्रान्तिदर्शियों ने समाज के माध्यम से मानव-जीवन के परिष्कार का मार्ग अपनाया था। गुरु नानक ने अपने युग के सक्रान्तिग्रस्त समाज को देखा था। दो सभ्यताओं, धर्मों, एवं विचार-धाराओं की टक्कर में अडिग खड़े होकर सामाजिक द्रष्टा की भांति वे खुली आंखों अपने युग की सामाजिक दुरावस्था को देखते थे। गुरु नानक के युग का समाज जग लगे लोहे की भांति था, जिसका परिष्कार भी उन्हें करना पड़ा।

बाह्याडम्बरों पर चोट

तात्कालिक राजनीतिक सत्ता निर्विवाद रूप से मतान्ध थी। उनकी धार्मिक दृष्टि अति संकीर्ण थी। धर्म परिवर्तन तब शासकों की आंखों में एक पुण्य कर्म माना जाता था। यही कारण है कि शासकों ने भिन्न ...चारधर्मी लोगों पर तीर्थ-यात्रा मेले, उत्सव जुलूस एवं मन्दिर आदि ...के निर्माण एवं उनके जीर्णोद्धार पर कठोर प्रतिबन्ध लगा ... वस्तुओं, स्थलों एवं तथ्यों का सम्बन्ध समाज से ही तो ... कठोर नीति से तत्कालीन समाज का मनोबल एवं ...। वर्णाश्रम व्यवस्था ध्वस्त होने लगी थी। बाह्या-

आचारहीन योगियों का प्रभाव उस काल की सामाजिक जीवन-पद्धति पर अधिक था। बाहर शरीर पर भस्म और हृदय में अंधकार उन योगियों का दैनिक आचरण था। जोगी (योगी) कन्धा, झोली रखते थे। अनेक वेश बनाते थे, परन्तु दुर्बुद्ध एवं अहंकारी थे। माया-मोह के प्रचार में सच्चा नाम नहीं जपते थे। ऐसे लोग अपने जीवन की बाजी संसार रूपी जुए में हार जाते हैं। इन जोगियों से समाज को सावधान करने के लिए कहे गए ये शब्द कितने सार्थक और मार्मिक हैं। आडम्बरी साधु समाज पर कलंक हैं। इनसे समाज रक्षा आवश्यक है—

बाहरि भसम लेपन करे
अन्तरी गुबारी ॥
खिंथा झोली बहु भेख करे
दुरमति अहंकारी ॥
साहिब सबदु न ऊचरे,
माइआ मोह पसारी।
अन्तरि लालचु भरमु है,
भरमै गावारी।
नानक नामु न चेतई
जुए बाजी हारी ॥
(सारंग राग पउड़ी १२)

नारी गरिमा के गायक

नारी की निन्दा करने वालों को गुरु नानक ने फटकारा। नारी को राजा एवं महापुरुषों को जन्म देने वाली कहकर सम्मानित किया है।

"स्त्री से ही मनुष्य जन्म लेता है। स्त्री के उदर से ही प्राणी का शरीर निर्मित होता है। स्त्री से ही विवाह होता है। स्त्री के द्वारा अन्य लोगों से संबन्ध जुड़ता है। स्त्री से ही जगत् की उत्पत्ति क्रम चलता है। एक स्त्री के मर जाने पर दूसरी स्त्री की खोज की जाती है। स्त्री

ही हमें सामाजिक बन्धन में रखती है। ऐसी परिस्थिति में उस स्त्री को बुरा क्यों कहा जाए, जिससे बड़े-बड़े राजागण जन्म लेते हैं। स्त्री से ही स्त्री जन्म लेती है। इस संसार में कोई भी प्राणी स्त्री के बिना नहीं उत्पन्न हो सकता। हे नानक केवल एक सच्चा प्रभु ही है, जो स्त्री से नहीं जन्मा है।" (आसा की वार के श्लोक ४१)

ऊपर दिये गए विचार व्यक्त किए गए हैं। कितनी मार्मिक उक्ति है कि नारी से समाज बनता है। उस नारी की समाज में निन्दा क्यों? तत्कालीन शासकों ने नारी को अपनी कामुकता से अत्यधिक पीड़ित किया था। गुरुवाणी में उसी नारी की रक्षा के द्वारा समाज की जीवन रक्षा का स्पष्ट बोध दिया है।

गुरु नानक समाज में पापियों, आचारहीनों एवं वाममार्गियों के कट्टर विरोधी थे। ठेंगा लगाकर कम तोलने वाला व्यापारी उन्हें समाज घातक लगता था। आवरण के पीछे पापाचार करने वाला प्राणी नीच लगता था। आसा की वार एवं सारंग राग के प्रसंग में इन्हीं सामाजिक विकृतियों को उठाया गया है।

एक प्रश्न और विवेच्य है कि जब गुरु नानक सामाजिक विकृतियों से ऊब कर ही सन्त बनें, तब भी उन्हें समाज की चिन्ता सताए रहती थी ऐसा क्यों? अपनी वाणियों में उन्हें समाज की अपेक्षा निजी व्यक्तिगत साधना का मार्ग क्यों प्रिय न लगा? इसी प्रश्न का उत्तर है—सन्त कवियों की सामाजिक सुधार अथवा परिष्कार के प्रति सचेत दृष्टि का उन्मेष। वस्तुतः पाप पुण्य, धर्माधर्म, कुरीति, सुरीति, सुकर्म-कुकर्म आदि का युगल अनादिकाल से चला आ रहा है। गुरु नानक जैसे महात्माओं का आत्मबोध पुण्य, धर्म, सुकर्म आदि की ओर जाता है। समाज को पवित्र दृष्टिकोण वाला बनाना सन्तों का प्रधान कर्त्तव्य कर्म रहा है। आध्यात्मिक ज्ञान से आलोकित सन्तजन निजी साधना के अनन्तर क्या करें? इस प्रश्न का समाधान अपने समीपवर्ती अथवा चारों ओर फैले समाज के जीवन में सत प्रवृत्तियों का उन्मेष ही उनके जीवन का उद्देश्य बन जाता रहा है। इसलिए गुरु नानकदेव ने अपने चारों ओर फैले हुए सामाजिक अनाचार को फटकारा है।

मानव समाज को परिष्कृत एवं पवित्र मार्गानुसरण के लिये गुरु नानकदेव ने अपनी वाणी में प्रेरणा दी है। तत्कालीन समाज का सजीव चित्रण कर और उससे दूर होकर भारतीय जीवन को आत्मबोध का सन्तोष एवं आनन्द देने की ज्ञान दृष्टि प्रदान कर गुरु नानकदेव ने अपने युग को आध्यात्मिक शान्ति देने में सफलता प्राप्त की है। यह वाणी युगों तक भारतीय समाज को इसी भांति आत्मसन्तोष एवं आत्मानन्द देती रहेगी।

○ ●

श्री गुरनाम सिंह

वर्तमान सन्दर्भ में गुरु की शिक्षाएं

उस समय नैतिक मूल्यों का पतन हो गया था और सामाजिक स्थिति छिन्न-भिन्न होने लगी थी। आन्तरिक कलह सर्वत्र व्याप्त था तथा लोधी सल्तनत के पतन के अंतिम दिनों में भ्रष्टाचार एवं कुशासन का बोल-बाला था। भारत छोटी-छोटी रियासतों में बटा हुआ था, जो एक-दूसरे के विरुद्ध संघर्षरत थीं। इसी समय एक छोटी-सी सैन्य टुकड़ी के नेता बाबर ने भारत पर सफल आक्रमण किया। गुरु नानक ने अनुभव किया कि जब तक लोगों को धार्मिक रूढ़िवादिता और कृत्रिम रीति-रिवाजों से मुक्त नहीं किया जाता, उन्हें मानव-धर्म की शिक्षा नहीं दी जाती, जात-पाँत का निवारण नहीं होता तथा आन्तरिक जीवन एवं बाह्य आवरण की पवित्रता पर सुदृढ़ चरित्र का निर्माण नहीं किया जाता, तब तक सामाजिक पुनर्जागरण असंभव है।

उन्होंने उपदेश की बजाय व्यवहार द्वारा शिक्षा लेने का दृष्टांत प्रस्तुत किया। उदाहरण के लिए उन्होंने सूर्य को जल चढ़ाने की बजाय करतारपुर साहब में अपने खेतों में पानी दिया। जब वह मक्का गए, तो वह काबा की ओर पाव करके सो गए। इस प्रकार उन्होंने शिक्षा दी कि ईश्वर सर्वत्र उपस्थित है और उसे किसी सीमा से बांधकर नहीं रखा जा सकता।

मरदाना, जो जन्म से मुसलमान था, गुरुजी का एक प्रमुख शिष्य बना और प्राय. आजीवन उनके साथ रहा। गुरुजी के लिए न कोई हिन्दू था और न मुसलमान, वह केवल मनुष्य को मानते थे। सीधे-सादे शब्दों में वह सभी का भ्रम तोड़ने में विश्वास रखते थे, चाहे वह साधु हो या फकीर। जब एक बार सुल्तानपुर लोधी में काफी समय से रह रहे एक

फकीर ने गुरु नानक की आध्यात्मिकता से प्रभावित होकर वहां से जाते
समय अपना निवास उन्हें प्रदान करने का प्रस्ताव किया, तो गुरु नानक
ने तुरन्त उत्तर दिया कि निवास पर बेघर के सिवाय किसी का अधिकार
नहीं होता। भारत की वर्तमान समस्या के संदर्भ में जहां करोड़ों लोग
भूमिहीन एवं बेघर हैं, उनका कथन कितना सही प्रतीत होता है।

गरीबों से प्रेम

गुरु नानक को गरीबों से अगाध प्रेम था। वह उन्हीं के साथ रहना
पसन्द करते थे तथा अमीरों की घनिष्टता से बचना चाहते थे: उन्होंने
भाई लालो नामक एक गरीब व्यक्ति का आतिथ्य पसन्द किया और उसे
मलिक भागो जैसे धनी एवं अमीर व्यक्ति से श्रेष्ठ प्राणी माना।

एक बार जब वह सुल्तानपुर लोधी में राज्य के अनाज भंडार में
किसी उत्तरदायी पद पर नियुक्त हुए, तो उन्होंने अधिकतर गरीब लोगों
में अनाज बांट डाला। परन्तु, नवाब को संदेह होने पर जांच कराई गई,
तो यह देखकर सबको आश्चर्य हुआ कि स्टॉक में कोई गड़बड़ नहीं थी।
अनाज को तौलते समय गिनती करते हुए जब वह पंजाबी के 'तेरा' अंक
(तेरह) पर पहुचे, तो इस अंक को बार-बार दोहराते रहे; क्योंकि 'तेरा'
का अर्थ तुम्हारा भी है। वह कहते से, 'तेरा, मैं तेरा' अर्थात् हे ईश्वर, मैं
तुम्हारा हूं, मैं तुम्हारा हूं।

वह श्रम के गौरव में विश्वास रखते थे तथा अपने मन में पूर्ण ईमान-
दार थे। वह दूसरों का अधिकार हड़पने के सख्त विरोधी थे और उसे
मुसलमान के लिए सूअर और हिन्दुओं के लिए गाय की संज्ञा देते थे। वह
भोले-भाले लोगों का उद्धार करना चाहते थे और उन्हें उन्हीं की भाषा
में अपने सिद्धान्तों की शिक्षा देना जानते थे।

जनता की भाषा

गुरु नानक आडम्बर के किसी भी रूप को नापसन्द करते थे। वह
सादा जीवन व्यतीत करते और सरल भाषा बोलते जो आम आदमी की
भाषा होती थी। उनकी वाणी और शिक्षाएं इतनी सरल हैं कि अनपढ़

आदमी भी उन्हें सरलता से समझ सकता है। उनकी भाषा में अतिशय विद्वता या सूक्ष्मता का कोई चिह्न नहीं है। यदि हम अपनी भाषा-नीति के निर्धारण में उनसे सबक लें, तो वह हमारे लिए कितना उपयोगी होगा।

लंगर को व्यावहारिक रूप

गुरु नानक समानता के सन्देशवाहक थे। उन्होंने अपने इस आदर्श को 'लंगर के रूप में व्यावहारिक रूप दिया, जहां जात-पात और ऊंच-नीच के भेद-भाव के बिना सब लोग समान अधिकार से भोजन ग्रहण कर सकते थे। इस प्रकार उन्होंने सामाजिक जीवन के सिद्धान्त को क्रियान्वित करके लोगों को परस्पर सद्भाव बढ़ाने तथा अपनी दैनन्दिन समस्याएं हल करने में सामूहिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया। वह कहा करते थे—'सरबत का भला' अर्थात् सबका भला हो। यदि उनकी इस शिक्षा को हम आज सच्चे हृदय से अपना लें, तो हम उन जटिल समस्याओं के न्यायोचित समाधान में समर्थ हो सकते है, जो हमारी संकीर्ण पृथकतावादी, साम्प्रदायिक और क्षेत्रीय रवैये के कारण उत्पन्न हो गई है। 'सरबत का भला' का दृष्टिकोण अपनाने तथा दूसरे के अधिकार हड़पने पर आधारित संकीर्ण एवं स्वार्थी प्रवृत्तियों का परित्याग कर दें, तो हमारे अनेक अन्तर राज्यीय तथा केन्द्र एवं राज्यों के विवाद सहज ही हल हो जाएंगे। इस-लिए मैं यह कहता हू कि गुरु नानक की शिक्षाओं को समझने तथा उन्हें सही सन्दर्भ में अपनाने से हमारे वे आन्तरिक झगड़े शान्त हो सकते हैं, जो कभी पूर्व में और कभी पश्चिम में कभी उत्तर में और कभी दक्षिण में, सिर उठाते रहते हैं। यदि एक राज्य या क्षेत्र दूसरे के अधिकार हड़पना चाहेगा, यदि केन्द्र आधिकारिक सत्ता और केन्द्रित करना चाहेगा तथा विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक असन्तुलन बना रहेगा, तब तक हम न भारत की सेवा कर सकेंगे, न अपने राज्य की और न अपने क्षेत्र की।

आन्तरिक पवित्रता

गुरु नानक के आगमन का पांच सौ वर्ष बाद आज जब हम उनकी

श्रद्धामयी स्मृति में पंचम शताब्दी समारोह मना रहे हैं, तो हमें यह विस्मृत नहीं करना चाहिए कि उन्होंने मूलत सांसारिक इच्छाओं का परित्याग करके आन्तरिक पवित्रता को उजागर करने की शिक्षा दी थी। उन्होंने सेवा एवं प्रेम के मार्ग पर जोर दिया, एकेश्वरवाद में विश्वास व्यक्त किया, मानव-धर्म का प्रचार किया, समस्त रूढ़ियों अंध-विश्वासों एवं कर्म कांडों का परित्याग किया। आम आदमी की भाषा में विचार प्रकट किए। गरीबों से नाता जोड़ा, भ्रष्टाचार तथा दूसरों के अधिकार हड़पने की निन्दा की तथा सबकी भलाई से प्रेरित सामाजिक जीवन एवं सामूहिक प्रयास का प्रतिपादन किया। उन्होंने अपने आदर्शों को व्यावहारिक रूप दिया। हम भी उनकी शिक्षाओं का अनुसरण करके राष्ट्रीय कल्याण में सहायक हो सकते हैं तथा अपने आन्तरिक जीवन की पवित्रता और बाह्य आचरण की शुद्धि की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

डॉ० महीप सिंह

गुरु नानक और विद्रोह की भूमिका

मध्ययुगीन भक्ति-काव्य का स्वर इतना दीनता, आत्म-निषेध और आध्यात्मिक मुक्ति-प्राप्ति की लालसा से भरा हुआ है कि उसमें अपने परिवेश की विसंगतियों और क्रूरताओं के प्रति कवि की प्रतिक्रिया ढूंढ़ निकालना आसान नहीं है। पहला प्रश्न तो यही उत्पन्न होता है कि इन भक्त कवियों में किस सीमा तक अपने चारों ओर के समाज में तेजी से घट रही घटनाओं के प्रति जागरूकता का भाव विद्यमान था और यदि कुछ था भी तो उनके प्रति उनकी प्रतिक्रिया किस रूप में थी। 'कोउ नृप होइ हमें का हानी' अथवा 'सन्तन को कहा सीकरी सो काम'। आवत जात पनहिया टूटे बिसरि गए हरि नाम' के माध्यम से जो प्रतिक्रिया व्यक्त होती, उसमें अपने चारों ओर के व्यापक परिवेश के प्रति सक्रिय जागरूकता की अपेक्षा उपेक्षा या निर्लिप्तता का भाव ही अधिक है।

इस दृष्टि से गुरु नानक के काव्य का स्वर भक्तिकाल के मूल स्वर के साथ बहुत दूर तक चलता हुआ अधिक व्यापक और परिवेश के प्रति जीवन्त प्रतिक्रियाओं से भर उठता है, जहां वह कहते है—'आज के राजे व्याघ्र के समान हिंसक हैं, उनके सामन्त कुत्तों के समान लालची है और शान्त जनता को बिना किसी कारण पीड़ित करते रहते हैं। उनके नौकर अपने पैरों के नाखूनों से लोगों को जख्मी करते रहते हैं और उनका लहू कुत्तों की तरह चाट जाते हैं। जहां इनके कर्मों की परख की जाएगी, वहां इनकी नाक काट ली जाएगी।'

राजे सीह मुकद्दम कुत्ते।
जाइ जगाइन बैठे सुत्ते ॥

इकु लखु लहन्हि बहिठीआ लखु लहन्हि खडीआ।
गरी छुहारे खादीआ माणन्हि सेजड़ीआ॥
तिन्ह गलि सिलका पाईआ तुटन्हि मोतसरीआ ।३।
धनु जोबनु दुइ वैरी होए जिन्ही रखे रंगु लाई।
दुता नो फुरमाइआ ले चले पति गवाई॥
(राग आसा)

जब चारों ओर ऐसी करुणाजनक स्थिति उत्पन्न हो गई तब गुरु नानक ने ईश्वर को ही सम्बोधित करते हुए कहा—' हे परमात्मा, बाबर ने खुरासान पर आक्रमण किया, परन्तु तुमने उसकी रक्षा कर ली और हिन्दुस्तान को उसके आक्रमण से आतंकित कर दिया। तुम स्वयं इस स्थिति को उत्पन्न करते हो, परन्तु अपने को दोष न देने के लिए तुमने मुगलों को यमदूत बनाकर इस देश पर आक्रमण करा दिया। चारों ओर मार-काट हुई कि लोग त्राहि-त्राहि कर रहे हैं और तुम्हारे मन में इन निरीह जनों के प्रति ज़रा भी दर्द उत्पन्न नहीं हो रहा है। हे कर्ता, तुम तो सभी प्राणियों के समान रूप से रक्षक होने का दावा करते हो। और, फिर एक शक्तिशाली दूसरे शक्तिशाली को मारे तो मन में रोष उत्पन्न नहीं होता, परन्तु यदि शक्तिशाली सिंह निरपराध पशुओं के झुंड पर आक्रमण कर दे तो उनके स्वामी को कुछ तो पुरुषार्थ दिखाना ही चाहिए:—

खुरासान खसमाना कीआ हिन्दुसतानु डराइआ।
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ॥
एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ॥
करता तू सभना का सोई।
जे सकता सकते कउ मारे ता मनि रोसु न होई ।१।
सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई॥
(राग आसा)

अपने देश पर विदेशियों द्वारा हुए अत्याचारों से विक्षुब्ध होकर ईश्वर के प्रति ऐसी ताड़ना भरी शिकायत सारे भक्ति-साहित्य में निश्चय ही अद्वितीय है और अनुपम भी। परन्तु गुरु नानक उन लोगों को भी

समझकर फूल जाता है और अपने बराबर किसी को नही समझता। सुप्रसिद्ध पर्यटक अलबरुनी ने भी उस समय इस देश के लोगों के सम्पर्क में आकर यही निष्कर्ष निकाला था—"हिन्दू लोग समझते हैं कि उनके देश जैसा दूसरा देश नही, उनके राजा जैसा दूसरा राजा नही, उनके धर्म जैसा दूसरा धर्म नही। यदि तुम खुरासान और ईरान के शास्त्रों और विद्वानो से सम्बन्ध मे उनसे बातचीत करोगे, तो वे तुमको मूर्ख ही नही मिथ्यावादी भी समझेंगे। यदि वे प्रवास करें, दूसरो से मिले-जुलें तो उनकी यह प्रवृत्ति न रहे।"

गुरु नानक ने मानव चेतना को कुंठित करने वाली इस कूप के मेंढक वाली वृत्ति को झटककर उतार फेंका। यदि कोई धर्म ईश्वर की बनाई प्रकृति के सम्पर्क मे आने से ससार में फैले हुए विभिन्न धर्मों, मतों, सम्प्रदायो के व्यक्तियो से मिलने और उनसे विचार-विमर्श करने से भ्रष्ट हो जाता है, तो वह स्वय भ्रष्ट हो चुका है और उसे त्याग देना ही श्रेयस्कर है। गुरु नानक ने अपने जीवन के लगभग २५ वर्ष यात्राओ मे गुजारे। भारत में कौन-सा भाग उनके पद-स्पर्श से अछूता रहा। लका, तिब्बत, मक्का, मदीना, बगदाद और अफगानिस्तान—वह कहा कहाँ नही पहुचे। कभी मक्का मे मुसलमान धर्मोपदेशको से सम्पर्क किया, तो कभी सुमेर पर्वत पर समाधिस्थ सिद्धो को बताया कि आप यहा मोक्ष की साधना मे लीन हैं और ससार की दशा यह है कि वहां समय छुरी के समान है, शासकगण कसाई बन गए हैं, धर्म पर लगाकर उड गया है, चारो तरफ झूठ की काली रात छाई हुई है, उसमें सच्चाई का चन्द्रमा कहीं दिखाई नही देता। कभी वह कामरूप (असम) की जादूगरनियों के बीच विचरते रहे, तो कभी पुरी में जगन्नाथजी के मन्दिर के बाहर विराटात्मा की अभिनव आरती उतारते रहे—

गगन मे थाल र वि चंदु दीपक बने।
तारिका मडल जनक मोती॥
धूप मलिआनलो पवणु चवरो करे।
सगल बनराइ फुल्न्त जोती॥

कैसी आरती होई भवखंडना तेरी आरती।
अनहता सवद वाजंत भेरी ॥
(राग धनासरी)

अपनी इन यात्राओं में उन्होंने सदैव आतिथ्य-ग्रहण किया भाई लालो जैसे नीची कही जाने वाली जाति के लोगों का।

इसीलिए जब मुट्ठी भर विदेशी सैनिकों ने आकर हमें रौंद दिया, तो उन्होंने अपनी शक्ति और सम्पन्नता के झूठे मद में हुए राजाओं से पूछा—तुम्हारे वे खेल, अस्तवल और घोड़े कहां हैं ? वे भेरियां और शहनाइयां कहाँ हैं ? वे तलवारें, रथ और चमकीले वस्त्र कहां गए ? तुम्हारे दर्पण और उसमें दिखाई देने वाले वांके चेहरे अब कहीं दिखाई नहीं देते—

कहा सु खेल तवेला घोड़े कहा भेरी सहनाई।
कहा सु तेगवंद गाडेरडि कहा सु लाल कवाई ॥
कहा सु आरसीआ मुंह बंके ऐथे दिसहि नाहीं।

फिर यहां के लोग तो अपने सुन्दर महलों, सुन्दर सेजों और सुन्दर कामिनियों के सम्पर्क सुख में डूबे हुए थे। गुरु नानक ने उनसे पूछा—तुम्हारे वे सुन्दर घर, दरवाजे, मंडप और महल कहां हैं ? तुम्हारी वह सुखदायी सेज कहां है ? और वह कामिनी कहां है, जिसके कामोन्माद के कारण तुम्हें नींद नहीं आती थी ? पान तम्वूल देने वाली हरमों में भरी औरतें कहां गईं ?

कहा सु घर दर मंडप महला कहा सुवंक सराई।
कहा सु सेज सुखाली कामणि जिसु वेखि नींद न पाई।
कहा सु पान तंवोली हरमा होईआ छाई माई ॥

इस देश में अन्धविश्वास की कमी भी तो नहीं थी। सोमनाथ के मंदिर पर महमूद गजनवी ने आक्रमण किया, तो मंदिर के पुजारियों ने बड़े विश्वास से कहा : भगवान सोमनाथ अपना तीसरा नेत्र खोलकर इस अधर्मी को भस्म कर देंगे। परन्तु हुआ क्या ? जब मुगलों ने आक्रमण किया, तो यहाँ के पठान शासकों ने अगणित पीरों फकीरों से उन्हें रोकने के लिए टोने-टोटके किए। गुरु नानक ने ऐसे अंध विश्वासियों से

बड़े व्यंग्य से पूछा—मीर (बाबर) तो तुम पर चढ़ आया, बताओ, तुम्हारे पीरो के टोने-टोटकों से क्या हुआ ? तुम्हारे वज्र के समान मजबूत किले और महल जलकर राख हो गए। राजपूतों के टुकड़े-टुकड़े करके मिट्टी में मिला दिया गया है। तुम समझते थे कि टोने-टोटके वाले पर्चों से मुगल सिपाही अन्धे हो जाएगे। परन्तु वहा तो एक भी मुगल अन्धा नही हुआ ?

और, गुरु नानक के शब्दो मे सच बात तो यह है कि कोई भी देश अपनी अच्छाइयो को खो देने पर ही पतित होता है। मानो ईश्वर स्वय जिसे नीचे गिराना चाहता है, पहले उसकी सारी अच्छाइयो को उससे छीन लेता है—

जिस नो आपि खुआए करता खुसि लए चगिआ ई॥

परन्तु इस देश की अच्छाइयो को, उसके गुणो को, उसकी प्रभुता को ईश्वर ने क्यो छीन लिया ? क्यो उसे दलित होने के लिए, पीडित होने के लिए, परतत्र होने के लिए छोड दिया ? कारण बडा स्पष्ट है। हमारे देश में एक ऐसी समाज-व्यवस्था विकसित हो गई, जिसमे कुछ लोग ऊँचे समझ लिए गए और असख्य लोग नीचाई की उस सीमा तक ले जाए गए, जहा उनका जीवन अपमान, घृणा, उपेक्षा, ताडना और हीनता की सतत् करुण कहानी भर बनकर रह गया। गुरु नानक ने कहा—ईश्वर तुमसे रुष्ट है, इसीलिए उसने तुम्हारी सारी अच्छाइया छीनकर तुम्हे इस स्थिति तक पहुचा दिया है। उसकी कृपा दृष्टि चाहते हो, तो सबसे पहले इन नीचो को सभालो, इन्हे गले से लगाओ, इन्हे ऊपर उठाओ:—

जिथै नीच सभालियन तिथै नदीर तेरी बखसीस।

साथ ही गुरु नानक ने एक घोषणा की, मानो भावी भारत के समाजवादी समाज के निर्माण का वह प्रथम घोषणा पत्र था—नीचों मे भी जो नीची जाति के हैं, उनमे भी जो नीचे है, मैं सदैव उनके साथ हू। अपने आपको बड़ा कहने वालो से मेरा कोई सम्पर्क नहीं है.—

नीचा अदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु।
नानक तिन कै सगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस॥

गुरु नानक ने अपने समय के समाज को, जो सम्मानहीन, लज्जाहीन होकर अपना जीवन व्यतीत कर रहा था, झकझोर कर कहा—अपना सम्मान खोकर जीना हराम है, उस जीवन को जीवित रखने के लिए जो कुछ भी खाया-पिया जाता है, वह सब हराम है:—

जै जीवै पति लथी जाइ।
सभु हरामु जेता किछु खाइ।

गुरु नानक की वाणी अपने समाज की सुप्त आत्मा को जाग्रत करने वाली सिद्ध हुई, उनके हृदयग्राही कथन भविष्य के प्रभावशाली विद्रोह की भूमिका बन गए। उन्होंने कहा : यदि तुम मेरे बताए मार्ग पर आना चाहते हो तो खूब सोच लो। मेरे साथ आना है तो अपना सिर हथेली पर रख लो, इस मार्ग पर पैर धरने की पहली शर्त है—सिर दे देना होगा, किन्तु उफ भी नहीं करनी होगी:—

जे तउ प्रेम खेलण का चाउ।
सिरु धरि तली गली मेरा आउ।
इतु मारगि पैर धरीजै।
सिरु दीजै काणि न कीजै॥

डॉ० वीरेन्द्र कुमार बड़सूवाला

नानक का सामाजिक संदेश

अब से पाच सौ वर्ष पूर्व १४६६ ई० मे भारत मे लाहौर के समीप तलवन्डी नामक स्थान मे मेहता कल्याणदास और तृप्तादेवी के परिवार में एक अद्भुत बालक नानक ने जन्म लिया। इस विलक्षण बालक ने होश सभालने पर अपने जीवन भर इस जगत् को चमत्कृत किया और विशेष नियमित शिक्षा न प्राप्त करने पर भी गुरु पद प्राप्त किया। गुरु नानक हमारे देश के महान् दार्शनिक के रूप में पूजित हैं। भारतीय सन्त परम्परा मे उनका बहुमूल्य स्थान है। वह मन्त्र द्रष्टा और सिख धर्म के प्रवर्त्तक हुए। उनकी वाणियो और विचारधारा से अनुप्रेरित होकर भारत के एक जन-समुदाय ने सिख धर्म ग्रहण किया। उस धर्म का धीरे-धीरे सारे देश मे प्रसार हुआ।

मध्ययुगीन धर्म संस्थापको मे गुरु नानक का महत्व इसलिए और भी बढ़ गया कि उन्होने भक्ति, कर्म, ज्ञान के साथ ही तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का भी सम्यक् अनुशीलन व विश्लेषण किया। इस प्रकार उनकी वाणियो से एक सजग देशभक्ति की स्रोतस्विनी प्रस्फुटित हुई।

१५ वी शती में भारत में तब धर्म और राजनीति का वातावरण बड़ा विकृत हो चला था। गुरु नानक के अपने शब्दो में—"यह युग चाकू की धारन्मा घातक है। शासक जल्लाद-सा व्यवहार करते हैं। धर्म धरती से पख लगा कर उड गया है। असत्य की अन्धेरी रात में कही से भी सत्य का चन्द्रमा उदय होता नही दीखता" (माझ की वार, देखें पूरनसिंह कृत" ए हिन्ट्री आवदा सिक्ख भाग १, पृ० २६)। मुसलमान मुल्ला और हिन्दू पंडित अपने कर्त्तव्य से च्युत हो गए थे। पाच वर्ष की आयु में

ही जीवन के उद्‌देश्य के विषय में जिज्ञासा करने वाले नानक पारिवारिक नातों-रिश्तों एवं दुनियादारी की दूसरी बातों को निभाते हुए निरन्तर सत्य की खोज करते रहे। कविता, संगीत और भगवद् भजन की ओर उनका बचपन से ही झुकाव था। 'जन्मसाखा' पृ० १६ के अनुसार सुलतानपुर में जब नानक रहते थे, तो मरदाना नामक मुसलमान के साथ मिल कर वे प्रतिदिन रात्रि के समय प्रभु-भक्ति के गीत गाते। जो उनके पास आता, उसको वे भोजनादि देते। तब भारत में दूर-दूर तक वे घूम-फिर कर फकीरों और सन्तों का संग करते थे। सन् १४९९ ई० में सुलतान पुर के पास नदी तट पर कुछ दिन इन्होंने तपस्या की। वहीं कुछ दिन बाद इन्हें अन्तर्बोध हुआ।

तत्पश्चात् क्रान्तिकारी और दूरदर्शी समाज-सुधारक नानक ने घोषणा की कि यहां कोई हिन्दू नहीं है, कोई मुसलमान नहीं है। नानक पूर्व में आसाम से लेकर सुदूर पश्चिम में ईराक तक घूमे-फिरे थे। अनेक स्थानों पर उन्होंने अपने विचारों के प्रसार केन्द्र स्थापित किये। उनके अपने जीवन-काल में ही उनके बहुत व्यक्ति अनुयायी बन गए और उन्होंने एक विशेष सम्प्रदाय की स्थापना की। उस सम्प्रदाय में हिन्दू और मुसलमान दोनों उनके शिष्यरूप से सम्मिलित हुए। नानक की शिक्षाओं ने राज-नीतिक दृष्टि से निम्न श्रेणी के पद-दलित हिन्दुओं और दरिद्र मुसलमान किसान लोगों को विशेषतः प्रभावित किया। हिन्दू-मुसलमान एकता की ऐसी पृष्ठभूमि सूफी सन्त और कुछ भक्त लोग पहले ही तैयार कर चुके थे। किन्तु यह नानक के व्यक्तित्व की भद्रता और निर्भीकता ही है, जिसने उन्हें भारत में उन दिनों लोकप्रिय बनाया। नम्रता और कभी-कभी अपने आप की भी हंसी उड़ाते हुए बात कहने का उनका तरीका और उनकी सरल कविता ने भी उनकी जनप्रियता को बढ़ाया।

नानक ने नवीन धर्म की ही स्थापना नहीं की, उन्होंने जीवन के एक नवीन आदर्श (पैटर्न) को भी प्रस्तुत किया, जिसकी उन दिनों ही नहीं, भारत को आज भी बड़ी आवश्यकता है। उन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज के उन रोगों का निदान किया, जो उसे खाये जा रहे थे। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं का जिस प्रकार समाधान

किया, वे उन्नत, सभ्य, सुसंस्कृत देशों के आदर्शों की कसौटी पर खरी उतरती हैं। उन्होंने परमात्मा से भय रखने वालों का प्रजातन्त्रवाद प्रतिष्ठापित किया। जहा सब लोगों को समान भाव से रहने का अधिकार था जाति, वर्ग, वर्ण आदि का कोई विचार नहीं। वहां भ्रातृभाव, सेवा ही समाज के परम आदर्श है। नानक द्वारा उनके शिष्यों की बसाई गई 'करतारपुर' की बस्ती इसका उदाहरण रही है। उनकी सच्ची एवं धर्म-निरपेक्ष आस्था भारतीय समाज में यों विकसित हुई—

नानक विशुद्ध एकेश्वरवादी थे। उन्होंने अपने से पूर्व एव समकालीन अनेक भक्तों के इस विचार को आश्रय नहीं दिया कि ईश्वर अवतार लेता है। उन्होंने तर्क दिया कि प्रभु अनन्त है, अतः वह अवतार लेने के लिए मरणधर्मा नहीं होता। मूर्ति-पूजा का भी उन्होंने विरोध किया। उनके विचार से ईश्वर सत्य है (मिथ्या और असत् से वह श्रेष्ठ है)। उनकी ईश्वर-विषयक आध्यात्मिक मान्यता ने सामाजिक व्यवहार का सिद्धान्त निर्धारित कर दिया कि यदि ईश्वर सत्य है, तो असत्य बोलना ईश्वर को न मानना है। असत व्यवहार पडोसियों को ही दुःख नहीं देता, वह अधार्मिक है। इसलिए एक सिख को सदा विश्वास करना चाहिए कि ईश्वर एक है, वह सर्व-शक्तिमान् है और सर्वज्ञ सत्ता है और अपने पड़ोसियों से ऐसा व्यवहार करना चाहिए, जिससे कि उनका मन दुःखी न हो। (देखे, मूलमन्त्र जपजी)। नानक के अनुसार प्रभु निरंकार (निराकार) है, अतः उस शक्ति की परिभाषा नहीं की जा सकती। कठिनाई के बावजूद नानक ने उस प्रभु का मानवता के पिता, प्रीतम (खसम), दाता के रूप में स्मरण किया है। ईश्वर, राम, गोविन्द, हरि, मुरारी, रब, रहीम आदि सब हिन्दू-मुसलिम संज्ञाओं में नानक ने उसे सम्बोधित किया, परन्तु वे प्रायः उसे 'सत करतार' या 'सतनाम' नाम से पुकारते। यदि ईश्वर संसार का पिता है, तो उसका पिता कौन है या यदि ईश्वर सत्य है तो सत्य क्या है— इस प्रकार की परिस्थितियों में उलझन के मौके पर नानक ने कहा कि आप स्वयं निश्चय नहीं कर सकते। अतः किसी गुरु के द्वारा मार्ग-दर्शन आदि अपेक्षित है। 'गुरु' नानक द्वारा प्रतिष्ठित सिख धर्म का मेरुदंड है। गुरु के अभाव में सांसारिक बन्धन से मोक्ष संभव नहीं। उसके निर्देश—

सुझाव लिये जा सकते हैं, ईश्वरवत् उसकी अर्चना नहीं की जानी चाहिए। नानक ने अपने आपको समाज का शिक्षक माना, पैगम्बर नहीं। वाणियों में भी उन्होंने अपने-आपको ईश्वर का दास ही बताया है।

तू दाना साहिबु सिरि मेरा।
खिजमति करी जनु बंदा तेरा॥

(नानक वाणी पृ० ५७७)

जीवनादर्श

संसार की विभिन्न अपवित्रताओं के बीच रह कर भी पवित्र जीवन धारण करना—उनका लक्ष्य रहा। नानक ने समाज के व्यक्तियों को सांसारिक बन्धन से छूटने के लिए एकान्त में तपस्या करने की सलाह नहीं दी। उन्होंने 'राज में जोग' (नागरिक या गृहस्थ-जीवन में ही ज्ञान प्राप्ति) का परामर्श दिया। (सिद्ध गोष्ठी)। उनका धर्म गृहस्थ-धर्म था। उनका विश्वास था कि व्यक्ति के सुधार के लिए जंगलों में कठिन तपस्या के मुकाबले साधु संगत अधिक उपयोगी है और पड़ोसियों के प्रति सदाचार अति आवश्यक है—'सचों और सबको ऊपर सच आचार।' वे अपने मिशन का प्रचार करने जहां एक ओर हिमालय की बर्फीली चोटियों में गये, वहां दूसरी ओर अरब तथा मिस्र के रेगिस्तान में भी गए। वे अपनी जान हथेली पर रखकर अपने मिशन का प्रचार करते थे। वे मृत्यु से निर्भय थे। अपने शिष्यों को भी उन्होंने मृत्यु की भावना से ऊपर उठा दिया था। उनका कहना था…'वीरों के लिए मृत्यु से बढ़ कर कुछ भी अच्छा नहीं, किन्तु मृत्यु सुन्दर कार्य के लिए हो। उस समय दिल्ली में ऐसी हुकुमत थी, जो केवल इतना कहने पर लोगों के सिर कटवा लेते थे कि 'सभी धर्म उतने ही अच्छे हैं जितना कि इस्लाम धर्म।' नानक अपनी निर्भय शिक्षाओं के प्रसंग में गिरफ्तार भी किए गए थे। किन्तु मुस्लिम अत्याचारों से उनकी धार्मिक भावना दबी नहीं। वे सचमुच सत्याग्रही थे।

जाति हीन समाज

नानक ने 'गुरु का लंगर' के रूप में सामूहिक भोजन का कार्यक्रम

समाज के सामने रखा। इनसे पूर्व अनेक भक्तों ने मौखिक रूप से जाति-हीन समाज का आह्वान किया था। नानक ने उस समाज को 'गुरु का लगर' रूप से क्रियात्मिक रूप प्रदान किया। 'गुरु का लगर' में विभिन्न जाति-वर्ण के लोग एक साथ बैठकर भोजन करते। भारतीय समाज के सामान्य जन और नेतागण दोनों के लिए आज भी गुरु नानक का यह पाठ सीखने योग्य है कि जाति-वर्ण की उच्चता नीचता को भुला कर मानव, मानव को समान व्यवहार दे और वस्तुत जाति-हीन समाज को बनाने में जुट जाए। जाति-हीन समाज की स्थापना की जितनी आवश्यकता मुसलमानों के शासन-काल में थी, उतनी ही या कहिये कि उससे भी अधिक आज स्वतन्त्र भारत में है।

नानक ने अपने शिष्यों को सदा पवित्रता, न्याय और सदाचार की शिक्षा दी। ईश्वर प्राप्ति के प्रसग में नानक ने योग साधना को बहिष्कृत कर सगीत और प्रभु-गुण कीर्तन के सरल माध्यम को अपनाया। नानक ने परम्परित धार्मिक विधि-निषेध की चिन्ता किए बिना अधिक भावात्मक सत्य का प्रचार किया। उन्होने सामाजिकों को उपदेश दिया कि ईश्वर के प्रति पेचीदा श्रद्धा के सिद्धान्तों के मुकाबले सब के प्रति प्रेम करने का अभ्यास डालो। इस सार्वजनिक प्रेम का अर्थ है—सेवा। मानवता की सेवा ईश्वर की सेवा है। इस सेवा के प्रसग में पुरुष और नारी समान हैं। नानक ने नारी को भी पुरुष के समान सेवा का भागीदार बनने दिया। गुरु नानक का मानवीय सदेश सक्षेप में इस प्रकार समझाया जा सकता है—

१ इस मानव जीवन का चरम लक्ष्य ईश्वर से प्रेम करना है।
(बारमाह, श्रीराग, आसा)।

२ ब्रह्म मुहूर्त्त में प्रभु के सतनाम का जाप करे, उसकी कृपा का ध्यान करके। प्रभु का नाम जपना ईश्वर की सेवा करने का तरीका है।
(जपजी, श्रीराग, बारमाह)।

३ जो ईश्वर को प्यार करता है, वह सबको प्यार करता है। ईश्वर-प्रेम का अर्थ सेवा है। सक्रिय सेवा के बिना ईश्वर प्रेम नहीं

हो सकता। हमें सदाचार का अभ्यास करना होगा।

(जपजी, बारमाझ।)

४ सच्ची सेवा वे ही कर सकते हैं, जिन्होंने अपनी महत्वाकांक्षाओं का त्याग कर दिया है। (आसा दी वार) मन को जीत कर हम जगत को जीत सकते हैं। (जपजी)।

५ अहं (अहंकार) अनेक दुराचारों के लिए उत्तरदायी होता है। अतः अहं का त्याग कर दो और मन के मार्ग पर बढ़ चलो।

६ अहं की शक्ति को यथोचित शासित कर लेने पर काम, क्रोध, लोभ, मोह और मद पर आसानी से विजय प्राप्त की जा सकती सकती है। चंचल मन के स्थिर होने पर ही दिव्य दृष्टि का लाभ होता है। दिव्य दृष्टि पाने वाला जन्म-मरण के बन्धन से छूट जाता है। (जपजी)

७ जाति-पांति में क्या धरा है? व्यक्ति के काम से उसे परखा जाना चाहिए।

८ नानक का विश्वास था कि हर व्यक्ति में कुछ-न-कुछ भलाई छिपी रहती है। जैसे कस्तूरी मृग को अपने भीतर छिपी कस्तूरी (खुशबू) का पता नहीं चलता और वह मन से इधर-उधर भटकता रहता है और भटकते हुए किसी शिकारी के जाल में फंस जाता है, उसी प्रकार मानव माया जाल में फंस जाता है।

९ गुरु का कर्त्तव्य है कि वह मानव में छिपे बहुमूल्य धन के प्रति उसे सचेत करे और तब उसकी प्राप्ति के लिए उसकी सहायता करे।

१० जिस प्रकार धीमी-धीमी आंच पर पकने वाली सब्जी बहुत जायकेदार बनती है —उसका अपना विशेष स्वाद होता है, उसी प्रकार शरीर और मन के सहज (क्रमशः) प्रशिक्षण से मानवों के भीतर छिपी हुई अच्छाई को प्रकाशित किया जा सकता है। अपने शारीरिक सामर्थ्य और स्वभाव के अनुसार ही अपने आपको अनुशासित किया जा सकता है।

११ नाम और सहज के सरल मार्ग का उपदेश करते हुए गुरु नानक ने मन के अनुशासन के साथ ही अमृत वेला में कीर्तन के श्रवण

पर बल दिया। उनका विश्वास था कि ऐसा करने से ईश्वर साक्षात् होता है।

१२ कीर्तन के प्रसंग मे ही समाज के सार्वजनिक कल्याण को ध्यान मे रखते हुए गुरु नानक ने सत्सग को महत्वपूर्ण बनाया।

गुरु नानक की सबसे बडी विशेषता यह है कि उन्होने अपने ज्ञान और अनुभव की बातें समाज के सब हिन्दू-मुसलमानो के प्रति बिना किसी अकड़ फू के बड़ी नम्रता से निवेदित की, मधुकर सगीत और काव्य के कलेवर ने उनकी वाणी को विशेष मधुरता प्रदान की। इसीलिये उनके उपदेश अन्य सन्तो की अपेक्षा अधिक एवं प्रभावशाली बन पड़े और इसीलिए वे सहज ही हिन्दुओ के गुरु और मुसलमानो के पीर के रूप मे प्रसिद्ध हो गए—

"बाबा नानक शाह फकीर
हिन्दू का गुरु, मुसलमान का पीर।"

श्री त्रिलोक दीप

गुरु नानक का प्रचार ढंग

पांच सौ साल बीत जाने पर भी गुरु नानक के सन्देश आज भी उतने ही ताजे और परिस्थितियों के अनुकूल हैं कि गुमराह लोगों के भटकते दिलों को सुकून और सद्मार्ग की प्रेरणा देते हैं। गुरु नानक ने अपने उपदेश या संदेश किसी पर थोपे नहीं 'बल्कि तत्कालीन समाज में व्याप्त व्याधियों को प्रयोगात्मक तरीकों विवेक, तर्क और उदाहरणों से सुलझाया और दूर किया। अपनी वाणी के प्रचार के लिए उन्होंने चार यात्राएं भी कीं और उन यात्राओं के दौरान उन्होंने लोगों को वेबुनियाद और निर्मूल भ्रान्तियों तथा अंध-विश्वासों के दायरे से निकाल सही प्रयोगी और प्रभावी मार्ग दिखाया।

अपनी अनोखी मिसालों तथा मधुर वाणी का घोल लोगों को पिलाते, प्रयोग और तर्क द्वारा उनके विवेक को झकझोरते हुए जब गुरु नानक हरिद्वार पहुंचे, तो गंगा के किनारे लोगों को सूर्य को पानी देते देखा। वे भी एक तरफ खड़े होकर पानी फेंकने लगे। कौतूहल जागना आवश्यक था। उन्होंने लोगों से उलटा सवाल किया। नानक को बताया गया कि सूर्य को पानी देकर वे अपने पितरों तक पहुंचा रहे हैं, लेकिन गुरु ने कहा कि वे तो तलवंडी स्थित अपने खेतों को पानी दे रहे हैं। चारों तरफ उलहना और हंसी का जब फव्वारा फूटा तो गुरु की गम्भीर वाणी ने कहा कि जब आप लोगों का जल लाखों मील दूर सूर्य तक पहुंच सकता है, तो मेरे गांवों तक जो यहां से कुछ ही मीलों की दूरी पर है, क्यों नहीं पहुंच सकता। तीखा तर्क लोगों की समझ में आ गया।

इसी प्रकार ऊंच-नीच की दीवार ढहाते हुए और लोगों को समानता और भाईचारे का पाठ सिखाते हुए गुरु नानक और मरदाना अपनी

तीर्थ-यात्रा की तरफ बढ़ते जा रहे थे। उनका नारा था, अपनी मेहनत की कमाई ही खानी चाहिए। उसी में संतोष करना चाहिए। गुरु नानक ने एक जगह लिखा है—

"हक पराया नानका
उस सुअर उस गाय
गुरु पीर हामा ता भरे
जा मुरदार न खाये।"

एकबार किसी ने गुरु नानक से कहा कि आप तो क्षत्रिय वंश के हैं, फिर आप वैश्यों, शूद्रों तथा अन्य छोटी जातियों के साथ क्यों रहते हैं? तो गुरु नानक ने कहा कि भगवान् की नजर में सभी लोग बराबर हैं, सब में एक-सा खून, एक-सी जान, एक जजबात और भावनाएं हैं। मैं तो उन सभी लोगों का गुलाम हूं, जो मानवता के पुजारी हैं। उन्होंने एक स्थान पर लिखा है :—

"नीचा अंदरि नीच जाति,
नीची हूं अति नीच
नानक तिनके संग साथ,
वडिया सु क्या रीस।"

उन्होंने एक अन्य स्थान पर बताया कि जहां पर नीचों को सम्भाला जाता है, जहां उनकी देखभाल और कद्र होती है, जहां उनकी भावनाओं को ठेस नहीं पहुंचायी जाती, ईश्वर की कृपा-दृष्टि भी वहीं पड़ती है—

"जिथे नीच सम्भालियन
तिथे-नदरि तेरी बखसीस।"

चलते-चलते गुरु नानक ने दक्षिण पूर्व की तरफ रुख किया, तो रास्ते में उन्हें दो योगी मिले। उनसे काफी लम्बी वार्ता हुई। गुरु ने उन्हें समझाया कि वास्तविक धर्म क्या है और सचाई कहां पर और कैसी होती है। पीलीभीत में उन्होंने जब एक सूखे पीपल के पेड़ के नीचे डेरा लगाया, तो वह हरा-भरा हो गया। अयोध्या प्रयाग में होते हुए जब गुरुजी काशी पहुंचे, तो एक नया फकीर आया देख वहां के विद्वानों ने उनका घेराव किया। शहर के एक महान् विद्वान पंडित चतुरदास ने

गुरुजी से पूछा कि न तो आपके पास सालिग्राम है और न ही तुलसी की माला, बताइये फिर आप भगवान् की आराधना कैसे करते हैं ? उत्तर में गुरु नानक ने बताया—

"सालिग्राम विप पूजि मनावहु,
सुकृत तुलसी माला
राम नाम जपि बेड़ा बाँधुहु,
दया करहु दियाला
काहे कलरा सिचु जनम गवावहु
काचि ढहगि दिवाल काहे गच लावहु।"

बनारस वासियों को सत्य का मार्ग दिखाने के बाद और गया के पंडों को ढकोसलों से निजात दिलाने के बाद गुरु नानक असम के इलाके में पहुंचे। कामरूप में नूरशाह नामक एक रानी ने गुरु को सांसारिक बंधनों में पुन: जकड़ने के लिए मोहित करना चाहा, लेकिन वह नानक को तो अपने मिशन से न डिगा पाई, उसका काया कल्प अवश्य हो गया।

अभी उसका कल्याण किया ही था कि एक बेडौल आकृति गुरु के सामने आयी। नानक ने पूछा, तुम कौन हो ? उत्तर मिला, कलियुग, मेरा काम है लोगों को सच्चे राह से भटकाना। लेकिन आप भटकने से रह गए। अब मैं आपको संसार के सभी तरह के ऐश्वर्य और एक अति सुन्दर भवन भेंट करना चाहता है, लेकिन नानक का उत्तर था—

"मोती त मंदर उसरौह
रतनी त होहि जड़ाओ।
कस्तूरी कूं अगर चंदनि,
लीपि आवे चाउ
मत देख भूला वीसरे,
तेरा चित्त न आवे नाउ।"

गुरु नानक उसके फेर से बच निकले। एक अन्य स्थान पर गए, तो देखा कि एक दिन तो बच्चा पैदा होने की खुशी में जश्न मनाए जा रहे हैं, लेकिन दूसरे दिन उस के चल बसने से बुरी तरह मातम छाया है। ऐसा क्यों होता है गुरुजी, मरदाने ने पूछा। गुरुजी ने उत्तर दिया कि जीवन

का यही रहस्य है। कोई आता है, तो कोई जाता है। जरूरत केवल अपने आपको सतुलित रखने की होती है। ज्ञान की कमी के कारण कभी तो मनुष्य जरूरत से ज्यादा प्रसन्न हो जाता है, तो कभी दुखी। अगर भीतर से आत्मा का भगवान के साथ साक्षात्कार हो, तो मनुष्य सहजता सीख जाय; क्योंकि भगवान न कभी जन्मता है और न ही कभी मरता।

बिहार, बगाल असम के लोगो मे ज्ञान का सचार करते हुए गुरुनानक पुरी पहुंचे। रात्रि को वहा पर जगन्नाथ की आरती उतारी जाती थी। चांदी की थालियो मे छोटे-छोटे मिट्टी के दिए जलाकर पाडे और उपासक भगवान् की आरती उतारते थे। उस आरती मे लोग बडे पैमाने पर शामिल होते थे। आरती के समय चारो ओर से पुष्प वर्षा होती, धूप से वातावरण सुगधित हो उठता। जब रात्रि को यह आरती हो रही थी, तो गुरु नानक ने उसमे भाग नही लिया, बल्कि वे अपने शब्द ही पढ़ते रहे। इस अवज्ञा और अनादर का गुरुजी से जवाब-तलब किया गया। गुरु ने उत्तर दिया, मैं जगत् के नाथ की आरती करता हू न कि किसी पत्थर की। उन्होने आरती पढी—

"गगन मैं थालु रवि चद दीपक बने,
तारिका मंडल जनक मोती।
धूप मलआनलो पवण चवरो करे.
सगल बनराई फुलन जोती।
कैसी आरती होई। भव खडना तेरी आरती
अनहता सबद बाजत भेरी।
सहस तव नैन, नन नेन हैं तोहि कउ,
सहस मूरति नना एक तोहि।
सिहस पद बिमल नन एक पद गध बिनु,
सहस तव गध इव चलत मोहो।
सभ महि ज्योति ज्योति है सोइ।
तिसदे चानणि सभ महि चानण होइ।"

डॉ प्रमोदशंकर भट्ट

गुरु नानक की दिशा दृष्टि

गुरु नानक मात्र संत या कवि ही नहीं थे, उनकी वाणी ने अपने युग के बदलते हुए सामाजिक परिवेश को एक नया अर्थ और अभिव्यक्ति दी थी। गुरु नानक का राष्ट्रीय चेतना का वह सन्देह आज की परिस्थितियों में तो और भी अधिक प्रेरक बन गया है।

गुरु नानक किसी संकुचित धार्मिक विचारधारा के प्रवर्तक नहीं थे। वे ऐक्य साधक थे। उस युग में, जब आक्रान्त विदेशी सत्ता से देश की संस्कृति, धर्म और दर्शन की रक्षा के साथ ही अपने दैनिक जीवन की सुरक्षा एवं शान्तिपूर्ण समाज की स्थापना बहुत आवश्यक थी, गुरु नानक ने देश के विभिन्न भागों में बिखरे हुए संतों की वाणी का संग्रह किया। इन संतों में हिन्दू भी थे, मुसलमान भी थे, उच्च वर्ग के भी थे, निम्न वर्ग के भी थे। अपनी यात्राओं में गुरु नानक जहां-कहीं भी गए, वहां के प्रमुख संतों से वे मिले और अपनी विचारधारा के अनुरूप उनकी वाणी को अपने पास संग्रहीत किया। आगे चल कर जब पंचम गुरु, गुरु अर्जुनदेव ने 'आदि ग्रन्थ' का सम्पादन किया, तो गुरु नानक द्वारा एकत्र विभिन्न संतों की वाणी भी उसमें संग्रहीत की गई। इसी आदि ग्रन्थ को गुरु गोविन्द सिंह ने 'गुरु पद' पर प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार 'गुरु नानक द्वारा प्रवर्तित मत में एक व्यक्ति या उस व्यक्ति की अपनी परम्परा की ही सर्वोच्च महत्ता नहीं रही, अपितु उत्तर भारत के महाराष्ट्र के नामदेव भी) अनेक संत इस 'गुरुपद' के सहभागी बन गये।

देश की भावात्मक एकता की दृष्टि से इस प्रयास का मूल्यांकन सहज ही किया जा सकता है।

गुरु नानक एक लोकनायक थे। लोकनायक की दृष्टि समन्वयकारी

होती है। वह बिखरे हुए लोगों के बीच से ही एकता के तत्व एकत्र करता है। और उनके लिए एक समान भाव भूमि का निर्माण करता है। गुरु नानक की रचनाओं में विरोध का स्वर बहुत क्षीण है। वे परम्परागत रूढ़ियों का विरोध नहीं करते, वरन् उन्हें नया अर्थ देते हैं।

वे योग का विरोध नहीं करते, योग-मार्ग मे आए हुए वाह्याडम्बर का विरोध करते हैं। एक योगी को सम्बोधित करते हुए वे कहते हैं 'योग की प्राप्ति तो माया मे रह कर भी माया से अलिप्त रहने मे है, न कि वाह्य उपकरण धारण करने में।'

जोग न खिंथ जोग न डंडे,
जोग न भसम चढ़ाइए ।।
जोग न मुंडी मुंडाइए,
जोग न सिंमी वाइए ।
अजन माहि निरजनि रहिए,
जोग जुगति तउ पाइए ।

योग बढ़-चढ़ कर चर्चा करने से ही योग नही उत्पन्न होता। वास्तविक योगी वह है, जो सब को एक दृष्टि से देखता है—

गल्लीं जोग न होई ।
एक द्रिस्ट कर समसरु जोग
जोगी कहिये सोई ।

हमारे सामाजिक जीवन मे सदा दो प्रकार की प्रवृत्तिया सक्रिय रहती हैं, एक सगठनमूलक, दूसरी विघटनकारी। गत हजारो वर्षों मे मनुष्य ने अपनी जीवन यात्रा मे अपने आपको 'स्व' के सकुचित घेरे से निकाल कर अधिक से अधिक विस्तृत और व्यापक बनाना चाहा है। विकास की इस दशा में उसने परिवार, गाव, बिरादरी, प्रान्त और राष्ट्र बनाये और उनसे भी आगे बढ़ कर विश्वात्मा की भी कल्पना की। परन्तु आत्मविकास और एकता मूलक इन प्रयासो के साथ ही विघटन और सिकुड़न की शक्तिया भी छाया की भाति उसके साथ लगी रहीं। वे शक्तियां उसका मार्ग अवरुद्ध कर उसे खड-खंड करती रही और न पुरुष का भेद था न स्त्री का, और न ही हिन्दू और मुसलमान का कोई

डॉ प्रमोदशंकर भट्ट

गुरु नानक की दिशा दृष्टि

गुरु नानक मात्र संत या कवि ही नहीं थे, उनकी वाणी ने अपने युग के बदलते हुए सामाजिक परिवेश को एक नया अर्थ और अभिव्यक्ति दी थी। गुरु नानक का राष्ट्रीय चेतना का वह सन्देह आज की परिस्थितियों में तो और भी अधिक प्रेरक बन गया है।

गुरु नानक किसी संकुचित धार्मिक विचारधारा के प्रवर्तक नहीं थे। वे ऐक्य साधक थे। उस युग में, जब आक्रान्त विदेशी सत्ता से देश की संस्कृति, धर्म और दर्शन की रक्षा के साथ ही अपने दैनिक जीवन की सुरक्षा एवं शान्तिपूर्ण समाज की स्थापना बहुत आवश्यक थी, गुरु नानक ने देश के विभिन्न भागों में बिखरे हुए संतों की वाणी का संग्रह किया। इन संतों में हिन्दू भी थे, मुसलमान भी थे, उच्च वर्ग के भी थे, निम्न वर्ग के भी थे। अपनी यात्राओं में गुरु नानक जहां-कहीं भी गए, वहां के प्रमुख संतों से वे मिले और अपनी विचारधारा के अनुरूप उनकी वाणी को अपने पास संग्रहीत किया। आगे चल कर जब पंचम गुरु, गुरु अर्जुनदेव ने 'आदि ग्रन्थ' का सम्पादन किया, तो गुरु नानक द्वारा एकत्र विभिन्न संतों की वाणी भी उसमें संग्रहीत की गई। इसी आदि ग्रन्थ को गुरु गोविन्द सिंह ने 'गुरु पद' पर प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार 'गुरु नानक द्वारा प्रवर्तित मत में एक व्यक्ति या उस व्यक्ति की अपनी परम्परा की ही सर्वोच्च महत्ता नहीं रही, अपितु उत्तर भारत के महाराष्ट्र के नामदेव भी) अनेक संत इस 'गुरुपद' के सहभागी बन गये।

देश की भावात्मक एकता की दृष्टि से इस प्रयास का मूल्यांकन सहज ही किया जा सकता है।

गुरु नानक एक लोकनायक थे। लोकनायक की दृष्टि समन्वयकारी

होती है। वह बिखरे हुए लोगों के बीच से ही एकता के तत्व एकत्र करता है। और उनके लिए एक समान भाव भूमि का निर्माण करता है। गुरु नानक की रचनाओं में विरोध का स्वर बहुत क्षीण है। वे परम्परागत रूढ़ियों का विरोध नहीं करते, वरन् उन्हें नया अर्थ देते हैं।

वे योग का विरोध नहीं करते, योग-मार्ग में आए हुए बाह्याडम्बर का विरोध करते हैं। एक योगी को सम्बोधित करते हुए वे कहते हैं 'योग की प्राप्ति तो माया में रह कर भी माया से अलिप्त रहने में है, न कि बाह्य उपकरण धारण करने में।'

जोग न सिंङ्‍ जोग न डंडे,
जोग न भसम चढाइए ॥
जोग न मुंडी मुंडाइए,
जोग न सिंमी वाइए।
अंजन माहि निरंजनि रहिए,
जोग जुगति तउ पाइए।

योग बढ़-चढ़ कर चर्चा करने से ही योग नहीं उत्पन्न होता। वास्तविक योगी वह है, जो सब को एक दृष्टि से देखता है—

गल्ली जोग न होई।
एक द्रिसट कर समसर जोग
जोगी कहिये सोई।

हमारे सामाजिक जीवन में सदा दो प्रकार की प्रवृत्तियां सक्रिय रहती हैं, एक संगठनमूलक, दूसरी विघटनकारी। गत हजारों वर्षों में *मनुष्य ने अपनी जीवन यात्रा में अपने आपको 'स्व' के संकुचित घेरे से* निकाल कर अधिक से अधिक विस्तृत और व्यापक बनाना चाहा है। विकास की इस दशा में उसने परिवार, गांव, बिरादरी, प्रान्त और राष्ट्र बनाये और उनसे भी आगे बढ़ कर विश्वात्मा की भी कल्पना की। परन्तु आत्मविकास और एकता मूलक इन प्रयासों के साथ ही विघटन और सिकुड़न की शक्तियां भी छाया की भांति उसके साथ लगी रहीं। ये शक्तियां उसका मार्ग अवरुद्ध कर उसे खंड-खंड करती रहीं और न पुरुष का भेद था न स्त्री का, और न ही हिन्दू और मुसलमान का कोई

भेद था ।

समाज की भावात्मक एकता के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा यह है कि लोग अपना दृष्टि विस्तार संकुचित कर लेते हैं । अपनी भाषा, अपनी जाति और अपने प्रान्त या क्षेत्र के अतिरिक्त और किसी के न तो निकट ही जाते हैं न उनके संबंध में जानने का कुछ प्रयास ही करते हैं । सुप्रसिद्ध यात्री अलबरूनी ने तत्कालीन हिन्दुओं की संकुचित वृत्ति का वर्णन करते हुए लिखा था—"हिन्दू लोग समझते हैं कि उनको जैसा दूसरा देश नहीं, उनके राजाओं जैसे दूसरे राजा नहीं, उनके धर्म जैसा दूसरा धर्म नहीं, उनके शास्त्रों जैसा दूसरा शास्त्र नहीं । यदि तुम खुरासान और ईरान के शास्त्रों और विद्वानों के संबंध में उनसे बातचीत करोगे, तो वे तुमको मूर्ख ही नहीं मिथ्यावादी भी समझेंगे । वे यदि प्रयास करें और दूसरों से मिले जुले तो उनकी यह प्रकृति नहीं रहेगी, कारण उनके पूर्वज ऐसे संकुचित नहीं थे ।

शताब्दियों से पली इस संकुचित वृत्ति को सर्वप्रथम गुरु नानक ने तोड़ा । उन्होंने अपने जीवन में चार बड़ी यात्राएं कीं । इन्हें 'गुरु नानक की उदासियां' कहा जाता है । पहली यात्रा पूर्वी प्रदेश की थी । लाहौर से चलकर हरिद्वार, आगरा, काशी, भागलपुर, ढाका, चटगांव होते हुए वे ब्रह्म प्रदेश चले गये । दूसरी यात्रा में वे राजस्थान, महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के अनेक स्थानों पर रुकते हुए लंका पहुंचे । तीसरी यात्रा में ये बद्रीनाथ और हेमकुंड की यात्रा करते हुए नेपाल और तिब्बत तक पहुंचे और अपनी चौथी यात्रा उन्हें अपने देश की सीमाओं से बहुत दूर मक्का-मदीना और बगदाद तक ले गई

उस समय में जब देश कीसीमाओं से बाहर जाना धर्मभ्रष्ट हो जाना था, गुरु नानक ने तीन-तीन बार विदेशों की यात्रा कर उस धर्म का सन्देश दिया, जो व्यक्ति को आत्मसंकोच का नहीं, आत्म-विस्तार का मार्ग दिखाता है, जिसकी प्रेरणा से सभी सीमाएं टूट जाती हैं और वह अपने आपको चारों ओर फैले हुए जन-जीवन में आत्मसात् कर लेता है । गुरु नानक ने जगन्नाथपुरी के मन्दिर में उस अखंड सत्ता की जो अद्भुत आरती की, वह उनकी व्यापक आध्यात्मिक दृष्टि का ज्वलंत उदाहरण

है। उस आरती मे भौतिक थाल, धूप, दीप और मोतियो की आवश्यकता नहीं रही, वहां आकाश ही थाल बन गया, सूर्य और चन्द्रमा दीपक बन गये, तारे मोती बने, मलयानिल धूप का काम करने लगा, पवन चवर डुलाने लगा और सम्पूर्ण वनस्पति ही पूजा के फूल बन गयी। गुरु नानक की रचनाएं इस बात की साक्षी है कि उस समय के वे सभी मतो के नेताओ से मिले थे। उनके विचारो को समझने का उन्होने प्रयत्न किया था और अपने विचार उन तक पहुचाए थे। उस समय का शायद ही कोई ऐसा मत हो, जिसकी ओर गुरु नानक ने ध्यान न दिया हो और उस पर अपने विचार प्रकट न किये हो।

गुरु नानक ने देखा कि लगभग सभी धर्मों मे बाहरी चीजों पर जोर दिया जा रहा था और उनके कारण पारस्परिक झगडे हो रहे थे। लोगो को छला जा रहा था। उनमे अन्य धर्मों के प्रति घृणा और असहिष्णुता फैलाई जा रही थी। हर किसी का अपना अलग ईश्वर था, उनकी नजर मे कोई मलेच्छ था, तो कोई काफिर। और कोई नास्तिक लोगो मे बेहद तगदिली थी। धर्म प्यार के बजाय नफरत करना सिखा रहे थे। गुरु नानक ने धर्मो के इस प्रतिक्रियावादी स्वरूप का खडन किया, उनके जजाल मे से लोगों को निकाला और अच्छा एव सच्चा जीवन जीने के लिए बहुत सीधा और सरल रास्ता बताया। उस रास्ते पर हर कोई चल सकता था।

यह वह समय था, जब देश मे उद्योग और व्यापार मे काफी प्रगति हो रही थी। लाहौर, मुलतान, दिल्ली आदि शहरों मे बड़ी-बड़ी मडियां कायम हो चुकी थीं। नये शहर बन रहे थे। इस्लामी राज्यों ने पश्चिमी देशो से होने वाले व्यापार को बढावा दिया। कई बादशाह और शहजादे खुद भी व्यापार करते थे। उनके काफिले विदेशों में जाया करते थे। उस उद्योग और व्यापार ने देश के पुराने सामाजिक सबंधो को तोडा। लोग अपनी मन मरजी का पेशा चुनने लगे। विद्या पर से ब्राह्मणों और व्यापार पर से वैश्यों की इजारेदारी हटने लगी। वर्ग टूटने लगे। एक नई धनवान व्यापारी श्रेणी ने जन्म लिया। यह श्रेणी पुराने सामाजिक ढाचे मे रह कर उन्नति नही कर सकती थी। उसने उस ढांचे को तोड़ा

आजादी ली और व्यापार को बढ़ाया। इससे धार्मिक कट्टरता, तंगदिली, छूत-छात आदि मिटे और इनके स्थान पर एकता, मिलाप और प्यार पर जोर दिया जाने लगा। यह नई लोक चेतना थी, जिसे गुरु नानक ने पहचाना और उसे वाणी दी। जो लोग इस एकता, मिलाप और प्यार की स्थापना करना चाह रहे थे, वे एक नए स्वस्थ समाज की स्थापना कर रहे थे।

आध्यात्मिक तौर पर एकता का प्रचार भक्तिवाद और सूफीवाद ने ही किया था। ईश्वर एक है, जो सब के दिलों में समाया हुआ है। किसी क दिल दुखाना पाप है। अच्छे काम करने चाहिएं। सभी बराबर हैं। बड़ा वह है, जिसके कर्म बड़े हैं। यह नये उभरते हुए समाज की विचार-धारा थी।

कई पुराने सन्त, भक्त, सूफी, फकीर आदि प्रचलित कर्मों की बुराइयों और पाखंडों का जिक्र तो करते हैं, पर किसी ने भी अपने समय के शासकों के अत्याचारों का जिक्र नहीं किया, दुखी और दलित लोगों के प्रति सहानुभूति प्रकट नहीं की और न ही शासकों के विरुद्ध साफ तौर पर आवाज उठाई। पर गुरु नानक ने राजनीतिक रचनाओं की भी सृष्टि की। एक तो उन्होंने अपने समय की राजनीतिक तस्वीर का चित्रण किया, जिसमें राजाओं, जागीरदारों और शासकों को कसाई, बाघ, अत्याचारी, खून पीने वाले आदि कहा और उनकी घोर निन्दा की। दूसरे, उन्होंने अपनी रचना 'बाबर-वाणी, में बाबर के हमले की दर्दनाक घटनाओं का चित्रण किया। वे घटनाएं उनकी आंखों के सामने हुई थीं। उन्होंने अपने कानों से लोगों की हाय-पुकार सुनी थी। पंजाब में जो हाहाकार मचा हुआ था, वह उनके दिल पर गहरा असर कर रहा था। एक सच्चे 'लोक कवि' के रूप में उन्होंने अपने समय को वाणी दी और अपने देश-प्रेम का सबूत दिया।

जब बाबर ने भारत पर हमला करने के लिए खुरासान से कूंच किया था, तो सारे पंजाब में उसकी खबर फैल गई थी। बाबर ने यह हमला क्यों किया। उस समय लोधी राज प्रवंश की क्या हालत थी ? लोग बाबर के हमले के बारे में क्या सोच रहे थे ? इस बारे में गुरु नानक पूर्ण रूप

से सोचते थे।

गुरु नानक साधारण जनता के प्रतिनिधि थे । वे साधारण जनता के बीच से उठे, जनता के बीच ही रहे और उन्होने अपने अन्तिम दिवस कृषि-कार्य करते हुए ही व्यतीत किये । अपनी कविता मे भाव चित्र एवं शब्द चित्रों के माध्यम से जिन कल्पनाओं को उन्होने उपस्थित किया, उनमे सामान्य जनता की भावनाए प्रतिबिंबित होती हैं।

गुरु नानक का सम्पूर्ण काव्य प्रधान है । 'जिह डिट्ठा तेहो कहिआ, (जैसा देखा वैसा कहा) वाक्य जैसे उनके सम्पूर्ण काव्य की अन्तरात्मा हैं। उन्होंने सभी धर्मों का आदर किया और एक व्यापक मानव-धर्म की प्रतिष्ठा की । इस मानव-धर्म के माध्यम से समाज मे समता की रक्षा स्थापना करना उनकी सबसे बडी देन है । उन्होने गृहस्थ-समाज के निर्माण मे प्रत्येक व्यक्ति को कर्मण्य और उद्योगशील बनने की प्रेरणा दी। उनकी दृष्टि में आदर्श व्यक्ति वही है, जो परिश्रम द्वारा धन का उपयोजन करता है और फिर अपने हाथ से परमार्थ के कामो के लिए दान देता है। वही उस सत्य मार्ग को पहचान सकता है ?

'घायल साथ किछु हत्थहु देहि।'
नानक राह पछानहि सेइ ॥

००

लाला शिवराज प्रसाद सिन्हा

गुरु नानक और उनका सत्य मार्ग

किसी देश का इतिहास, बहुत हद तक उसके महान् नरनारियों का इतिहास होता है। हमारा इतिहास इन विशिष्ट व्यक्तियों के नाम से भरा पड़ा है। गुरु नानक देव मध्यकाल के ऐसे ही एक विशिष्ट व्यक्ति थे। उनका जन्म ऐसे समय में हुआ था, जब भारत एक भयानक सामाजिक-राजनैतिक आर्थिक और आध्यात्मिक संकट से गुज़र रहा था। कुछ सदियों पूर्व मुस्लिम राज्य भारत में आया था और बाबर ने उसी समय मुगलवंश की स्थापना की थी। एक नए धर्म के आगमन से समाज में काफी उथल-पुथल हो गई और उसके प्रतिक्रिया स्वरूप आध्यातिमक तथा मानसिक संघर्ष का एक नया रूप हो चला, जो वास्तव में भारत के मुगल साम्राज्य के लिए व्यावाहारिक चुनौती था।

गुरु नानकदेव सचमुच युग पुरुष थे और लोगों का विश्वास है कि वे एक अवतार ही थे। तुलसीदासजी ने बालकांड में अवतार के हेतु के सिलसिले में इस प्रकार कहा है:—

'जब जब होइ धर्म की हानी,
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी
करहिं अनीति जाई नहिं बरनी,
सीदहिं विप्र धेनु सुर धरती,
तब-तब प्रभु धरि विविध शरीरा।
हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा।'

गुरु नानक देव का जन्म १४६९ ई० में तलवन्डी (जो अब ननकाना

साहब कहलाता है) नामक स्थान मे बैसाख के महीने में हुआ था। (किसी अज्ञात कारणवश उनका जन्म दिवस कार्तिक की पूर्णिमा को मनाया जाता है।) जिस समय नानक इस पृथ्वी पर अवतरित हुए, उस समय वे बड़े जोर से ठठा कर हंसे। उनकी मुसलमान दाई दौलता ने प्रसूति-गृह से बाहर आकर लोगों से कहा कि नवजात शिशु ने तो इतने जोरो से हंसी हंसी है कि मालूम होता है कि किसी वयस्क की हंसी है। कुल पुरोहित हरदयालजी ने जब शिशु का मस्तक देखा, तो वे नत-मस्तक हो गए और उन्होंने उस बच्चे को प्रणाम किया। बहुतों का कहना है कि साधु-महात्माओं ने नानकजी के जन्म के समय अनहदनाद सुना। उनके जन्म के समय कुछ विलक्षण घटनाएं हुईं, जो युग पुरुषों या अवतारों के आविर्भाव होने पर होती हैं।

नानकदेवजी मध्य श्रेणी के कुल मे पैदा हुए। उनके पिता का नाम मेहता कालू और माता का नाम तृप्ता था। दोनों श्रद्धावान हिन्दू थे। मेहता कालू पटवारी थे। मेहताजी ने नानक को शिक्षा प्राप्ति के लिए पाठशाला भेजा, जहां पंडितजी ने भाषा की वर्णमाला तथा गणित पढ़ाना प्रारम्भ किया। उसके बाद मौल्वी साहब ने उन्हें अरबी और फारसी पढ़ाई। लेकिन कालू मेहता के यहां बराबर यह शिकायत आती थी कि नानक लगन और उत्साह से विद्याध्ययन नहीं करता है और बराबर निकट के घने जंगल में निकल जाता है और वहां साधुओं से विचार-विमर्श करता रहता है। इससे उनके माता-पिता बहुत चिंतित रहा करते थे। वे तो उन्हें चुस्त चालाक और सफल सामाजिक पुरुष के रूप में देखना चाहते थे। अन्त में, जब कालू मेहता ने देखा कि इस लड़के से पढ़ाई-लिखाई का काम नहीं होगा, तो उन्होंने नानक से कहा कि तू पशुओं को चराया कर।

पुरातन जनम साखी

लेकिन इस काम में भी नानकदेव अपने पिता को संतुष्ट नहीं कर सके। एक बार कुछ पशुओं को चराने के लिए नानक गांव के बाहर गए। वे बरगद पेड़ के नीचे निरंकार परमात्मा के ध्यान में लीन हो गए और पशुओं ने फसल लगे खेतों को चरना शुरु किया और सारी फसल

नष्ट कर दी। कालू मेहता के यहां जोरदार शिकायत पहुंची। वे बहुत नाराज हुए। लेकिन नानक ने कहा कि वे कुछ नहीं जानते। पुरातन जन्म साखी। (नानकदेव की जीवन) से यह पता चलता है कि मुआवजा देने के लिए कितनी फसल बरबाद हुई है, जब कालू मेहता और गांव के कुछ सम्भ्रान्त लोग खेत पर गए, तो खेत में पूरी फसल लगी पायी और शिकायत करने वालों की गांव वालों ने बड़ी धज्जी उड़ायीं। पुरातन जन्म साखी में एक और विचित्र घटना का उल्लेख मिलता है। एक बार पशु चराते-चराते नानक चरागाह में सो गए। तेज धूप से बचाने के लिए एक विशाल विषधर ने उनके पास आकर और अपने फन को फहरा कर उनके सिर पर छाया कर दी। लोगों ने इस दृश्य को देखा और कालू मेहता से कहा। कालू मेहता बड़े चिंतित हुए और नानक को गृहस्थी में लाने के लिए प्रयासशील हो गए।

कालू मेहता ने राजपूत वंश-परम्परा से नानक का यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न करने का निश्चय किया और मुहूर्त भी ठीक हो गया और उस दिन विशाल भोज का भी आयोजन किया गया। जब पंडितजी ने यज्ञोपवीत मंत्र पूरा करने के पश्चात् नानक को पहनने के लिए दिया, तो उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा—'मैं ऐसा जनेऊ नहीं पहनूंगा जो गन्दा हो जाय, टूट जाय, जल जाय और जो मनुष्य के जीवन भर नहीं रहे। मैं तो ऐसा यज्ञोपवीत पहनना चाहता हूं, जिसमें दया की कपास हो, संतोष का धागा, संयम की गांठ और सत्य की ऐंठन हो। नानक की धृष्टता को कालू मेहता सहन नहीं कर सके और उन्होंने विचार किया कि यदि इस लड़के की शादी कर दी जाए, तो यह गृहस्थी में फंस जाएगा और इसका उचक्कापन समाप्त हो जाएगा। अन्त तो गत्वा उन्होंने नानक की चौदह वर्ष की कच्ची उम्र में वटाला निवासी श्रीमूला की पुत्री सुलक्खनी से विवाह कर दिया। उन्हें दो पुत्र रत्न भी प्राप्त हुए—श्रीचन्द और लक्ष्मी चंद। लेकिन नानक दुनिया से बिलकुल विरक्त ही रहे।

सत्संग में अनुराग

पिता ने घर की आमदनी बढ़ाने के लिए नानक के लिए एक दूकान

खोल दी। एक बार कालू ने कुछ रुपए दिए और नानक से कहा कि बाजार जाकर फायदे वाला सौदा खरीद कर दुकानदारी के लिए लाना। रास्ते में कुछ ऐसे महात्मा मिल गए, जिन्होंने कई दिनों से भोजन नहीं किया था। नानक ने सब रुपयों का भोजन खरीद कर उन महात्माओं को खिला दिया और खाली हाथ घर लौटे। लेकिन पिता के डर से नानक गांव के बाहर ही खड़े रहे। जब कालू ने यह सुना कि नानक सारा रुपया लुटा कर गांव के बाहर खड़ा है, तो क्रोध से तमतमाते हुए वहां गए और पूछा कि तुमने रुपयों का क्या किया। नानक ने शान्ति से उत्तर दिया— आपने रुपए फायदेवाले सौदा खरीदने के लिए दिया था। मैंने समझा कि भूखे महात्माओं को भरपेट खिलाने में जो फायदेवाला सौदा होगा, वैसा दूसरा नहीं होगा, इसलिए मैंने उन महात्माओं की भूख को शान्त करने के लिए रुपया खर्च कर दिया।" उत्तर सुनकर पिताजी मन-ही-मन बहुत दुःखी हुए, लेकिन वे कर ही क्या सकते थे।

दुकानदारी से तंग आकर पिता ने सोचा कि नानक से खेती कराई जाए। पिता के इस निर्णय पर नानकदेव ने कहा कि मैं तो दूसरी ही खेती करता हूं, जिसमें मेरा मन हलवाहा है, अच्छे कर्म खेती है, नम्रता जल है, तन खेत है, ईश्वर का नाम बीज है, सन्तोष हेंगी है, निर्धनता मेड़ है, भाव से प्रेरित यह बीज फूलेगा और भंडार भर देगा।

ऐसा उत्तर सुनकर माता-पिता बहुत चिंतित हुए और उन लोगों ने समझा कि नानक कुछ पागल हो गया है, इसका कुछ इलाज होना चाहिए। वैद्य को बुलवाया गया। वैद्य ने नब्ज देखी। नानक ने मुस्कराकर कहा—"हे वैद्यराज! मेरी नब्ज क्या देखते हो? पीड़ा मेरे शरीर में नहीं है, मेरी आत्मा में है।"

वैद्य ने पूछा—"तुम्हारी आत्मा का रोग किस प्रकार का है?

नानकजी ने कहा:—

"दुखु विछोड़ा इक दुखु भूख।
इक दुखु सकत वार जमदूत॥
इक दुखु रोग लगै तनि धाइ।
वैद न भोले दारु लाइ॥
दरदु होवै दुखु रहै सरीर।

को देखता हूं।"

ऐसा सुनकर लोग इन्हें पागल कहने लगे। नवाब का काजी भी ऐसा कहने लगा। इसपर गुरु नानक ने ये शब्द कहे :—

"कोई आखे भूतना को कहे बेताला,
कोई आखें आदमी नानक बेचारा।
भइआ दिवाना साह का नानक कउराना,
हउ हरि बिनु अवरू न जाना।"

तुलसीदासजी ने भी जब उनकी हिन्दू-समाज में शिकायत हो रही थी, ऐसे ही शब्द कहे थे —

"धूत कहौ अवधूत कहौ रजपूत
कहौ जोलहा कहौ कोऊ
काहू के बेटी से बेटा न ब्याहब
काहू के जात बिगाड़न सोऊ
तुलसी सर नाम है राम गुलाम के
जनि बगैं। कहै कुछ कोऊ
मागि के खइबो मसीद मे सोइबो
लेवा को एक न देवे को दोऊ।"

नवाब को नानकजी की जागृत आत्मा का आभास मिल चुका था। उन्होंने नानकदेव को समझाया कि वे नौकरी न छोड़ें, लेकिन नानकदेव ने नहीं माना और सुलतानपुर छोडकर अपने शिष्य मरदाना के साथ जगल की ओर चले गए। मरदाना 'रबाब' बजाता था और नानकदेव अपनी मस्ती मे स्वतः उद्भत शब्द गाया करते थे। यही से उनकी फकीरी जिन्दगी का श्रीगणेश हुआ।

श्री महेन्द्र सिंह 'प्रभाकर'

गुरु नानक और उनका साहित्य

गुरु नानक के साहित्य को हम वस्तुतः दो ही दृष्टियों से देखते हैं — भक्ति भावों एवं समालोचनात्मक दृष्टि से। भक्ति भाव के सन्दर्भ में गुरु नानक की वाणी को गुणगान है एवं उसके स्पर्श से अमरत्न प्राप्त करने का भाव जिज्ञासुओं में दर्शाया जाता है। हम उनके काव्य की समालोचनात्मक दृष्टि से विवेचना करेंगे। एक आधारभूत बात यह है कि गुरु नानक का प्रायः सम्पूर्ण काव्य संगीतात्मकता से लिप्त है। उनकी एक कृति 'जपु' को छोड़ अन्य सभी भजन एवं काव्य-रचनाएं रागों में आबद्ध हैं। इस तरह राग और कविता का आधारभूत सुमेल उनके साहित्य में है। वस्तुतः भक्तिकाल के प्रायः सभी सन्त कवियों ने अपनी रचनाएं रागों के वातावरण एवं आरोह-अवरोह के आधार की हैं। कबीर, नामदेव, मीरा, दादू, सहजोबाई, पीपा, रविदास इत्यादि भक्तों की रचनाएं इसका ज्वलन्त प्रतीक हैं। गुरु नानक ने अपने काव्य-सृजन में कवियों की इस परम्परा का अक्षरशः समर्थन किया। गुरु नानक के काव्य में हम पिंगल की उपेक्षा पाते हैं, जिसका मूल कारण उनके काव्य का संगीत पर आधारित होना ही है। विभिन्न रागों का अपना विशिष्ट स्वभाव होता है, उन्हें गाने का समय, मौसम, रस, लिंग, स्थानीयता, चाल एवं स्वरूप भी विशिष्ट और वैयक्तिक होता है। कभी-कभी कोई राग कुछ रागों के संयोग से निर्मित होता है। इस तरह किसी भी राग में लिखे जाने वाले गीत या कविता का स्वरूप सम्बन्ध राग के स्वभाव एवं स्वरूप पर ही निर्मित होगा। कुछ राग प्रसन्नता सूचक होते हैं, कुछ विषाद सूचक, किन्हीं में उपरामता या

क्रान्ति अथवा शौर्य-प्रदर्शन का भाव निहित होता है, जिनकी अभिव्यक्ति सम्बद्ध कविता में होनी आवश्यक है। गुरुदेव ने अपने काव्य-सृजन में रागों का चयन अलंकारिता, रसात्मकता, वातावरण एवं छन्द व्यवस्था रागों के अनुसार ही की। रागों के चयन में उन्होंने पूर्ण निष्पक्षता एवं समदृष्टता से काम लिया। सभी के लिए दरवाजे खुले रखे। हिन्दुओं के विभिन्न रागों में से श्री, गौड़ी, सारंग और मल्हार को काव्य रूप दिया तो मुसलमानों के राग आसा, सूही और तिलंग में विचार रचनाएं की। योगियों के प्रिय राग रामकली एवं गूजरों के 'गुजरी' राग को भी गुरुदेव ने अपने काव्य का आधार प्रदान किया। पंजाब का स्थानीय प्रभाव लिए हुए 'राग मांझ' भी उनके सृजन का पात्र बना। उन्होंने बसन्त, मल्हार, सारंग, सूही इत्यादि रागों में सामयिक प्राकृतिक प्रभाव प्रदान किया एवं सामूहिक त्योहारों के अवसर पर गाये जाने वाले काव्य की रचना कर राष्ट्रीय एकता का आधार तैयार किया। उनके काव्य में यद्यपि सभी प्रदेशों की छाप है, किन्तु उसमें निहित पंजाबी वातावरण जीवन एवं स्थानीयता का स्पष्ट दिग्दर्शन है। इस तरह गुरु नानक के काव्य को 'छन्द बन्दी' के नियमों में आबद्ध करना उचित नहीं होता। गुरुदेव ने अपने काव्य को 'पिंगल' की अपेक्षा 'संगीत' पर ही आधारित किया, जिसके सन्दर्भ में कुछ मात्राओं का आगे-पीछे घटना-बढ़ना कोई उचित अनुचित कार्य नहीं। ऐसा वस्तुतः संगीत एवं राग की स्वरलहरी के आधार पर ही होता है। गुरुदेव ने अपनी कृतियां १९ रागों में कहीं।"'इनमें विभिन्न राग विभिन्न समयों, अवसरों एवं मौसमों में गाये जाने वाले हैं। श्री राग सख्त गर्मी, अथवा सख्त सर्दी में गाया जाने वाला राग है और इसे चतुर्थ प्रहर में गाया जाना चाहिए। गौड़ी शाम का राग है और इसका वातावरण भी पंजाबी है। आसा प्रातः एवं सन्ध्या के समय गाया जाने वाला सर्द ऋतु का राग है। गुजरी 'गुजरो' की रागिनी है, वडहंस वर्षा-ऋतु से सम्बन्धित है, सोरठ 'मेघ' की रागिनी है, तो धनासरी वैराग एवं उदासीनता की। तिलंग का विषय वियोग है, सर्दी एवं वर्षाऋतु में अर्द्ध रात्रि में इसे गाया जाना चाहिए। सूही दाम्पत्य-जीवन की रागिनी है, बिलावल का समय प्रात:काल है, रामकली योगियों का प्रसिद्ध प्रिय राग है,

नाओं में एक अत्यन्त अहंभावहीन निरीह भक्त का परिचय मिलता है। दिनकर एवं मेकालिफ के शब्दों में 'यह भागा साफ, सादी, सहज्र और प्रभावशाली है।' इनमें हास्य, व्यंग्य, आलोचना, दर्शन, अलंकारिता, रसात्मकता के अतिरिक्त अत्यधिक माधुर्य है। वे जो बात कहते हैं, शान्त व नम्र भाव से कहते हैं। राग मांझ में की गई रचनाओं में तात्कालिक सामयिक स्थितियों की कड़ी आलोचना है। किन्तु यह आलोचना भी अत्यन्त शिष्ट है और इनमें अद्वितीय साहस का ही दिग्दर्शन हुआ है। जहां तक उनके काव्य में सैद्धान्तिक शब्दावली के प्रयोग से दुरूहता उत्पन्न होने की बात है, वह उनकी मज़बूरी थी। बिना सैद्धान्तिक विवेचना के अपने नवस्थापित दर्शन की व्याख्या सम्भव नहीं थी

लोक काव्य

गुरु नानक लोक-कवि थे। उनकी अधिकतर रचनाओं का आधार जन-जीवन का ऊहापोह है। उन्होंने ब्याह-शादियों के अवसर पर गाए जाने वाले छन्द का व्यवहार किया, तो 'शोक मग्न' वातावरण के लिए 'अलाहनिया' भी लिखी। वारें, पैंतीसी पर आधारित पट्टी एवं उसी क्रम में थितीं, ओंकारा तथा बारह महीनों की आध्यात्मिक विवेचना के लिए 'बारा माह' की रचना उनके लोक-काव्य के अमर उदाहरण हैं। साथ ही गुरुदेव ने अपनी रचनाओं में कृत्रिम शब्दों की अपेक्षा जन-भाषा, लोकोक्तियों को काफी प्रोत्साहन दिया। उन्होंने विभिन्न प्रचलित कहावतों का प्रयोग तो किया ही, उनके द्वारा रचित काव्य में भी अद्वितीय लोकोक्तियों का सृजन हुआ है, जो एक लोक-कवि के साफल्य का चरमोत्कर्ष है। यह लोकोक्तियां उन्हीं पंक्तियां के आधार पर अस्तित्व में आई हैं, जैसे—

नाल इंजाने दोस्ती, कदे न आवे रास (वार आसा) 'दुख दारु सुख रोग माया (रहरास), 'मन जीते जगजीत' (जपु) 'कलिकाती राजे कसाई' (वार माझ), 'अपराधी दूना निवे' (वार आसा), 'सच खण्ड वने निरंकार (जपु), 'नानक ते मुख उजले केती छुटी नाल' (जपु), सम्पूर्ण तेरे में नाहीं कोए (जपु), 'एक तुही एक तुही (वार मांझ),' जिन-जिन नाम ध्याइया, तिनके काज सरे (बारा मांह), 'गुरु किरपा ते

नाम पछानियां' (ओंकार रामकली) 'जिसनों बखसे सिफत सालाह, नाक पातशाही पातशाह' (जपु) सब महि जोति-जोति है सोए, तिस दे चानन सब महि चानन होए' (आरती) 'सूरज एको रुत अनेक, नानक करते के केते वेस (कीर्तन मोहिला) इत्यादि।

चित्रकारिता

भावात्मक चित्रण काव्य के स्थायित्व एवं हृदयस्पर्शता की एक सबल कसौटी है। साहित्यकारों का एक विशाल पक्ष काव्य एवं साहित्य को मानवीय भावनाओं का कलात्मक चित्र मानता है। गुरु नानक एक सफल चित्रकार थे। उन्होने अपनी कलम से राजाओं की कर्त्तव्यहीनता एवं दमन, अमीरों की दुष्प्रवृत्ति, मानव-हृदय की अव्यवस्था निराकार एव साकार ईश्वर के स्वरूप, प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुपम छटा, दैनिक व्यवहार के चित्रण इत्यादि अपने काव्य मे प्रस्तुत किए। उन्होंने अपनी शक्ति काल्पनिक स्वर्ग एव सुख का ब्योरा देने मे नही गवाई। 'आपकी कविता में खिलते फूल, उड़ते पक्षी, हल चलाते किसान, त्यागी वैरागी, भ्रमण, करते योगी, वाद-विवाद में व्यस्त पण्डित एवं मुल्ला, मालिक से बिना मजदूरी लिए बोझ उठाते श्रमिक, लाल पोशाक वाले भक्त, सोहागन स्त्रियों के सम्पूर्ण स्वस्थ जीवन इत्यादि के उत्साह से भरे अनगिणत चित्र दिखाई देते हैं।' (डा० तारन सिंह गुरु नानक : चिन्तन और कला)।

इन चित्रो में एक समान तत्व यह पाया जाता है कि गुरुदेव ने सभी चीजो मे आध्यात्मिक रंग डाला है। जैसे सावन का महीना है। हृदय में 'प्रियनेह' की उमंग हिलोरें ले रही हैं। मेघ धरा से किलोल करता है। चारो और मेंढक एव मोर अपने प्रिय स्वर से सगीतात्मक वातावरण का सृजन करते हैं। एक ओर 'पपीहा' प्रिय-प्रिय की रट लगा रहा है, सर्प चारो ओर निष्कंटक घूम रहे हैं, किन्तु प्रियतम रूपी ईश्वर परदेश में है। बाली (स्त्री रूपी भक्त) को सुख की प्राप्ति हो भी तो कैसे :—

'जल-थल नीर भरे, बरस रुते रग पानी।

वरसै निसि काली, क्यों सुख वाली,
दादर मोर लवन्ते।
प्रियो प्रियो चवे। ववीहा वोले, भुयंगम फिरे डसन्ते।'

(वारा मांह)

गुरु नानक ने अपने काव्य में बहिर्मुखी एवं अन्तर्मुखी प्रभाव का स्पर्श कराने की क्षमता निहित की है। उन्होंने परम्परागत प्रतीकों को अपने चित्रण में स्थान दिया। ईश्वर को भतार, कन्त, वर, पीर, साहिब इत्यादि प्रतीकात्मक शब्दों से सम्बोधित किया तथा सोहागन (भक्त), पंथ सुहेला (भक्तिमार्ग), दुहेली (दुखी स्त्री), अमृत (शुभ गुण), हंस (भक्त), वग (बगुला), (पाखण्डी भक्त), कीचड़ (बुरी संगत), मेल (अविगुण) इत्यादि प्रतीकों को अपने वाद-विवादों में प्रयुक्त किया। साथ ही, उन्होंने कुछ पौराणिक प्रतीक भी प्रस्तुत किए एवं ईश्वर के विभिन्न स्वरूपों यथा—दामोदर, गोविन्द, हरि, मधुसूदन, राम, गोरख इत्यादि परम्परागत शब्दों को प्रोत्साहन देने एवं प्रयुक्त करने का कार्य भी किया। साथ ही उन्होंने राम, रावण, पांडव, कृष्ण, हरिचन्द, बल इत्यादि विभिन्न नरेशों तथा ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र इत्यादि देवताओं का उल्लेख किया। मानवीय हृदय के अन्तर में प्रवेश करने, मनुष्य को झकझोरने, उसकी चिन्ता एवं डर दूर करने, मन की आवश्यकताओं को हटाने, उसमें भरोसा, आशा, तड़प, निश्चय एवं परिपक्वता कायम करने में अदृष्ट वस्तुओं के जीवन्त चित्रण की जो शक्ति गुरुदेव की कविता में है, वह बेमिसाल है। ऐसी मिसाल कम ही मिलती है (प्रो० करतार सिंह 'जीवन कथा (श्री गुरु नानकदेव)।'

गुरुदेव ने जन-मानस के अन्तःकरण का गहन अध्ययन किया और तद्विषयक भावनाओं को मूर्त रूप दिया। उनकी [illegible], उनके श्लोक, उनके पद उनके चित्रों की मुंह बोलती तस्वीरें हैं। [illegible] ने [illegible] करते हुए देखे हैं, जो [illegible] हुई थी। [illegible] का, उनकी कृतियों का, उनके चिन्तन का, उनके [illegible]

सशक्त एवं सजीव चित्र है। वह शेख ब्रह्म, लालो या सज्जन जैसे किसी भी वृत्ति के मनुष्य के साथ बातें करते हुए उसके हृदय में पैठ जाते हैं। वस्तुत: उनका साहित्य तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियों का उत्कृष्ट एक्सरे है, जिसमें उन्होंने सभी वर्गों को, उनकी समस्त खूबियों और कमियों सहित, यथार्थ स्वरूप में प्रस्तुत कर दिया है।

● ●

डॉ० रणवीर सिंह

गुरु नानक के शिष्य

गुरु नानक की वहन को उनमें देवत्व के लक्षण वचपन से ही दिखाई देने लगे थे, लेकिन वहन ने यह रहस्य लोगों से छुपाए रखा। ईश्वर का निमन्त्रण पाते ही नानक अपनी लम्बी यात्रा के लिए निकल पड़े। उनकी वहन उनकी पहली शिष्या वनीं। अपने भाई से उन्होंने कहा, "ऐ ईश्वरीय दूत, आपने हमारी आत्मा में एक माली की तरह आध्यात्मिक जीवन का वीज वो दिया है। आपने इस पौधे को सींचा है। यह पौधा आपके विना कैसे वढ़ेगा ? आप जव दूर चले जाएंगे, हमें कैसा लगेगा ?

नानक ने उत्तर दिया, "वहन, मुझे ईश्वरीय संदेश प्राप्त हुआ है। इस आदेशानुसार मेरे पैर मुझे जहां ले जाएं, मुझे जाना ही चाहिए। सभी ओर अशान्ति की ज्वाला धधक रही है। यदि तुम कुछ समय के लिए धैर्य धारण कर लो, तो मेरे जाने से अनेक व्यक्तियों को शान्ति, जीवन और प्रकाश मिल सकेगा। जव भी तू मेरे वारे में सोचेगी, में शारीरिक तौर पर न सही, तेरी आत्मा के किसी कोने में अवश्य तेरे पास रहूंगा।"

और गुरु नानक इस विशाल संसार में लोगों तक ईश्वरीय संदेश पहुंचाने लगे। मार्ग में उन्हें सभी वर्ण और जातियों के लोग मिले, जिन्हें उन्होंने प्रेम का संदेश दिया। इनमें से कई पर उनका इतना प्रभाव पड़ा कि वे नानक के शिष्य वन गए। इन शिष्यों ने निःसंदेह गुरु नानक के संदेश का प्रचार करने में महत्वपूर्ण योगदान किया।

भाई लालो

नानक का पहला पड़ाव अमीना (अव पाकिस्तान) में था। अमीनावाद में एक गरीव वढ़ई लालो रहता था। नानक उससे मिलने

गए। लालो अपने घर के आंगन में दरवाजे की तरफ़ मुह किए अपने काम में व्यस्त था। नानक के एक प्रश्न के उत्तर में लालो ने बताया कि वह लकड़ी की खूटियों की मरम्मत कर रहा है। लालो ने प्रश्नकर्त्ता को देखने के लिए अपना सिर भी नहीं उठाया। उसने सोचा कि किसी जान-पहचान के व्यक्ति ने प्रश्न पूछा है।

नानक ने फिर सवाल किया—"क्या? खूटियों की मरम्मत कर रहे हो? जीवन का क्या इससे अच्छा कोई उद्देश्य नहीं है? आओ, तुम्हें अपने मन का परिष्कार करना सिखाए।" इस बात से लालो बहुत प्रभावित हुआ। लालो ने गुरु की ओर देखा और विनम्रता तथा श्रद्धा से अपना सिर नवाया। लालो को प्रथम बार यह अनुभव हुआ कि उसने अपनी तमाम जिन्दगी छोटी-छोटी बातों में गंवायी। निःसन्देह जीवन का उद्देश्य कुछ अच्छा कार्य करना है। लालो अब एक भिन्न व्यक्ति था।

सज्जन ठग

लम्बी यात्रा के बाद गुरु नानक रबाब-वादक मरदाना के साथ सज्जन के घर पहुचे। सज्जन का अर्थ है, अच्छा व्यक्ति। लेकिन वह तो इससे बिल्कुल उल्टा था। सफेद कपड़े पहने एक जाप की माला हाथ में लिए यह व्यक्ति एक धार्मिक व्यक्ति होने का ढोंग करता था। इसने एक सराय बनाई थी, जिसके दरवाजे के पास एक मन्दिर और एक मस्जिद थी। राह चलते व्यक्तियों को वह अपनी सराय में रात व्यतीत करने के लिए निमन्त्रित करता था। एक बार सो जाने के बाद ये लोग सज्जन के शिकार बन जाते थे। उनका सारा माल गायब कर दिया जाता था। गुरु नानक को भी सराय में ठहरने के लिए निमन्त्रित किया गया। सज्जन ने नानक की अत्यधिक आवभगत की, क्योंकि उसने समझा कि नानक कोई मालदार जौहरी है। गुरु के बहुत देर तक जागते रहने पर सज्जन अधीर हो उठा। वह बोला—"श्रीमान् कुछ देर सो लीजिए, इससे आपको आराम मिलेगा।" लेकिन नानक ने जवाब दिया—"अभी हमारे आराम करने का समय नहीं हुआ है। यदि तुम्हें आराम करना है, तो तुम जाकर आराम करो। ईश्वर के दूत, जब तक ईश्वर की आज्ञा न

हो, सोते नहीं हैं।" उन्होंने मरदाना से रबाब बजाने के लिए कहा और स्वयं एक मर्मस्पर्शी गीत गाने लगे। गाने का सज्जन पर गहरा प्रभाव पड़ा, और वह अपने बुरे कर्मों के लिए प्रायश्चित करने लगा तथा फौरन ही गुरु नानक के पैरों में गिर पड़ा और उसने पाप न करने की कसम खाई।

ब्रह्मदास और कमल

अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए इसके बाद गुरु नानक कश्मीर की मनोहर घाटी में पहुंचे। यहां ब्रह्मदास और कमल उनके उपदेशों से प्रभावित हुए। नानक ने कमल को कुर्रम घाटी में बसकर उनके संदेशों का प्रसार करने का आदेश दिया। यहां से 'नाम' का गीत काबुल, कन्धार और तिराह तक पहुंचा। ब्रह्मदास को, जो ऊंट पर किताबें लादकर नानक के पास पहुंचा था, गुरु के सामीप्य में शान्ति मिली।

भाई बुधा

एक दिन जब गुरु एक पेड़ की छांव में बैठे थे, गांव के लोग उनके 'दर्शन' के लिए जमा होने लगे। पास ही के खेत में एक बच्चा इस दृश्य को देख रहा था। उसने सोचा कि वह भी अपनी माता को एक दिन गुरु के 'दरसन' करने के लिए लाए। उसे अनुभव हुआ कि छोटे तिनकों को पहले आग लगती है। अतः खुद छोटा होने के कारण उसे स्वयं पहले गुरु से मिलना चाहिए। नानक ने बच्चे की कथा सुनी और बुधा का नाम दिया। चाहे बच्चा छोटा था, लेकिन उसे अक्ल काफी थी। भाई बुधा ने अपना बाकी जीवन ईश्वर के ध्यान में व्यतीत किया। भाई बुधा ईश्वर में लीन रहे। गुरु नानक के पांचों गुरुओं में, गुरु गोविन्दसिंह तक उसने गुरु नानक का रूप देखा।

दुनीचन्द

गुरु एक बार लाहौर से गुजरे। एक साहूकार दुनीचन्द अपनी प
के साथ गुरु को श्र--सुमन अर्पित करने के लिए आया। गुरु ने दुनी

को एक सुई दी और कहा, "दुनीचन्द, इसे रखो और दूसरी दुनिया में मुझे वापस कर देना। दम्पति ने चकित होकर पूछा—"इस सुई को अपनी मृत्यु के बाद हम अपने साथ कैसे ले जा सकते हैं।" गुरु ने प्रश्न का उत्तर प्रश्न में ही दिया, "तुम क्या सोचकर इतनी सारी दौलत जमाकर रहे हो?"

दुनीचन्द निरुत्तर हो गया। उसे अकस्मात् नई अनुभूति हुई। उसने पूछा—"गुरु हम अपने साथ क्या ले जा सकते हैं? गुरु ने उत्तर दिया ईश्वर के लिए प्रेम रूपी सम्पत्ति। हरिनाम तुम्हारे साथ जाएगा।" दुनीचन्द ने पूछा—"यह सम्पत्ति हमें कैसे मिल सकती है? नानक ने उत्तर दिया, गुरु के आशीर्वाद से।" दुनीचन्द और उसकी पत्नी नानक के शिष्य बन गए। स्वयं ईश्वर की भक्ति में लीन होकर उन्होंने अपनी सम्पत्ति गरीब और जरूरतमन्दों की सेवा में लगा दी।

बगदाद में बहलोल

मक्का से गुरु मदीना पहुंचे और वहां से बगदाद गए। बगदाद में नानक ने बहलोल से बातचीत की। हाल ही में बगदाद में पीर दस्तगीर की दरगाह के अहाते में कुछ शिलाएं मिली हैं। इन शिलाओं पर अंकित शब्दों और स्थानीय लोगों से प्राप्त सूचना के आधार पर स्वीडन के एक यात्री ने कुछ वर्षपूर्व अपनी पुस्तक 'दी स्वोर्ड' में एक कविता लिखी थी। इस कविता में यह बताया गया है कि बहलोल को गुरु नानक के शब्दों से किस प्रकार शाश्वत शान्ति प्राप्त हुई।

गुरु नानक एक ईश्वरीय सन्देश लेकर इस दुनिया में पधारे थे। उन्होंने अपने पुण्य हाथों से सत्य की पौध कर्म वाले लोगों की आत्माओं में आध्यात्मिक जीवन की पौध लगाई। धर्म और राष्ट्रीयता की परवाह न करते हुए उन्होंने इस पौध को सींचकर पुष्पित किया, जिसकी खुशबू दूर-दूर तक फैलती गई।

● ●

श्री सुखवीर

बाबर वाणी

ईसा की पंद्रहवीं और सोलहवीं सदियों में इस देश में धर्म परिष्कार की जो प्रवृत्ति प्रबल वेग से चली, उसके प्रवर्तकों में गुरु नानक (१४६८-१५३९ ई०) अद्वितीय थे।

अलमस्त संत के रूप में जहां वे गगन के थाल में तारों के दीपक सजाकर अकाल पुरुष की आरती उतारते थे, धर्मचिन्तक के रूप में जहां वे विश्वधर्म की कल्पना कर सकते थे, वहीं भारत की धरती और उसकी जनता के प्रेमी के नाते देश के जनजीवन में व्याप्त जड़ता, धार्मिक सामाजिक मूढ़ता, राजनैतिक निर्वीर्यता और आर्थिक विपन्नता से तड़प भी उठते थे। तभी नानक की वाणी जैसे चिरंतन आध्यामिल्क आलोक की वाहक है, वैसे ही समाजोद्धार का प्रबल माध्यम भी है। वे देश काल की मर्यादा से ऊपर उठे हुए संत कवि ही नहीं थे, राष्ट्र के सचेतक भी थे। संत के नाते निर्लेप होने पर भी राष्ट्र का प्रत्येक दुःख-दर्द उनके हृदय को छूता था।

जब सन् १५२१ में ऐमनाबाद पर बाबर का आक्रमण हुआ, गुरु नानक अपनी तीन साल लम्बी विदेश-यात्रा से पंजाब लौटे ही थे। इससे पूर्व वे दस-दस साल की दो लम्बी स्वदेश यात्राओं द्वारा भारत के विभिन्न प्रदेशों में जन-जागरण का काम कर चुके थे।

बाबर के आक्रमण को उन्होंने अपनी आंखों से देखा। चारों ओर मचे हुए कत्लेआम की परवाह न करके वे उस 'लाशों की नगरी' में घूमे और उनका हृदय दर्द से इस कदर भर उठा कि वे 'खून के गीत' गाने से अपने को न रोक सके। उन्होंने अनुभव किया कि बाबर 'पाप की बारात' लेकर हिन्दुस्तान में आया और उसने इस 'रत्न' जैसे देश को तबाह कर

डाला। चारों तरफ बेबसी छाई हुई थी और 'शर्म और धर्म ने सिर छिपा लिया था' और 'झूठ सिर ऊंचा उठाकर घूम रहा था।' और ऐसी हालत में सर्वशक्तिमान् ईश्वर चुप था।

उसकी वह चुप्पी गुरु नानक को सहन न हुई। उन्होंने उसे पुकार कर कहा कि लोगों की इतनी चीख-पुकार सुनकर भी क्या तुम्हारे हृदय में दर्द नहीं जगा ? फिर भी जब ईश्वर चुप रहा, तो गुरु ने स्वयं अपनी आवाज बुलन्द की और उस 'सच की वेला' में उन्होंने 'सच की वाणी' सुनाई।

बाबर के आक्रमण के सम्बन्ध में गुरु नानक ने चार रचनाओं की सृष्टि की, जो 'बाबर-वाणी' के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसमें केवल बाबर के अत्याचारों का और कत्लेआम का ही वर्णन नहीं है, इनमें उस समय के भारत की सामाजिक-राजनीतिक स्थिति का भी जीवत और मार्मिक चित्रण है, जो गुरु नानक की पैनी तलस्पर्शी दृष्टि का परिचायक है। इनमें गुरु ने बताया है कि देश अन्दर से अधोगति को पहुंच चुका था, इसीलिए उसे बाहरी आक्रमण का शिकार होना पड़ा।

आक्रमण के बाद जब बाबर के अत्याचार बढ़ते ही चले गए, तो गुरु नानक ने 'बाबर जाबर !' कहकर उसके विरुद्ध आवाज उठाई। फलस्वरूप उन्हें कारावास भी भोगना पड़ा। ऐसी मान्यता है कि उनके लोकोत्तर व्यक्तित्व की चर्चा सुनकर बाबर स्वयं उनसे मिलने आया और उनसे वार्तालाप करके इतना प्रभावित हुआ कि श्रद्धा से उसका सिर झुक गया।

गुरु नानक ने अपनी समस्त वाणी रागों के आधार पर निबद्ध की है। उन्होंने कुल १६ रागों का प्रयोग किया है। उन्होंने अनेक छन्दों और काव्य रूपों का सृजन भी किया। उनकी विपुल वाणी की शब्द-शक्ति, काव्य-रूपों, विचारों और भावों की विविधता उनके लोकनायक रूप का ही विशेष रूप से दर्शन होता है।

तिलंग महला-१

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो।

पाप की जंज लै कावलहु धाइआ जोरी मंगै दानु वे लालो ।
सरमु धरमु दुइ छप खलोए कूड़ु फिरै परधानु वे लालो ।
काजीआ बामणा की गलि थकी अगदु पड़ै सैतानु वे लालो ।।
मुसलमानीआ पड़हि कतैबा कसट महि करहि खुदाइ वे लालो ।
जाति सनाती होरि हिदवाणीआ एहि भी लेखै लाइ वे लालो ।
खून के सोहिले गावीअहि नानक रतु का कुंगू पाइ वे लालो ।।१
साहिब के गुण नानकु गावै मासपुरी विचि आखु मसोला ।
जिनि उपाई रंगि रवाई बैठा वेखै वखि इकेला ।।
सचा सु साहिबु सचु तपावसु सचड़ा निआउ करेगु मसोला ।
काइआ कपड़ु टुकु-टुकु होसी हिन्दुस्तान समालसी बोला ।।
आवनि अठतरै जानि सतानवै होरु भी उठसी मरद का चेला ।
सच की बाणी नानकु आखै सचु सुणाइसी सच की बेला ।।२।।[2]

—हे लालो, जैसा कि मेरे पति (ईश्वर) का हुक्म मेरे पास पहुंचत है, वैसा ही मैं ज्ञान कर रहा हूं। (बाबर) पाप की बारात लेकर काबुल से चढ़ आया है और जबरदस्ती (कन्या का) दान मांगता है। शर्म और धर्म दोनों छिप गए हैं और झूठ प्रधान हो-होकर घूम रहा है। काजियो

---

१. गुरु नानक के अतिरिक्त जितने भी सिक्ख गुरुओं ने वाणी रची, उसमें उन्होंने अपने नाम के बजाय 'नानक' नाम का उपयोग किया है; क्योंकि वे स्वयं को गुरु नानक का ही रूप समझते थे। 'गुरु ग्रन्थ' में यह दिखाने के लिए कि कौन-सी रचना किस गुरु की है, उसके ऊपर राग के उल्लेख के साथ, गुरुओं के क्रम के अनुसार संख्या दे दी गयी है। जैसे, महला-१ अर्थात् पहले गुरु की वाणी। महला-२ अर्थात् दूसरे गुरु की वाणी।

२. गुरु नानक देश-विदेश का भ्रमण करने के लिए अपनी पहली यात्रा पर निकले थे, तो सबसे पहले ऐमनाबाद पहुंचे थे। वहां मलक भागों के नाम के एक धनवान व्यक्ति ने सब लोगों को ब्रह्मभोज पर बुलाया था। परन्तु गुरु नानक वहां जाने के बजाय लालो नाम के एक गरीब बढ़ई के यहां ठहरे थे। मलक भागो की लूट-खसोट की कमाई के छत्तीस व्यंजनों के बजाय उन्होंने लालो की मेहनत की कमाई की रूखी-सूखी रोटी खाने की परवाह नहीं की थी।

और ब्राह्मणों की बात ख़त्म हो गई है, और उनके स्थान पर शैतान विवाह करवाता है। (तात्पर्य यह कि आक्रमणकारी लड़कियों को ज़बर-दस्ती छीनकर अपनी पत्नी बना लेते हैं, काज़ियों और पंडितों से शादी की रस्म कराने की ज़रूरत ही नहीं समझी जाती है।) मुसलमान स्त्रियां दुखी होकर कुरान पढ़ रही हैं और खुदा के आगे दुआएं कर रही हैं, क्योंकि मुगल सिपाही और दूसरी जातियों की स्त्रियों को भी इसी गिनती में समझता है। हे नानक, खून के गीत गाए जा रहे हैं, जिनमें लहू का केसर पड़ रहा है।

नानक कहता है कि 'मैं ईश्वर के गुण गाता हूं और इस लाशों की नगरी में यह बात कहता हूं—जिस ईश्वर ने यह सृष्टि बनाकर कई रंगों में रंगी है, वह खुद अकेला बैठा हुआ सब कुछ देख रहा है। वह ईश्वर सच्चा है, उसका न्याय भी सच्चा है, और सच्चे न्याय वाला हुक्म भी देगा। शरीर रूपी कपड़ा टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा और हिन्दुस्तान मेरी बात को याद करेगा। (मुगल) ७८ (संवत्) में आए और ९७ में चले जाएंगे और तब एक और मर्द का चेला (यानी बहादुर व्यक्ति) जन्म लेगा। (यहां संवत् १५७८ में बाबर के ऐमनाबाद पर हमले और संवत् १५९७ में भारत छोड़ने की ओर संकेत है। 'मर्द का चेला' शायद शेरशाह सूरी के बारे में कहा गया है, जिसने मुगल राज्य ख़त्म करके अपना राज्य स्थापित किया था और जो हिन्दुओं और मुसलमानों को एक नज़र से देखने वाला प्रथम मुसलमान शासक था।) नानक कहता है कि मैं सच की वाणी, यानी सच्ची बात कह रहा हूं; क्योंकि सच्ची बात सुनाने के लिए यही सच की वेला है, अर्थात् (बाबर के होते हुए ही सच्ची बात सुनानी चाहिए।)

आसा महला–१

> ख़ुरासान खसमाना कीआ हिन्दुस्तानु डराइआ।
> आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ॥

एती मार पई कुरलाणे तैं की दरदु न आइआ ।
जे सकता सकते कउ मारे ता मनि रोसु न होई ॥१॥
सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई ।
रतन विगाड़ि विगोए कुतीं मुइआ सार न काई ।
आपे जोड़ि विछोड़े आपे वेखु तेरी वडिआई ॥२॥
जे को नाउ धराए वडा साद करे मनि भाणे ।
खसमै नदरी कीड़ा आवै जेते चुगै दाणे ।
मरि मरि जीवै ता किछु पाए नानक नामु वखाणे ।३।५।३९

—(हे ईश्वर) उस खुरासान को जिस पर बाबर का शासन है तूने अपना समझकर बचा रखा है, और हिन्दुस्तान को भयभीत कर दिया है, बाबर के आक्रमण द्वारा। इस सब कुछ का खुद पर दोष न लेने के लिए तूने मुगलों को यम का रूप देकर हिन्दुस्तान पर आक्रमण कराया। इतनी मार काट हुई कि लोग कराहने लगे। पर क्या तेरे दिल में कोई दर्द पैदा न हुआ?

तू तो सभी को एक समान बनाने वाला है। अगर कोई शक्तिशाली किसी शक्तिशाली को मारता है, तो मेरे मन में क्रोध उत्पन्न नहीं होता। लेकिन अगर शक्तिशाली शेर (निर्बल) पशुओं के झुंड पर हमला करता है, तो तुझे उसे बचाने के लिए कुछ तो करना ही चाहिए। इन कुत्तों (पठान शासकों) ने रत्न जैसे देश को तबाह कर दिया है (अर्थात् उन्होंने मुगल आक्रमणकारियों का मुकाबला नहीं किया और हिन्दुस्तान जैसा धनवान् देश लुटवा दिया)। इनके मरने के बाद कोई इनकी परवाह नहीं करेगा। (हे ईश्वर) तू खुद ही मिलाप करता है और खुद ही जुदा करता है, और इसमें अपनी बड़ाई समझता है।

अगर कोई अपना बड़ा नाम रखता है और इस बात की बहुत खुशी महसूस करता है, तो हो सकता है कि वह ईश्वर की नजर में एक कीड़ा ही हो, जो दाने चुगता फिर रहा है। आदमी तभी कुछ पा सकता है, अगर वह बार-बार मरकर जीवित होता है। नानक ईश्वर के नाम की प्रशंसा करता है।

आसा महला–१

जिन सिरि सोहनि पटीआ मांगी पाइ सधूर ।
से सिर काती मुनी अनि गल विचि आवै धूड़ि ॥
महला अंदरि होदीआ हुणि बहणिन मिलन्हि हूदरि ॥१॥
आदेसु बाब आदेसु ॥
आदि पुरख तेरा अन्त न पाइआ करि-करि देखहि वेस ।१। रहाउ ।
जदहु सीआ वीआही आ लाड़े सोहनि पास ।
हीडोली चड़ि आईआ दन्द खण्ड कीते रासि ।
उपरहु पाणी वारीऐ झले झिमकनि पासि । २ ॥
इकु लखु लहन्हि बहिठीआ लखु लहन्हि खड़ीआ ।
गरी छुआरे खादीआ माणन्हि से जड़ीआ ।
तिन्हि गलि सिलका पाईआ तुटन्हि मोतसरीआ । ३ ॥
धनु जोबनु दुइ वैरी होए जिन्ही रखे रंगु लाइ ।
दूता नो फुरमाइया ले चले पति गवाइ ॥
जे तिसु भावे दे वडिआई जे भावे देइ सजाई ।४।
आगो दे जे चेतीऐ ता का इतु मिले सजाई ।
साहां सुरति गवाईआ रग तमासे चाइ ॥
बाबरवाणी फिरि गई कुइरु न रोटी खाई ।५।
इकना वक्त खुआईअहि इकन्हा पूजा जाइ ।
चउके विण हिववाणीआ किउ टिके कढहि नाइ ॥
रामु न कबहू चेतिओ हुणि कहणि न मिले खुदाइ ।६।
इकि घरि आवहि आपणे इकि मिलि मिलि पुछहि सुख ।
इकन्हा एहा लिखिआ बहि-बहि रोवहि दुख ॥
जो तिसु भावे सो तीऐ नानक किया मानुख । ७ । ११

—जिन महिलाओं के सिरों पर बालों की लटें सुशोभित थीं और मांगों में सिन्दूर डाला गया था, उन सिरों को कैंचो से मूंड़ डाला गया है, और धूल उड़-उड़ कर उन पर पड़ रही है। कभी जो महलों में निवास करती थीं, अब उन्हें कहीं बाहर भी बैठने के लिए जगह नहीं मिल रही

है। हे ईश्वर, तुझे नमस्कार है। तू आदि पुरुष है, तेरा अन्त नहीं पाया जा सकता। तू कई प्रकार के वेश बदलता है।

[illegible] थीं और [illegible] के साथ सुशोभित थीं। [illegible] कैंची से [illegible] थीं, जिनके [illegible] हुआ था। [illegible] महलों पर (अर्थात ऊंचे घर) [illegible] थीं और [illegible] उनके पास [illegible] थे। [illegible] लिए [illegible] थे और एक [illegible] उनके [illegible]। [illegible] थी कि उनके [illegible] को भी [illegible] थी। [illegible] थीं और [illegible] पर आनन्द लेती थीं, आज उनके [illegible] में [illegible] हुई है और [illegible] की लड़ियां टूट रही हैं।

धन और यौवन दोनों ही उनके दुश्मन बन गए हैं, जिनके साथ वे रंगरलियां मना रही थीं। सो जब (ईश्वर की) आज्ञा हुई, तो यमदूत उनकी इज्जत लूट कर ले गए। ईश्वर को यदि अच्छा लगे, तो वह बड़प्पन देता है और यदि अच्छा लगे, तो सजा देता है।

अगर पहले से ही सचेत हुए होते, तो यह सजा क्यों मिलती? उस समय के राजाओं ने रंगरलियों और तमाशों में अपने आपको भुला दिया था। सो जब बाबर ने हमला किया, तो राजकुमारों तक को रोटी खाने को नहीं मिली।

एक तरफ मुसलमानों की नमाज का वक्त जाता रहा, और एक तरफ हिन्दुओं की पूजा खत्म हो गई। हिन्दू स्त्रियां बिना चौके के स्नान कैसे करें और चन्दन के टीके कैसे लगाएं? जिन लोगों ने कभी राम का नाम नहीं लिया था वे अब खुदा का नाम ले रहे हैं (मुसलमानों को खुश करने के लिए), लेकिन अब तो उन्हें 'खुदा' भी नहीं कहने दिया जा रहा है। जिन स्त्रियों के पति लौट कर घर आ गए हैं, वे उनका कुशल-मंगल पूछ रही हैं। लेकिन कुछ स्त्रियों के भाग्य में यही लिखा है कि वे बैठ कर रोयें। नानक कहता है कि जो उस ईश्वर को अच्छा लगता है, वही होता है।

आसा महल—१

कहा सु खेल तबेला घोड़े कहा भेरी सहनाई ।
कहा सु तेगबन्द गाडेरडि कहा सु लाल कवाई ॥
कहा सु आरसीआ मुह बंके ऐथै दिसहि नाही । १ ।
इहु जगु तेरा तू गोसाई ।
एक घड़ी महि थापि उथापे जरु वंडि देवै भाई । १ । रहाउ
कहा सु घर दर मण्डप महला कहा सु बंक सराई ।
कहा सु सेज सुखाली कामणि जिसु वेखि नीद न पाई ॥
कहा सु पान तंबोली हरमा होईआ छाई माई । २ ।
इसु जरि कारणि घणी विगुती इनि जर घणी खुआई ।
पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥
जिस नो आपि खुआए करता खुसि लए चंगिआई । ३ ।
कोटी हू पीर वरजि रहाए जा मीरु सुणिआ धाइआ ।
थान मुकाम जले बिज मंदर मुछि मुछि कुइर रुलाइआ ।
थान मुगल न होआ अन्धा किनै न परचा लाइआ । ४ ।
मुगल पठाणा भई लड़ाई रण महि तेग वगाई ।
ओन्ही तुपक ताणि चलाई ओन्ही हसत चिड़ाई ।
जिन्ह की चीरी दरगह फाटी तिन्हा मरणा भाई । ५ ।
इक हिंदवाणी अवर तुरकाणी भटिआणी ठकुराणी ।
इकन्हा पेरण सिर खुर पाटे इकन्हा वासु मसाणी ।
जिन्ह के बंके घरी न आइआ तिन्ह किउ रैणि विहाणी । ६ ।
आपे करे कराए करता किस नो आखि सुणाईए ।
दुखु-सुखु तेरै भाणै होवै किसथै जाइ रुआईऐ ।
हुकमी हुकमि चलाए विगसै नानक लिखिआ पाईऐ । ७ । १२ ।

—तुम्हारे वे खेल, अस्तबल और घोड़े कहां हैं? नगाड़े और शहनाइयां कहां हैं? तलवारों की म्यानें और रथ कहां हैं? लाल वर्दियां कहां हैं? वे दर्पण और वे सुन्दर मुख कहां हैं? यहां तो कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं।

यह जगत् तेरा है, और तू ही इसका स्वामी है। एक घड़ी में तू इसे

स्थापित करता है, और फिर नष्ट कर देता है। तू चाहे तो भाइयों में धन-दौलत बांट देता है।

तुम्हारे वे घर, दरवाजे, मण्डप और महल कहां हैं ? वे सुन्दर सरायें कहां हैं ? वह सुखद सेज कहां हैं, जिसे देखकर नींद नहीं पड़ती थी ? उस पर लेटने वाली कामिनी कहां है ? वे पान देने वाली तमोलिनें और परदों में रहने वाली स्त्रियां कहां हैं ? सब कुछ छूमन्तर हो गया है। इस सोने (धन-दौलत) के कारण बहुत से लोग नष्ट हो गए, और बहुत से इसके कारण विलीन हो गए। यह धन-दौलत पाप किए बिना हाथ में नहीं आती, और न मरने पर साथ जाती है। जिसे ईश्वर नष्ट करना चाहता है, उसकी अच्छाई छीन लेता है।

जब देश के लोगों ने बाबर के हमले के बारे में सुना, तो उसे रोकने के लिए करोड़ों पीरों-फकीरों ने टोने-टोटके किये। लेकिन उनसे कोई फायदा न हुआ, और बड़े-बड़े पक्के महल और दूसरे निवास-स्थान जल गए, और राजकुमारों को टुकड़े-टुकड़े करके मिट्टी में मिला दिया गया। पीरों के टोनों वाले कागजों से कोई मुगल अन्धा नहीं हुआ। उन्होंने (मुगलों ने) तोपे चलायीं, और उन्होंने (पठानों ने) हाथी आगे बढ़ाया। जिनकी चिट्ठी ईश्वर की दरगाह में फाड़ दी गई तो, उनकी मौत जरूरी है।

जिन स्त्रियों की दुर्दशा हुई, उनमें से कुछ हिन्दुवानियां थीं, कुछ तुर्कानियां कुछ भाटिनें और कुछ ठकुरानियां। कुछ स्त्रियों के बुर्के सिर से पांव तक फाड़ डाले गए, कुछ को श्मशान में निवास मिला। जिनके सुन्दर पति घर नहीं लौटे, उन्होंने रातें कैसे काटी होंगी ?

ईश्वर स्वयं ही करता और कराता है। उसकी बातें किसे सुनाई जाएं ? हे ईश्वर, सब दुःख-सुख तेरी आज्ञा से होते हैं, सो किसके पास जाकर रोया जाए ? ईश्वर सबको अपने हुक्म में चलाता है। नानक कहता है कि जो उसने लिख रखा है, वही प्राप्त होता है।

(सुखवीर द्वारा प्रस्तुत)

श्री सोहन सिंह बसी

अनाथों के नाथ

भारत में पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के दौरान देशवासी विदेशी हमलावरों और शासकों के अत्याचारों तथा क्रूरतापूर्ण व्यवहार के नीचे दबे पड़े थे। जात-पात, मनुष्य के अपने ही बनाए हुए अमीर-गरीब के अन्तर, ऊंच-नीच तथा अन्य सामाजिक बुराइयों के कारण मनुष्य समाज के नैतिक मूल्य निम्न स्तर पर पहुंच चुके थे। शासक, उच्च श्रेणी के लोग, काजी और पण्डित सत्ता के नशे में चूर थे। गुरु नानक साहिब ने उस समय की दशा का वर्णन करते हुए फरमाया है कि राजे 'भेड़िये' और राजकार्य चलानेवाले कुत्तों के समान थे। कट्टर धार्मिकता और अत्याचारपूर्ण शक्तियों ने मानवीय गौरव और स्वाभिमान को घायल कर दिया था। यह समय मानवीय सभ्यता और ज्ञान की गिरावट का समय था। देश की दशा बहुत गिर चुकी थी, किन्तु किसी में भी आक्रोश के परिणामस्वरूप सिर उठाने की शक्ति नहीं रही थी।

मुक्ति दाता

ईश्वर उन दुखों और हृदयद्रावक चीत्कार को सुने बिना न रह सका और उसने इन दुखों और कष्टों को दूर करने के लिए एक अवतार इस संसार में भेजा। इस प्रकार गुरु नानक ने इस संसार में मनुष्यता के मुक्तिदाता के रूप में जन्म लिया।

एक अनुभवी चिकित्सक की भांति गुरु महाराज ने समाज की नाड़ी को टटोला, रोग पहचानकर समाज को चिपटी हुई बीमारी को औषधि दी। इन सभी रोगों की एकमात्र औषधि पवित्र 'नाम' अथवा शब्द थी।

समाज की धार्मिक, आध्यात्मिक और नैतिक दशाओं का भली-भांति विश्लेषण करके नानक ने अनुभव किया कि जो धर्म का लबादा पहने

फिरते हैं, अभिमान और गर्व से भरे हुए हैं, वे ईश्वर को बिलकुल नहीं जानते। उन्होंने अपने आस-पास आध्यात्मिक अन्धकार देखा और दुख-भरी चीखें सुनीं। उन्होंने काजियों को उनके पाखण्ड, अन्याय और कट्टर धार्मिकता के कारण ताड़ना दी और कहा कि आज शैतान धार्मिक ग्रन्थों का हवाला दे रहे हैं। ये मनुष्यभक्षी हैं, किन्तु अभी भी नमाज पढ़ते हैं। इसी प्रकार उन्होंने ब्राह्मणों की भोले-भाले लोगों को विपरीत मार्ग पर ले जाने के लिए कुछ आलोचना की।

कायरता की निंदा

गुरु नानकजी ने लोगों की कायरता की निन्दा की और उन्हें 'अन्धी पूजा' करनेवाला बताया जो अपने आचरणहीन शासकों के विषय में कुछ भी बोलने में असमर्थ थे। उन्होंने लोगों के इन कष्टों और कठिनाइयों का कारण उनमें निष्ठा और प्रेम की कमी बताया। उन्होंने अनुभव किया कि लोग उस ईश्वर से दूर चले गए हैं, जो सभी के लिए शक्ति का स्रोत है और इसी कारण लोगों में नैतिक पतन की भावना उत्पन्न हुई है। इसी प्रकार लोग अपने मालिक से अपना मुख मोड़ बैठे हैं। परमात्मा ने नानक को मनुष्यता के सुधार की विशेष उद्देश्य के लिए संसार में भेजा। समाज में व्याप्त सभी बुराइयों और असमानताओं की उन्होंने अत्यन्त साहस के साथ आलोचना की। उन्होंने लोगों को चैतन्य किया और बिना किसी रक्त-पात के शांत क्रान्ति का आह्वान किया, जिसने समस्त देश को झक-झोर कर रख दिया। उन्होंने मानवीय गौरव और स्वाभिमान को उजा-गर किया।

गुरु साहिब ने समस्याओं को क्रियात्मक ढंग से हल किया। उन्होंने सिद्धों और योगियों का मार्ग अपनाने से इन्कार कर दिया। हिमालय के सुमेरु पर्वत की अपनी यात्रा के दौरान गुरुजी ने प्रसिद्ध सिद्धों के साथ विचार-विमर्श किया। उन्होंने संसार को त्यागकर वनों-गुफाओं में छिप-कर भक्ति करने की निन्दा की और कहा कि सांसारिक जीवन को त्यागने और उसके साथ मोह रखने में समन्वय होना चाहिए। न तो सांसारिक सुखों में अपने को अधिक लीन करना चाहिए और न ही संसार से पूर्ण

विरक्ति रखनी चाहिए। अतः उन्होंने सिद्धों और योगियों को परामर्श दिया कि वे लोगों में रहकर ही उनकी बुराइया दूर करें।

मानवता ही ईश्वर

मनुष्य इतिहास में पहली वार एक व्यक्ति ने समस्त मानवता को ईश्वर की उपाधि दी। गुरु साहिब का विश्वास था कि ईश्वर का निवास प्रत्येक व्यक्ति मे है। केवल हमारे पास परमात्मा के दर्शनों के लिए अन्तर्दृष्टि होनी चाहिए। मनुष्य और परमात्मा के मध्य एक यही सम्बन्ध है। गुरु साहिब चाहते थे कि लोग इस सम्बन्ध को पहचानें, क्योंकि यही एकमात्र मार्ग है जो उनके आचरण को बना सकता है और बुराइयो से छुटकारा दिलाकर उनमें अच्छे गुण उत्पन्न कर सकता है।

उन्होंने पवित्र नाम जपने पर अधिक बल दिया, जिसके द्वारा मनुष्य ईश्वरीय कृपा प्राप्त कर सकता है। इस मनोरथ के लिए हमें काम, क्रोध लोभ, मोह और अहंकार को मारकर तथा प्यार, ईमानदारी, अच्छा रहन-सहन ग्रहण करना पड़ेगा। वास्तव में वही मनुष्य धनी हैं, जो नाम का व्यापार करते हैं।

राजनैतिक रूप से जनता शासकों के क्रूरतापूर्ण अत्याचारों से अत्यन्त दुखी थी। भारत में बाबर द्वारा सहस्रों लोगों का संहार किया जा रहा था तथा उनपर अवर्णनीय अत्याचार हो रहे थे। गुरुजी इन अत्याचारों को देखकर कह उठे—

"जब इस प्रकार के अत्याचारों और कष्ट-पीडा का राज्य है, तो परमात्मा क्या तुम्हें कोई कष्ट नही हो रहा? हे कर्त्ता, आप तो सब के हो।"

एक और स्थान पर उन्होंने बाबर को 'मुगल की आकृति में मौत' कहा है। ये सब बातें गुरुजी के जन-साधारण के प्रति प्रेम की परिचायक हैं।

सामाजिक स्तर पर भी गुरुजी अग्रणी हैं। वे राजनीतिज्ञों एवं धार्मिक संरक्षकों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों को देखकर दुखी होते थे। उन्होंने देखा कि जन-साधारण को सभी स्तरों पर लूटा जा रहा था।

लोगों की अधिकतर बुराई धन जमा करने और लालच के कारण थी। गुरुजी ने श्रम की महत्ता समझाकर लोगों को परिश्रम करने तथा बांटकर खाने को कहा।

निर्धनों का सहायक

गुरु नानक निर्धनों और अनाथों की तरह ही अपने को समझते थे; क्योंकि उन्हीं में उन्हें परमात्मा के दर्शन होते थे। गुणवान व्यक्ति को वे महान् समझते थे तथा अपने जीवन से आदर्श प्रकट करते थे। जब उनके पिता ने कुछ कार्य करने को उन्हें धन दिया, तो वह उन्होंने साधुओं पर खर्च कर दिया। जब वे सुलतानपुर में सरकारी भंडार कर्त्ता थे, तो फालतू अन्न निर्धनों में बांटते थे। करतारपुर में रहते हुए सभी उत्पादन को वे सब काम करनेवालों में बांटते थे। उनका लंगर सबके लिए खुला था। उस स्थान पर सभी अमीर-गरीब और बड़े-छोटे समान हो जाते थे। वे प्रातः-सायं प्रार्थना भी करते थे, जहां संगत में सभी समान रूप से एकत्र होते थे।

सबसे बड़ी बात यह है कि गुरुजी समानता और भ्रातृभाव चाहते थे। उन्होंने बताया कि परमात्मा केवल एक है और उसे स्मरण करके, उसकी स्तुति करके और बार-बार उसका नाम लेने से उसे प्राप्त किया जा सकता है तथा संसार में रहते हुए ऐसा किया जा सकता है। परमात्मा का नाम ही मन तथा शरीर को पवित्र करता है। उन्होंने ऐसा संदेश देकर सभी को समानता पर ला दिया है।

गुरुजी ने मनुष्य इतिहास में वीर, पवित्र हृदय और परमात्मा से प्यार करनेवाले लोगों का एक विशेष समूह बनाकर एक स्तुत्य कार्य किया है। प्रजातन्त्र और समाजवादी समाज की नींव भी यही है। यदि हम गुरुजी के बताए मार्ग पर चलें, तो सफलता अवश्यम्भावी है। इस शुभ अवसर पर ऐसा करना ही गुरुजी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

श्री तरण सिंह

गुरु नानक और भक्ति-आन्दोलन

गुरु नानक केवल एक भक्त, सन्त, नाथ अथवा योगी मात्र नहीं थे, वे इन सबसे ऊपर गुरु थे। गुरु में सभी उपर्युक्त गुण होते हैं। उसे परम पिता परमेश्वर से आध्यात्मिक शक्ति मिलती है। परमपिता परमेश्वर स्वयं गुरु नियुक्त करते हैं और वह उन्हीं से ज्ञान प्राप्त करता है और जो भी बोलता है, वह अधिकार के स्वर में बोलता है। उसे मानवीय आध्यात्मिक शिक्षक ज्ञान नहीं देते और दूसरे लोग दीक्षा नहीं देते।

आन्दोलन में क्रान्ति

गुरु नानक ने प्राचीन शास्त्रों को प्रमाण नहीं माना, जबकि अन्य सभी सन्तों ने उन्हें स्वीकार किया। गुरु नानक का प्रत्येक शब्द धर्मशास्त्र था और उन्होंने एक नई धार्मिक संहिता अथवा विधान का निर्माण किया। गुरु नानक भारतीय भक्तों अथवा सन्तों की शृंखला में एक भक्त मात्र न थे। वे एक मसीहा थे और भारतीय जनता को एक नया सन्देश देने के लिए अवतरित हुए थे। उन्होंने भक्ति-आन्दोलन को नई दिशा नहीं दी, किन्तु वे उसमें क्रान्ति लाए।

उनका लक्ष्य तथा चरित्र भक्ति-आन्दोलन से सर्वथा भिन्न था। उनका सन्देश और उसे फैलाने का तरीका भी एकदम दूसरा था। उन्होंने साधि-कार और सशक्त वाणी में लोगों तक अपना सन्देश पहुँचाया।

गुरु नानक ने अनेक पुराने नियमों और सिद्धान्तों की उपेक्षा की, अनेक नये नियम और सिद्धान्त स्वीकार किए। यद्यपि उन्होंने वेदों को अन्तिम वाक्य मानने से इन्कार किया, तथापि वे मानव ज्ञान की इस अमूल्य निधि का पूरा सम्मान करते थे। उन्होंने ईश्वर की एकता पर

जोर दिया।

एकेश्वरवाद

उन्होंने अनेकेश्वरवाद और देवी-देवताओं के अनेक रूपों को तो अस्वीकार किया, किन्तु मानव सभ्यता के विकास में उनके द्वारा किए गए उपयोगी कार्यों को स्वीकार किया। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि केवल 'एक ओंकार' ही शाश्वत, निराकार, अनादि, सत्नाम है। केवल वही स्रष्टा व्यापक, कर्ता पुरुष है। केवल वही निर्भय, निर्वैर है। केवल वही समयातीत तत्त्व अकालमूरत है। केवल वही अजन्मा, किन्तु स्वयंभू है। केवल वही प्रकाश और अनुग्रह गुर प्रसाद है। इस प्रकार नानक की शिक्षा में पहली बार ब्रह्मा, विष्णु, महेश की त्रिमूर्ति—वरुण, सूर्य, इन्द्र और अनेक हिन्दू देवताओं को और मूर्ति-पूजा के स्वरूप को चुनौती दी गई। अब तक किसी भक्त ने मूर्ति-पूजा को चुनौती देना तो दूर, उसपर कभी शंका भी प्रकट नहीं की थी।

सभी भक्त कवियों ने ईश्वर के अवतारों की धारणा को किसी-न किसी रूप में स्वीकार किया था। गुरु नानक का यह कथन कि ब्रह्म अजन्मा होते हुए भी स्वयंभू है, ईश्वर के अवतारों के सिद्धान्त को खंडित कर देता है। गुरु नानक मानवता का सम्बन्ध ईश्वर से सीधा जोड़ना चाहते थे और इसमें बिचौलियों—अवतारों और पंडितों, पुरोहितों को समाप्त करना चाहते थे।

भेदभाव की समाप्ति

सर्वशक्तिमान एक ईश्वर के सिद्धान्त के साथ ही जाति, वर्ण और धर्मों के कारण उत्पन्न सभी भेदभाव स्वतः ही समाप्त हो गए। कुछ भक्त कवियों ने जो स्वयं तथाकथित छोटी जाति के थे, जाति-प्रथा का विरोध किया था। बौद्ध-धर्म और नाथ सम्प्रदाय में भी जाति-प्रथा की निन्दा की गई थी। नानक ने भी जाति-प्रथा का विरोध किया। वे जाति-विहीन समाज में विश्वास करते थे।

नानक ने ईश्वर, सृष्टि, आत्मा, कर्म आदि के सम्बन्ध में प्रचलित

तत्कालीन विचारों का गंभीरता से अध्ययन किया। उन्होंने ईश्वर के विभिन्न अवतारों को अस्वीकार किया, किन्तु उन्हें हिन्दू और इस्लाम धर्म के नैतिक आदर्शों से कोई विरोध न था। उन्होंने सत्य और ईश्वर के अस्तित्व और सर्वशक्तिशाली स्वरूप पर जोर दिया। वे सरल और सीधे तरीके से अपनी बात कहने में विश्वास करते थे।

जीवन-दर्शन

नानक जीवन की सम्पूर्णता में विश्वास करते थे। उन्होंने सर्वांगीण मानव की कल्पना की, न कि विभक्त मानव की। उनके लिए भक्ति, कर्म और ज्ञान के मार्ग अलग-अलग न थे। इन तीनों का पालन करके ही पूर्णता प्राप्त की जा सकती है। यद्यपि भक्ति में कर्म और ज्ञान का समावेश है, तथापि उसका विशेष महत्त्व है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए जरूरी है कि वह अपने अन्दर इन तीनों गुणों का उचित समन्वय करे और सत्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करे।

गुरु नानक नई चेतना के अग्रदूत थे। उनका आन्दोलन किसी क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं था। उनका संदेश न केवल भारत, वरन् देश की सीमाओं के बाहर भी ध्यान से सुना गया। उनके उत्तराधिकारियों ने उनकी परम्परा को जीवित रखा और उन 'संगतों' को जारी रखा, जिनकी स्थापना उन्होंने की थी। गुरु नानक ने सम्पूर्ण देश की और तिब्बत, अरब और अफगानिस्तान की यात्रा की। वे समस्त भारतीय जनता में नये जीवन का संचार करना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने जो संदेश दिया, वह विश्व इतिहास में अद्वितीय है।

नानक ने जाति-प्रथा की कठोर शब्दों में निन्दा की। उन्होंने उन लोगों से मिलने से इन्कार कर दिया था, जो लंगर में भोजन करने नहीं आते थे। लंगर में ब्राह्मण, हिन्दू और मुसलमान सभी एक साथ बैठकर भोजन करते थे। गुरु नानक समाज में छुआछूत, ऊंच-नीच के विरोधी थे।

मानव-जन्म अमूल्य

नानक का ध्येय क्या था, अब हम इस बात पर विचार करेंगे। नानक

कहा करते थे कि मानव-जन्म एक अमूल्य भेंट है। ईश्वर हमें मानव-जन्म प्रदान कर जन्म-मरण और पुनर्जन्म से छुटकारा पाने का अवसर देता है। हमारे जीवन का ध्येय योग होना चाहिए। नानक ने अनेक बार यह कहा था कि मेरे पास भगवान् नाम सुमिरन करने के अलावा कोई चमत्कार नहीं है।

जिस प्रकार धीमी आंच पर पकी सब्जी ज़्यादा स्वादिष्ट होती है, उसी प्रकार शरीर और मन को धीरे-धीरे प्रशिक्षित करने से परमानन्द की प्राप्ति होती है। गुरु नानक अपने अनुयायियों से यह अपेक्षा करते थे कि वे पौ फटने से पहले उठें, क्योंकि ईश्वर-मिलन के लिए यही अमृत-वेला है।

o o

काव्यांजलियाँ

•

गुरु नानक : कवियों की दृष्टि में

श्री सुखवीर

गुरु नानक

जिस चेहरे पर धरती के आदिकाल के नक्श थे
और रोशनी की आंखें थीं
वह चेहरा एक दिन भी था, और सोयी हुई चांदनी रात भी ।
चारों ओर टूटी हुई नजरें थीं, और अंधी आंखें,
नफरतों के रिसते हुए मुंह—हर जगह झूठ का बोलबाला था,
और एक काली बहरी रात हर चीज़ पर सोयी हुई थी—
अगर पूनम का चांद न हो तो क्या होता ?
एक किसान के नक्शों वाला चेहरा,
जिस पर से सुबहें गुजरीं, शामें गुजरीं
और जिसने तारों जड़ी रातों में घूमकर
फसलों और वीरानियों के मुंह पहचाने,
चिड़िया का चिहुंकना सुना, अनन्त तरंगें देखीं
और धरती के संग खुशी-गमी की बातें कीं ।
यह चेहरा समय का चेहरा था,
जिसे कविताओं ने अंकित किया, जो सपनों पर हंसा और रोया
विभिन्न लयों में जिसने बिरहा गाया ।
लम्बे, दुर्गम रास्ते तै किए,
शब्द घड़े, रंगों में डुबोये और दिल की [illegible] देकर [illegible]
शब्द जो पत्थर थे, मोती भी, और [illegible] हुए [illegible] भी ।
वह चेहरा था आम चेहरों जैसा—नक्शों वाला, बिन नक्शों वाला
[illegible] का चेहरा ।
मध्यकाल की धरती [illegible] चीरकर [illegible]
[illegible] हुआ एक [illegible]—वह मिट्टी का [illegible] ।

श्री मज़हर इमाम

मंजिल एक है

वोह गुरु नानक, हकायक का अमीनो राज़दां
वोह गुरु, वोह फख़रे आलम, नाज़िशे हिन्दुस्तां
जिसके नग़मों में लताफ़त, जिसकी लैं में नरमियां
जिसने ज़र्रों को ज़िया देकर बनाई कहकशां
साहबे फ़िक्रो नज़र था, मर्दे हक़ आगाह था
जिसने इन्सानों के दिल जीते, वोह शाहनशाह था
वोह गुरु नानक कि था पैग़म्बरे सुबहे बहार
जिसकी सांसों में महक उठते थे फूलों के शरार
जिसकी बातों ने सिखाया बेक़रारी को क़रार
था अमल से जिसके ज़िन्दा आदमीयत का वक़ार
जिसने मुरदा रूह में हिम्मत की गर्मी बख्श दी
जिसने हर पस्ती को इक तर्ज़े बलंदी बख्श दी
जल्वह्-ए हक़ से था जिसका सीना रौशन, वोह गुरु
चेहरा-ए इन्सानियत का था जो दर्पन, वोह गुरु
भर दिया उलफ़त से जिसने दिल का दामन, वोह गुरु
जिसने उठा दी दिमाग़ों पर से चिलमन, वोह गुरु
जिसने कुरबां कर दिया सब कुछ उसूलों के लिए
जिसने आखों से चुना कांटों को फूलों के लिए
कौन नानक? जिसको थी ताउम्र हक़ की जुस्तजू
जिसने फ़ल्बे दर्द को बख्शा सुरूरे आर्जू
भर दिया जिसने मए अख़लाक़ से दिल का सुबू
जिसने सबके पत्थ में दोहा दिया अपना लहू

जिसने दी पंजाब से उठकर सदा तौहीद की
दी बशारत जिसने ग़मखाने में सुबहे ईद की

रास्ते चाहे जुदा हों फिर भी मंज़िल एक है
मौजें जेरन सर पटकती हों प साहिल एक है
अन-गिनत जज़बात उठते हों मगर दिल एक है
शमएं चाहे जितनी रौशन हों पै महफ़िल एक है

काश रक्खें याद अहले हिंद नानक का पयाम
फिर कभी खाली न हो इन्सानियत के दिल का जाम

आदमीयत हो चुकी है आज ज़ख़्मों से निढाल
ज़िन्दगी अब जुर्म है, सर के लिए है इक वबाल
दर्द की जंज़ीर में जकड़े हुए हैं माहो साल
शैतनत की भीड़ है और आदमीयत का है काल

सर बरहना ज़िन्दगी 'खामोश' वीरानों में है
बादा-ए-रंगीं के बदले खून पैमानों में है

ऐ गुरु! ऊंचा करें इस वक़्त तेरे नाम को
सच्चे दिल से हम करें मिल-जुल के तेरे काम को
हर गली कूचे में पहुंचाएं तेरे पैग़ाम को
सुबह के भूले हुए घर लौट आएं शाम को

इस तरह दरमाने ग़म हाए नहां करते रहें
जादा-ए नानक पै हम खुद को रवां करते रहें

• •

श्री सत्यदेव नारायण अष्ठाना

शौर्य प्रवीर

आज तुम्हारी जीवन-गाथा
गूंज रही कण-कण मे वीर
'तेग' शौर्य की याद दिलाता
दमक रहा तव शौर्य प्रवीर।

सिक्ख जाति ही नही धन्य है
मानव-कुल है धन्य सनाथ।
कातरता है नही किसी मे,
है वीरता सभी के हाथ।

जन्मभूमि की शोभा बनकर
छाए अगजग मे तुम देव।
सरल सुधामय जीवन देकर
पुण्य बनवाए वीर स्वयमेव।

मानवता की पूत भावना
भर दी सब मे तुमने पूत।
देकर अमर साधना अपनी
बने जगत् मे साधन भूत।

कर्मठता की सीख सभी को
दी तुमने गोविन्द, पुनीत
तुमने जग मे आकर सचमुच
ली मनुष्यता को भी जीत

तुमसे पौरुष पाकर हम सब
भारतमाता-पुत्र बने हैं।

कृपा तुम्हारी रही कि जिससे
वन-उपवन ये बने घने हैं।
नहीं भीरुता पास तुम्हारे
आई किसी समय हे लाल।
तुम पर गर्वित है यह धरती
भारत धन्य सुकाल विशाल।
है बिहार की वीर भूमि के
वीर पुत्र तुम तेज निधान।
अडिग बने हर हृदय हमारा
किया अमर तुमने दे मान।
गुरु गोविन्द सिंह, सच तुमने
विश्व-ज्योति का देकर ज्ञान।
किया भरत लालों को अपने
वीर काव्य से सुभग महान्।
आज तुम्हारी याद कर रहे
'प्रगटों' भू-पर पुनः प्रवीर।
आज तुम्हारी जीवन गाथा
गंज रही जन-मन में वीर।